ॐ ह्रीं अर्हं नमः

श्री पूज्य मगलसैन गुरवे नम'

सम्यक्त्व-रत्न प्रकाश

अर्थात्

सम्यक्त्व-कौमदी

लेखक—

आचार्य घोर तपस्वी पूज्य १००८ श्री मनोहरदास जी म० की स० के प्रसिद्धाचार्य गुरुदेव १००८ पूज्य श्री रघुनाथ जी म० तच्छिष्य प० स्वामी श्री ज्ञानचन्द्र जी महाराज का शिष्य मुनि श्री खुशहालचन्द्रजी जैन

प्रकाशकः—

वनारसीदास जैन उरलाना कला वाला, बाबू अतरसैन लिसाढ वाला, शम्भूलाल, चेतनलाल भैंसवाल वाले।

[बाबूलाल जैन कडेला, पद्मसैन जैन तित्तरवाड़ा हाल शामली]
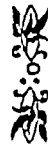
श्री महावीर स० २४७३ — स्व०पूज्यश्रीमङ्गलसैनजी महाराज

विक्रम स० २००४ — स्वर्ग०स० २८ सन् १९४७ ई०

मूल्य ३)

॥ आचार्य पूज्य श्रीरघुनाथ जी महाराज का भजन ॥

जिन्दगी दिन चार की, उपकार मे बिताये जा।
पूज्य जी के पैर में, मस्तक को झुकाये जा ॥ टेक ॥
धर्म ही का ध्यान कर, धर्म में बहु लीन हो।
कुकर्मों का नाश कर, धर्म में प्रवीन हो।

धर्म ही के काम मे, धन को लुटाये जा, मन को लगाय जा, पूज्य जी के पै० ॥१॥ दया धर्म का मूल भाई ऐसा मन में जानकर, बन सके जितना तेरे से, उतना जीव दान कर। दूसरों की आग को, हरदम ही बुझाय जा, पू० ॥२॥ दान शील और तप हैं जरूरी आपको, चोरी जारी झूठ निन्दा छोड़ दो सब पाप को। गुरु जी के द्वार पै, हाथ को फैलाय जा पैर को दबाये जा, पूज्य० ॥३॥ बीर जो कहलाते हो, बलहीन की रच्चा करों। पूज्य श्री रघुनाथ जी से धर्म की परिच्चा करों। वीरता के माल को खैरात में लगाय जा। दान को बढाय जा, पूज्य० ॥४॥

श्यामली में हैं विराजित, पूज्य श्री रघुनाथ जी।
श्रावकों पर है धरा, आपका शुभ हाथ जी।
इन्द्र इनकी महिमा तू रात दिन गाय जा, मन को हर्षाय जा।
कवि इन्द्रसैन जैन किरठल वाला हाल शामली।

सम्यक्त्व रत्न प्रकाश ग्रन्थ के विषय में

—किंचित वक्तव्य—

गा०—ना दंसणस्स नाणं, नाणेण विना हुंति चरण गुणा।
अगुणिस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि अमोक्खस्स निव्वाणं ॥

प्यारे बन्धुओ ? ससार भर में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं जो सुख को न चाहता हो। प्राणी सुख के लिये रात दिन प्रयत्न करने मे लगा रहता है किन्तु फिर भी सच्चे सुखों को नहीं पा सकता यदि देखा जाय सच्चा सुख प्राणी की आत्मा में ही भरा हुआ है अब यहा पर यह प्रश्न उपस्थित होता है सच्चा सुख क्या है ? वह सुख है सम्यक्त्व [सच्ची श्रद्धा] सच्ची श्रद्धा से ही प्राणी सम्पूर्ण सुख को पा सकता है सम्यक्त्व ही मोक्ष के सुखों का एक सच्चा मार्ग है भगवान श्री महावीर देव ने उत्राध्ययन सत्र के २८ वें अ० की ३० वीं गाथा में बतलाया है कि सच्ची श्रद्धा के बिना सच्चा ज्ञान नही होता और विना ज्ञान के चारित्र के सच्चे गुण भी प्रकट नहीं होते। जिसमे चारित्र के गुण नही उसका कभी कर्मों से छुटकारा भी नहीं होता। कर्मों से मुक्त हुये बिनासिद्ध पदकी भी प्राप्तीभी नहींहोती वीरप्रभू कहत हैं कि सम्पूर्णसुखों कामूल सम्यक्त्वहै सम्यक्त्वरत्न ससार भरके सब रतनो से श्रेष्ठ रत्न है, प्यारे बन्धुओं जिसके हृदय मे सम्यक्त्वरत्नका प्रकाश है उस को अन्य प्रकाश की आवश्यकता नहीं है।

प्रत्येक प्राणी के हृदय में सम्यक्त्व रत्न का प्रकाश हो इसी उद्देश्य को लेकर प० मुनि श्री विनय चन्द्रजी म० ने ढाल बन्ध सम्यक्त्वरत्न प्रकाश –अर्थात् सम्यक्त्व कौमुदी नाम का ग्रन्थ बनाया था उस ग्रन्थ का साधु साध्वी सघ में खूब जोरों से प्रचार रहा है गुरु गुरनी के मुखारविन्द से सम्यकत्व रत्न प्रकाश ग्रन्थ को श्रवण कर श्रावक

श्राविका वर्ग भी सम्यक्त्वरत्न से अपने शुद्ध हृदय में प्रकाश फैलते रहे किन्तु अब कुछ समय से श्रावक श्राविका वर्ग मे इस ग्रन्थ की भाषा मे बहुत माग हुई उस माग को पूरी करने के लिये आचार्य गुरु देव १००८ पूज्य श्री रघुनाथजी म० तथा प०गुरु जी स्वामी श्री ज्ञान चन्दजी म० ने इस तुच्छ सेवक को आज्ञा दी आचार्य श्री जी की आज्ञानुवर्तीनी सती श्री पद्मश्री जी हितश्रीजी फूलश्री जी आनन्दश्री जी ने भी यही कहा कि सम्यक्त्व रत्न प्रकाश ग्रन्थ भाषा में होना चाहिये जिसको पढकर प्रत्येक बाल वृद्ध सभी सम्यक्त्व रत्न से हृदय मन्दिर में प्रकाश फैला सके। मैं आचार्य पूज्य श्री रघुनाथजी म० की तथा अन्य सबकी आज्ञा को सिरोधार्य करके सम्यक्त्व रत्न प्रकाश ग्रन्थ को अपनी टूटी फूटी भाषा में लिखा है। मैं पूर्ण विश्वास के साथ कहता हूँ कि यह ग्रन्थ प्रेमी पाठकों को अवश्य रुचिकर होगा। प्यारे पाठको ! आप इस ग्रन्थ को एक बार तो कल्याण के लिये अवश्य पढे। आप स्वय इस ग्रन्थ को पढे और अपने प्यारे इष्ट मित्रों को पढने के लिये देवें जिससे वह भी आत्मीक लाभ उठा सकें। प्रमाद बस कहीं लिखने में भुल हो गई हो तो पाठक ! शुद्ध करके पढे और जो त्रुटी दृष्टी गत हो वह पत्र द्वारा सूचित करने की कृपा करें ताकि द्वितीय सस्करण में ठीक करवा देवें ।

गुरुदेव प० स्वामी श्री ज्ञानचन्द्रजी म० की अपार कृपा से ही मे इस ग्रन्थ को में भाषा रूप में लिख सका हू।

आचार्य श्री का तथा गुरुजी के चरणों का सेवक।

"जैन मुनि श्री खुशालचन्दजी"

ॐ ह्रीं अर्हं नमः

* श्री पूज्य मङ्गलसैन गुरवे नमः

सम्यक्त्व-रत्न प्रकाश

अर्थात्

सम्यक्त्व-कौमुदी

मङ्गला चरणम्

श्लोक-ॐकार विन्दु संयुक्तं, नित्यं ध्यायंतियोगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव, ॐकाराय नमो नमः ॥ ॥१॥

गाथा-ववगय जर मरण भय, सिद्धे अभिवंदिऊण तिविहेणं ।
वन्दामि जिण वरिन्दं, तेलोक गुरुं महावीरं ॥२॥

श्लोक-मोक्ष मार्गस्य नेतारं, भेतारं कर्म भू भृताम् ।
ज्ञातारं विश्व तत्वानां, वन्दे वीरं जगत् प्रभुं ॥२॥

सर्वारिष्ट प्रणाशाय, सर्वाभिष्टार्थ दायिने ।
सर्व लब्धा निधानाय, गौतम स्वामीने नमः ॥ ४ ॥

भव बीजांकुर जनना, रागाद्या क्षय मुपागता यस्य ।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वाहरोवा, जिनोवा नमस्तस्मै ॥५॥
सुबालानांच वृद्धाना, विदुषां परे तुष्टये ।
ज्ञाने कुशल चन्द्रो,हं, कुर्वे सम्यक्त्व रत्नप्रकाशकम् ॥६॥
पुस्तकेऽस्मिन् त्रुटिकाःचेत्, करुणा वरुणा लयैः ।
सर्वं मर्म न जानाति, इति सत्या क्षम्यते ॥७॥

❀ राजगृही में भगवान का पधारना ❀

प्यारे बन्धुओ ! इसही जम्बू द्वीप के भरत क्षेत्र में मगध नामक देश है, इस देश में ही देव पुरी के तुल्य 'राजगृही' नाम की बड़ी विशाल नगरी थी, यह नगरी रिद्धि सिद्धि समृद्धि से भरपूर थी और व्यापार के लिये भारतवर्ष में अति विख्यात थी । इस नगरी में एक से एक उच्च कोटी के धनाढ्य धरमात्मा एवं जैन धर्म के पालक श्रावक रहते थे । इस नगरी के स्वामी महाराजा 'श्रेणिक' (बिम्बसार) थे, वह अपनी प्यारी प्रजा को निज संतान से भी अधिक चाहते थे और प्रजा का हित चिन्ता में रात दिन तत्पर रहा करते थे । राजा की तरफ से प्रजा को किसी प्रकार का भय नहीं था । जो राजा दुराचारी कुव्य सनियों को दमन करने वाला हो और आप सदाचारी हो तो भला फिर उसकी प्रजा कैसे दुःख पासकती है । राजा

श्रेणिक की न्याय प्रियता और प्रजा हित की चरचा एक मगध देश मे ही नहीं किन्तु समस्त भारतवर्ष मे फैल रही थी, इसकी सेवा में छोटे बड़े सैंकड़ों राजा हाथ जोड़ कर खड़े रहते थे, यह राजा बड़ा ही धर्मात्मा एवं समदृष्टी श्रावक था, भगवान श्री "महावीर" का भक्त एवं पक्का जिन धर्मानुयायि था, इनकी पट्टरानी का नाम "चेलना" देवी था

चौपाई—चेलना देवी पाटवी नार, रूप अनुपम सच्ची अनुहार।

श्रमण उपाशिका शील विख्यात पति रंजन भंजन मिथ्यात ॥१॥

रानी चेलनादेवी विशाला नगरी के महाराजा 'चेडा' की पुत्री और भगवान श्री "महावीर" स्वामी की सच्ची उपासिका एवं जैनधर्मके मानने वाली श्राविका थी। इसकी कृपा से ही राजा श्रेणिक को सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ति हुई थी। महाराजा श्रेणिक के बड़े मंत्री का नाम "अभयकुंवार था यह मंत्री निरहंकारी, विनयी एवं धर्मनिष्ठ था, यह राजा का ज्येष्ठ पुत्र था।

प्यारे पाठको ! राजगृही के निकट ही एक विभार गिरि नाम का पहाड़ था, उसके चारो तरफ वन था, उस वन मे हर रितु में फल फूल देने वाले नाना प्रकार के वृक्ष थे। इधर वन पालक वन में इधर उधर घूम रहा था कि दूर से क्या देखता है कि परस्पर विरोधी जो जीव थे उन्हों ने

आपस में लड़ना छोड़ रखा है और बड़े प्रेम के साथ एक जगह खड़े हैं। हिरनी सिंहनी के बच्चे को अपना बालक समझकर और गौ माता भेड़िया के बच्चे को अपना बच्छड़ा समझकर बड़ा प्रेम कर रही है और बड़े आनन्द के साथ उसको चाट रही है, बिल्ली हंस के बच्चे से और नागनी गरुड़ से प्रेम कर रही है, यही ही नहीं किन्तु और भी परस्पर विरोधी जीवोंने अपना स्वाभाविक वैर छोड़ दिया है। वन पालक यह देखकर बड़ा आश्चर्य में पड़ गया और सोचने लगा कि क्या ? इन परस्पर विरोधी जीवों का इस तरह आपस में प्रेम से खड़ा होना शुभ है या अशुभ।

प्यारे पाठको ! वन पालक कुछ आगे चल कर क्या देखता है कि चोवीसवें तीर्थंकर भगवान श्री महावीर स्वामी जी अपनी शिष्य मंडली सहित समव सरण में विराजमान हैं। देवता व इंद्र आदि जय २ शब्दों द्वारा आकाश को गुंजा रहे हैं, वन पालक भी भगवान के समव सरण में गया और बन्दना नमस्कार कर कहने लगा हे देवाधि देव वीतराग प्रभु मेरे लिये आज का दिन बहुत ही अच्छा था जो मेरे को आपके शुभ दर्शन का लाभ हुआ।

प्यारे पाठको ! अब वन पालक ने विचार किया कि भगवान के यहाँ पधारने के शुभ समाचार महाराजा श्रेणिक

के कानों तक भी अवश्य पहुंचाने चाहियें। यह सोचकर वन में से सब रितुओं के फल फूल लेकर राजा के पास गया। नीति में लिखा है कि राजा के गुरु के और ज्योतिषी के पास खाली (रीते) हाथ न जावे। वन पालक उन फल फूलों को राजा के सामने रखकर बोला—हे राजेश्वर स्वदेश में आपकी जय हो परदेश में विजय प्राप्त हो, हे स्वामिन् जिन महा पुरुषों के दर्शनों की आपको हर समय उत्कंठा लगी रहती थी वही त्रिलोकीनाथ भगवान श्री महावीरदेव आज आपके पुण्योदय से ग्राम नगरों में धर्म की जय दुन्दुभी वजाते हुये अपनी शिष्य मँडली के साथ विभारगिरी के पास वाले वन में आकर विराजमान हैं। मैं पूर्ण आशा करता हूं कि आप इस शुभ समाचार को सुनकर अवश्य ही प्रसन्न होंगे। इस शुभ समाचार से आपका कल्याण हो (वन पालक महाराय को आय वधाई दीध। श्रेणिक जिन आगम सुणी, जाने अमृत पीध)

वन पालक के मुख से भगवान के आगमन के समाचार सुनकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसी समय गद्दी से नीचे उतर कर जिस दिशा में भगवान का समवसरण था उधर को मुख करके भावों द्वारा भगवान को वन्दना नमस्कार करी पश्चात् वन पालक को बड़े प्रेम के साथ अपने पास बैठाकर वधाई में खूब ही वस्त्राभूषण दिये जिससे उसका

सब दरिद्र दूर हो गया और प्रसन्न होता हुआ अपने स्थान को चला गया। राजा श्रेणिक स्नान मंजन कर नूतन वस्त्राभूषण पहन अधिकारी गणों को आज्ञा दी कि शीघ्र ही मेरे लिये सवारी सजाकर लाओ, आज्ञा होते ही सवारी सजाकर लाई गई, अब राजा महलों में रानी चेलनादेवी के पास पहुंचा और कहने लगा कि—हे देवता को प्यारी श्रमण भगवन्त श्री महावीरदेव विभार गिरि के पास वाले उद्यान में विराज रहे हैं उन भगवान ने अपने तपोबल के द्वारा केवल ज्ञान प्राप्त कर रखा है इसलिए उनके मात्र नाम और गोत्र के श्रवण से ही महापुन्य एवँ महाफल की प्राप्ति होती है तो उनके दर्शन करने तथा व्याख्यान श्रवण करने के फल का तो कहना ही क्या! इसलिए अपने को चाहिये कि भगवान के पवित्र दर्शन करें और उनके मुखारविन्द से निकली हुई वाणी को श्रवण करें। रानी चेलनादेवी राजा के ऐसे शुभ वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसी समय स्नान मंजनकर समवसरण योग्य वस्त्रा भूषण पहन दर्शनार्थ तैयार हो गई। अब राजा चेलनादेवी अभयकुवॉर की माता "नन्दादेवी,, और अन्य रानियों तथा मंत्री अभय कुंवार आदि को साथ ले भगवान के समव शरण में जाकर भगवान को तथा अन्य मुनिमहाराजों को वन्दना नमस्कार कर भगवान के सन्मुख बैठ गया। इधर सारी नगरी में

भगवान के पधारने के शुभ समाचार एकदम बिजली की तरह फैल गया अब नगरी के बड़े २ प्रतिष्ठित उच्चपदाधि-कारी सेठ साहूकार गरीब अमीर सब भगवान के दर्शनों को अपने २ घर से निकल पड़े और सब भगवान को नमस्कार कर सन्मुख बैठ गये, जिन्होंने पहले कभी भगवान के दर्शन नहीं किये थे वह भी भगवान की अद्भुत सुन्दरता तथा समवसरण की रचना को देखकर आश्चर्य में पड़ गये।

सवैया— माणिक जडित हेम' आसन पैराजे प्रभु' कोटी मनसिज लाजे' देखी छवी आज वी। दु दभी अशोक तरु, लहकत इन्द्रध्वज,भामंडल सोहत, प्रकाश पु जसाजकी। ठाडे सुर स्वामी चारु, चमर ढुलवे शीश ठाडे देव पास खास, शोभा सिरताज की। कहे अमिऋषि सबैं मुदित भयो है मन, ऐसी शुभ सुखमा, निहारी जिन राज की॥ १॥

पद प्रभाती— तीन छत्र सिर उपर सोभे, चमर ढुलें दोऊ कानी। रत्न-मई सिंहासण ऊपर, बैठे अन्तर जामी॥ प्र०॥ सिर पर वृक्ष अशोक विरोज, सहस्र धजा फरकाणी। आगे चक्र चले अरिंदरुण, मान स्तभ अगवाणी॥ प्र०॥ चोंसठ इन्द्र करें जारी सेवा चरण ग्रहें सिरनामी। जय २ शब्द दुन्दभी बाजे, मुक्ति रमण राकामी॥ प्र०॥ पुठे तो भामंडल सोभे, योजन गमणीरे वाणी। भव्य जीव सुणीने हर्षे, मिथ्याति मुरझाणी॥प्र०॥

नगरी की धर्मवती स्त्रियां भी भगवान के दर्शन को अपने २ घर से चलदी और मार्ग में बड़े सुमधुर स्वर से भगवान की स्तुति के सुन्दर भजन गाने लगीं।

भजन—बाई जी महारा प्रभुजी पधारया उतरया बाग मे ।
बन्दन ने चालो, दर्शन करस्या होसी भाग मे ॥टेक॥
दर्शन करलो प्रश्न पूछलो, वाणी सुनलो प्यारी ।
भान्ति भान्ति का मुनिवर देखलो, खिल रही केसर क्यारी ॥१॥
इन्द्र इन्द्राणी देवी देवता, मिल मिल मङ्गल गावें ।
निरख नैणा नाथने, हृदय हर्ष न समावें ॥ बा० २ ॥
तीन लोक मे मोहन गारा, प्यारा प्रभुजी लागे ।
मृग मरी रोग नहीं आवे, सौ सौ कोसां आगे जी ॥ बा० ३ ॥
हाथी घोडा रथ पालकी, कोई गज ऊपर चढिया ।
आभूषण सोभे अनेक भान्तिका, पडदा रतन जड़िया ॥४॥

स्त्री सघ भगवान के समव समरण में गई, भगवान को तथा मुनि बृन्द को नमस्कार कर भगवान की वाणी को सुनने के लिये सामने खडी हो गई ।

❀ भगवान श्री महावीर स्वामी का उपदेश ❀

चत्तारे परमंगाणि, दुल्लहाणीह जन्तुणो ।
माणुसत्तं सुई सद्धा संजमंमीय वीरियं ॥ १ ॥ +उ अ० ३ गाथा १

भावार्थ—हे प्यारे बन्धुओं इस आत्मा को चार वस्तुओं का मिलना अति ही कठिन है जैसे कि-मनुष्य जन्म, मनुष्य जन्म भी अनन्त पुन्योंदय से प्राप्त भी हो जावे किन्तु शास्त्र का श्रवण करना तो और भी कठिन है, सिद्धान्त सुननेका सौभाग्य भी प्राप्त हो जावे तो सुनकर उसपर श्रद्धा लानी

तो और भी महा कठिन है, यदि पूर्वले शुभ कर्मोदय से शास्त्र पर श्रद्धा भी आजाय तो धर्म करने में उद्यम करना तो महादुसाध्य है। प्यारे बन्धुओं तुमको तो सब वस्तुओं की प्राप्ती हो रही है फिर तुम धर्मोद्यम करने में आलश्य क्यों करते हो।

जा जा वच्चइ रयणी, न सा पड़ी नियत्तइ। धम्मँच कुण-माणस्स, सफला जन्ति राइओ ॥ २ ॥ जा जा वच्चईरयणी न सा पड़ी नियत्तई। अहमँ कुण माणस्स, अफला जन्ति राईओ ॥ ३ ॥ उ० अ० १४ गा० २४–२५ जो रात दिन व्यतीत हो रहे हैं वह पुनः वापिस नही आते जो धर्म करते हैं उनके ही रात दिन सफल होते हैं और जो अधर्मी हैं उनके वह रात दिन निष्फल हैं।

गाथा—जरा जाव न पीड़ेई, वाही जाव न वड्ढई। जाविन्दि-या न हायन्ति, ताव धम्मँ समायरे ॥४॥ द० अ० ८ गा० २६ भावार्थ—प्यारे बन्धुओ जब तक तुम्हारे से बुढ़ापा दूर है, शरीर से निरोग हो इन्द्रियों की ताकत पूरी हो, तब तक तुम धर्म करने में उद्यम रखो, धर्म सेही मुक्ति की प्राप्ती होती है, वह धर्म सम्यक् ज्ञान दर्शन चरित्र तप रुप है।
गाथा—नाणँच दँसणँचेव, चरित्तँ च तवोतहा। एय मग्ग मणुपत्ता, जीवा गच्छन्ति सुग्गई ॥५॥ उ० अ० २८ गा० ३

इस धर्मके आराधक ही मोक्षके अधिकार ही हो सकते हैं।

गाथा—धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा सँजमो तवो । देवावि तं नमँ सन्ति, जस्स धम्मेसयामणो ॥६॥ द० अ० १ गा० १

भा०—अहिंसा सँयम तपरुप ही धर्म सर्वोत्कृष्ठ धर्म है, इस मंगल मय धर्माराधक कोमनुष्य वासुदेव चक्रवर्ती तो क्या बड़े२ देव दानवइन्द्रा दिक भी मस्तक झुकाते हैं और उसके गुण गाते हैं, सँयम पालक वीतरागी साधुही सुखी है

गाथा—नहि सुही देवता देव लोए, नहि पुढवी पइराया। नहि सुही सेठ सेणावइये, एगन्त सुही साहु वीयरागी ।६।

भा०—स्वर्ग के देवताओं को देव लोक में वह सुख नहीं पृथ्वी पति (राजा महाराजों) को राज्य में सुख नहीं सेठ सेना पतिको सुख नही जितना कि निग्रन्थ वीत रागी साधु को सम्यग् ज्ञान दर्शन चरित्र में सुख है।

काव्य—सदेव गन्धव मणुस्स पूइये, चइत्तु देहँ मल पँक पूब्वयँ। सिद्धेवा हवइ सासए, देवेवा अप्परए महिड्ढिए ।८। उ० अ० १ गा० ४८

निर्ग्रन्थ—धर्मात्मा पुरुष देव दानव गन्धर्वों द्वारा पूजित होता हुआ पूर्व सँचित कर्म मलको धोकर अविचल मोक्ष-पद को प्राप्त करलेता है, यदि कर्म शेष रहजावे और पुन्य अधिक बढजावे तो वह उस पुन्यको भोगने के लिये देव-लोकमें जाकर महऋधिक देवता हो जाता है।

गाथा—दीहा उया इड्ढिमंता, समीद्धा काम रूविणो।
अहुणोव वन्ना संकासा, भुजोअच्चमालीप्पभा ॥९॥
उ० अ ५ गाथा २७

भावार्थ—वह देवता वहा स्वर्ग लोकमें वैक्रय लब्धी के धारक नाना प्रकार के सुख भोगते हैं। और ऐसे मालूम होते हैं कि जाने अब ही आके उत्पन्न हुए हो, उनके शरीर का प्रकाश सूर्य से भी कही अधिक होता है। वह देवता देवायु को भोगकर मनुष्य होता है।

गाथा—भोचा माणुस्सए भोए, अप्पडि रुवे अहा उयं पुब्वि विसुद्ध सद्धमे, केवलँ बोहि बुज्झिया ॥१०॥ उ अ ३गा१९

भावार्थ—मनुष्य के वह सर्वोत्कृष्ट सुखों को भोग कर केवली भाषित धर्म श्रवणकर जिन दीक्षा ले छकाया का रक्षक बन जाता है और फिर

गाथा—खवित्ता पुब्व कम्माइं, संजमेण तवेणय। सिद्धि मग्ग मणुपत्ता, तायिणो परि निबुड़े ॥११॥ द० अ० ३ गा० १५

भावार्थ—जपतप संयम से वह उन पूर्वले (पहले) कर्मोंको क्षय कर इसनासमान शरीर को छोड़कर मोक्ष में जा पहुंचता है। भगवान के मुखारबिन्द से निकली हुई अमृत मय वाणी को श्रवणकर राजा श्रेणिक कहने लगा हे भगवन्

आपके पवित्र चरण कमलों के दर्शन से आज मेरे दोनों नेत्र और पीयूष मय वाणी से मेरे दोनों कान पवित्र हो गये, यह संसार सागर मेरे को चुलु भर पानी के समान मालूम होता है।

❁राजा श्रेणिक का गुरु गौतम स्वामी सम्यक्त्व और मिथ्यात्व के विषय के प्रश्न पूछना ❁

प्यारे पाठको ! राजा श्रेणिक भगवान श्रीमहावीर देव को वन्दना नमस्कार कर गणधर गुरुदेव श्री गौतम स्वामी जी के पास गया और हाथ जोड़कर कहने लगा कि हे गुरु देव आप मेरे को सम्यक्त्व और मिथ्यात्व का स्वरूप सुनाओ। राजा के इस प्रश्न को सुनकर श्री गौतम स्वामी जी कहने लगे कि हे राजन् ! सम्यक्त्व का घर बहुत दूर है। (दोहा) सम्यक्त्व सम्यक्त्व सब कहें, मर्म न जाने कोय। जा घट सम्यक्त्व पाइये, वह घट विरला होय ॥१॥ सर सर कमल न निपजे, वन वन अगर न होय। घर घर सम्पत नही, सुखियान सब जन कोय ॥२॥ गिरवर गिरवर गज नहीं, पोल पोल प्रसाद। जन जनते पंडित नहीं, इम सम्यक्त्व का स्वाद ॥३॥ सकल पुरुष सुरा नहीं, चन्दन नही सब वन मांय। रत्न राशि जहां तहां नही, तिम सम्यक्त्व नही सब घट मांय ॥४॥ तीर्थंकर चक्रवर्त्यादिकों

पद्वी मोटी जान । सगलाजीव पावे नहीं, ज्यु सम्यक्त्व रत्न प्रधान ॥५॥ जा घट सम्यक्त्व ऊपजे, साधु श्रावक का पाले धर्म । शिव रमणी बेगा वरे, तोड़े आठों कर्म ॥६॥ सम्यक्त्व रत्न के बिना, कितना ही पाले आचार । स्वर्ग इक्कीस तक ऊपजे, गरज न सरे लगार ॥७॥ सम्यक्त्व रत्न के बिना, ज्ञान शुद्ध नही होय । सम्यक्त्व में जो दृढ रहे, मुक्ति विराजे सोय ॥८॥

संसार में एक रत्न नहीं किन्तु अनेक रत्न हैं*

सर्व रत्नों मे सम्यक्त्व ही प्रधान रत्न है, इस रत्न के आराधिक मोक्ष में जाते है अथवा विमानिक देवों में जाके

*पूर्वाचार्योंनेरत्नसारादि ग्रन्थों में बतलाया है कि माणिक् रत्न, जोकि लाल रङ्ग का होता है उसके धारण करने से सूर्य ग्रहकी शान्ति होती है। हीरा सफेद और गुलाबी रङ्गका होता है इससे शुक्र ग्रहकी शान्ति होती है पन्ना सब्ज और गुलाबी रङ्ग का होता है, इस से बुध ग्रह की शान्ति होती है। नीलम—यह नीले रङ्ग का होता है, इस से शनि ग्रह की शान्ति होती है। लसनिया—यह बिल्ली की आख जैसा होता है, इस से केतु ग्रह की शान्ति होती है। मोती—यह सफेद रङ्ग का होता है और कहीं कहीं पर काला तथा गुलाबी रङ्ग का भी मिलता है इस से चन्द्र ग्रह की शान्ति होती है मुङ्गा—इस का रङ्ग लाल होता है इस से मङ्गल ग्रह की शान्ति होती है पुखराज—यह पीले, सफेद और नीले रङ्ग के भी होती हैं, इस से देव गुरु (वृहस्पति) ग्रह की शान्ति होती है। गोमेदक—यह लाल धुए के समान होता है इस से राहु ग्रह की शान्ति होती।

उत्पन्न होते हैं यदि सम्यक्त्व रत्न होने से पहले किसी दुर्गति का बन्धन बन्धा होय तो।

गाथा--जह गिरिवराणु मेरुं, सुराणु इन्दो गहाण जह चन्दो। देवाणं जिण चन्दो, तह धम्माणं च सम्मत्तं ॥१॥

भावार्थ—जैसे पर्वतों में मेरु और देवताओं में इन्द्र, ग्रह नक्षत्रादि में चन्द्रमा, सब देवों में जिनेश्वर देव बड़े और श्रेष्ठ हैं वैसे ही सब धर्मों में सम्यक्त्व धर्म प्रधान है। इस सम्यक्त्व रत्न के विना मनुष्य का जीवन ही व्यर्थ है।

गाथा—लब्भई सुर सामित्तं, लब्भई पहुत्ताणं न संदेहो। इक्कं न वरिं न लब्भई, दुल्लह रयणं च सम्मत्तं ॥२॥

भावार्थ—इस जीवात्मा को देवताओं का स्वामी (इन्द्र) पना होना सहज है पृथ्वी का स्वामी चक्रवर्त्यादि का होना, भी कठिन नहीं है यानी इन्द्र नरेन्द्र चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव आदि की महा पद्वी को भी इस जीवात्मा प्राप्त कर सकता है किन्तु सम्यक्त्व रत्न प्राप्त होना तो महा कठिन है।

श्लोक—असम सुख निधानं धाम सँविग्न तायाः भव सुख विमुखत्वोद्दीपने सद्विवेकः। नर नरक

पशुत्वोच्छेद हेतुर्नराणां, शिव सुख तरु मूलं शुद्ध सम्यक्त्व लाभ; ।।३।।

शुद्ध सम्यक्त्वरत्न की प्राप्ति सुख का अनुपम निधान है सम्वेग का घर है, संसारिक दुखो से विरक्ति वढाने के लिये सच्चा विवेक है, मनुष्य तिर्यंच और नरक गति को नष्ट करने वाला तथा मोक्ष का मूल कारण है।

श्लोक—सम्यक्त्वमेकँ मनुजस्य यस्य हृदि स्थितँ रिवा प्रकम्पम्। शँकादि दोषाप हृत्तँ विशुद्धं, न तस्य तिर्यं नरके भयं स्यात् ।।४।।

जिनके हृदय में मेरु के समान अचल सम्तक्त्व रत्न शंकादि दोषा रहित है उसको नरक और तिर्यच गति का भय नहीं रहता।

श्लोक-सम्यक्त्व यस्य जीवस्य, हस्ते चिन्तामणि र्भवेत्। कल्पवृक्षो गृहे यस्य, काम गव्यनु गामिनी ।।५।।

जिस व्यक्ति के पास सम्यक्त्व रूपी रत्न है समझोकि उसके हाथ चिन्तामणि रत्न है, और घर में कल्प वृक्ष मौजूद है और काम धेनु गाय उसके पीछे-२ फिरती है।

श्लोक—पिधानँ दुर्गति द्वारे, निधानं सर्व सम्पदः।

विधानँ मोक्ष सौख्यानां, पुण्यैः सम्यक्त्व माप्नुयात्
श्लोक-सम्यक्त्व रत्नान्नपरँहि रत्नं, सम्यक्त्व मित्रान्न परं हि मित्रं। सम्यक्त्व बन्धोर्न परोहि बन्धुः सम्यक्त्व लाभान्न परोहि लाभः ॥७॥

दुर्गति के द्वार को रोकने वाली, सर्व सम्पत्ति का खजाना स्वर्ग और मोक्ष का देनेवाला एक सम्यक्त्वही है। सम्यक्त्वरत्न सब रत्नों में श्रेष्ठ रत्न है और इससे बढकर कोई मित्रभी नहीं है,यह अबन्धु का बन्धु है, इस से बढबढ कर और कोई लाभ नहीं है।

श्लोक-विनैकके शून्य गण वृथा यथा, विनार्क तेजो नयने वृथा यथा। विना सु वृष्टिं च कृषिर्वृथा यथा। विना सु दृष्टिं विपुलं तपस्तथा ॥८॥

एकादिके विना जैसे शून्य (बिन्दी) व्यर्थ हैं अथवा जैसे सूर्य के प्रकाश विना नेत्रोंका तेज या मेघके विना जैसी खेती खेत बेकार है वैसे ही विना सम्यक्त्व रत्न के जप तप संयम व्यर्थ है।

श्लोक-धनेन हीनोऽपि धनी मनुष्यो, यस्यास्ति सम्यक्त्व धनं प्रधानं। धनं भवेदेक भवे सुखाय, भवे भवेऽनन्त सुखी सुदृष्टिः ॥९॥

भा०-जिसके पास सम्यक्त्व रूपी धन है। वह अन्य धनादि न होने से भी धनवान है, यह दार्विक धनतो इस लोक मे ही सुखका देने वाला होता है, किन्तु सम्यक्त्व धनतो भव २ में सुखका देने वाला है। सम्यक्त्वी जीव देव तो अरिहन्त और गुरु निर्ग्रन्थ-धर्म केवल ज्ञानी भाषित को मानता है।

❀ देव गुरु धर्म का स्वरुप ❀

देव—श्लोक—सर्वज्ञो जितरागादे-दौषस्त्रैलोक्य पूजितः।
यथास्थितार्थ वादीच, देवोऽहन् परमेश्वरः ॥ १ ॥

भा०-अरिहन्त देव महा ईश्वर राग द्वेष से रहित त्रिलोक में पूज्यनीय सत्यवादी सर्वज्ञ प्रभु ही सच्चे देव हैं। उन अर्हन् देव को षट मत इस प्रकार मानते हैं।

श्लोक-यंशैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति बेदान्तिनो,
बोद्धा बुद्ध इति प्रमाण पटवः कर्तेति नैयायिका।
अर्हं नित्यथ जैन शासन रताः कर्मेति मीमाँसकाः,
सोऽयं वोविदधातु वाँछित फलं श्री वीतरागो जिनः ॥२॥

भा०-शिव के मानने वाले उसको "शिव" और वैदान्तिक उसको "ब्रह्म" बौद्धिक लोग "बौद्ध" नैयायिक "कर्ता" जैनी "अर्हन्" मीमासिक "कर्म" कहकर उनका ध्यान लगाते है, वही वीतराग अरिहन्त देव ही सब देवो मे श्रेष्ठ देव है

अलख निरंजन देव है, अथवा केवल धार।
जन्म मरण सु रहित है, साचा देव विचार ॥ ३ ॥
जग में गूगा शीतला, देव धरावे नाम।

समदृष्टी माने नही, मन राखे निज टाम ॥ ४ ॥

गुरु-श्लोक महाव्रत धरा धीराः, भैक्ष मात्रोप जीविनः ।
समायिकस्था धर्मोप-देशका गुरवोमताः ॥ १ ॥

भा० पच महाव्रत के धारक, निर्दोष भिक्षाके लेने वाले सत्य सुन्दर सामायिकस्थ, अहिन्सा मय धर्म के उपदेशकही सच्चे गुरु हैं ।

श्लोक—अज्ञान तिमिरान्धानां, ज्ञानांजन शलाकया ।
चक्षुरुन्मिलितँ येन, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥ २ ॥

भा० ज्ञानरूपी शलाई से जिन्होंने हृदय के नेत्र खोल दिये हैं वही गुरु वन्दनीय हैं अर्थात् नमस्कार करने के योग्य हैं ।

श्लोक—गुरु शब्दस्त्वन्ध कारस्य, रुशब्दस्तन्निरोधकः ।
अन्धकार निरोधत्वाद्, गुरु रित्य भिधोयते ॥ ३ ॥

भा० गुरु शब्द में दो अक्षर हैं "गु" और "रु" गु नाम अन्धकार का है और रु नाम प्रकाश (रोशनी) का है यानी हृदय के अन्धकार को नष्ट कर ज्ञान का प्रकाश करने वाले को गुरु कहते हैं । गुरु शुद्ध ज्ञान दर्शन चारित्र तप के धारक होते हैं ।

श्लोक—न ज्ञान तुल्य किल कल्प वृक्षो, न ज्ञान तुल्य किल काम धेनुः । न ज्ञान तुल्यः किल काम कुम्भो, ज्ञानेन चिन्तामणिरपि तुल्यः ॥ ४ ॥

भा० गुरु निर्मल ज्ञान के धारक होते हैं, गुरु के उस ज्ञान की कल्पवृक्ष कामधेनुगाय कामकुम्भ (कलश) चिन्तामणिरत्न भी होड नहीं कर सकते । दर्शन नाम शुद्ध श्रद्धा का है, गुरु शुद्ध श्रद्धा वाले होते हैं ।

श्लोक—नास्ति श्रद्धा समं पुण्यं, नास्ति श्रद्धा समंसुखम् ।

नास्ति श्रद्धा समं तीर्थं, संसारे प्राणिनां नृपः ॥ ५ ॥

ससार मेंदर्शन (सम्यक्त्व) के समान न कोई पूज्य है और न तीर्थ है

श्लोक—नरत्वं दुर्लभं लोके, विद्या तत्र सु दुर्लभाः
धर्मित्वँ दुर्लभँ तत्र, श्रद्धा तत्र सु दुर्लभाः ॥ ६ ॥

भा०– ससार में मनुष्य जन्म विद्या और धर्म का मिलना कठिन है किन्तु दर्शन(शुद्ध श्रद्धा) का प्राप्त होना महा कठिन है ।

चरित्र– जिससे पाप नष्ट हों, श्रावत । आश्रव रुके उसे चरित्र कहते हैं।

श्लोक--चरित्ररत्नान्न परंहिरत्नं, चारित्र वित्तान्न परंहि वित्तम् । चारित्र लाभान्न परोहि लाभ चारित्र योगान्न परोहि योगः ॥ ७ ॥

भा० चारित्र रत्न से चढ बढकर कोई रत्न नहीं है, न इससे बढकर कोई धम लाभ और योग्य ही है । तप–व्रत बेला आदि करना, भूख से कम खाना, शुद्ध भिक्षा लाना, लौच आदि करना, निरस भोजन जीमना इन्द्रियों को वस में करना लगे हुए दोष का प्राश्चित लेना, गुरु ज्ञानी जनों की विनय करना स्वधर्मों की घ्यावच करना, सिद्धान्त पढना पढे हुए की स्वाध्याय करते रहना, धर्म ध्यान शुल्क ध्यान मे रमण रहना, आत्मा (शरीर) का मोह छोडकर एकत्व भावना भाना ।

श्लोक-मलं स्वर्णगतँ बन्हि--हँसः क्षीरगतँ जलम् यथा पृथक्करोत्येवँ, जन्तोय कर्ममलं तपयः ॥८॥

जैसे सोने के मैल को अग्नि खोती है अथवा जैसे दूध में हस पानी अलग करता है वैसे ही तप से जीवातमा के पापमल दूर हो जाते हैं ।

ससार समुद्र मे पार उतारने वाला अथवायों कहिये कि में दुर्गति पड़ते

हुये जीव को उठाकर स्वर्ग और मोक्ष में पहुँचाने वाला है तो एक धर्म है, वह धर्म चार प्रकार का जोकि दान शील तप भावरूप है ।

श्लोक—दुर्गतिप्रपतत् जन्तु, धारणाद्धर्म उच्यते ।
दान शील तपो भावः, भेदात् सतु चतुर्विधः ॥ १ ॥
दीपो यथाल्पोपि तमांसि हन्ति, लवोऽपि रोगान् हरते सुधाया । तृणं दहत्याशु कणोऽपि चाग्ने धर्मस्य लेशोऽप्य मलस्तथाहँ ॥ २ ॥

भा० जैसे दीपक अन्धेरे को अमृत की बूंद रोग को, अग्नि का कण घास को समाप्त कर देता है, ठीक इस ही तरह धर्म भी पाप मल को नष्ट कर देता है ।

श्लोक—धर्माज्जन्म कुले शरीर पटुता सौभाग्य मायुर्बलम्,
धर्मेणैव भवन्ति निर्मल यशो विद्यार्थ सम्पत्तयः ।
कान्ताराच्च महा भयाच्च सततँ धर्मः परित्रायते, धर्मः सम्य-गुपासता भवतिहि स्वर्गा पवर्ग प्रदः ॥ ३ ॥

भा० धर्म से ही श्रेष्ठ कुल मे जन्म होता है, शरीर से सुन्दर पना और सौभाग्यता की प्राप्ती होती है, दीर्घायु बल विद्या निर्मल यश आदि उत्तमोत्तम सम्पत्ति मिलती है, धर्म ही वन या महा भय से बचाता है धर्म करने से स्वर्ग और मोक्ष मिलती है ।

सम्यक्त्व रत्न के धारक सद् ग्रहस्थको नित्य प्रति बतीस दोष टाल कर त्रिकाल शुद्ध सामायिककरनी चाहिये, एक महीना में कम से कम दो पोसे अवश्य करने चाहियें, एक व्रत से लेकर बारा व्रत करने, यदि सामायिक सम्वर व्रत

ऐसा कुछ भी न हो सके तो घर के सब काम धन्धों को छोड़ कर स्थानक में जाकर कम से कम एक माला जरूर फेरे, परवस पने में अथवा दुःख दर्द में या किसी खास कारण से या भूल से किसी दिन माला न फेरी जावे तो दूसरे दिन तेल की चीज खाने का त्याग कर दे, गाम में साधु साध्वी आये हुए हों तो उनके पास थानक में जाकर विधि युक्त वन्दना नमस्कार कर सुख साता पूछे, मांगलीक पाठ सुने। साधु साध्वी के योग्य वस्त्र पात्र आहार पानी आदि चौदह प्रकार का दान देवे। जिस दिन किसी खास कारन से गुरु गुरुणी के दर्शन न हो सके तो दुसरे दिन किसी हरी सब्जी फल फूल के खाने का त्याग कर दे। सम्यक्त्वरत्न के पॉच लक्षण हैं। जो कि निम्न प्रकार हैं—

श्लोक—सम सँवेग निर्वेदा—नु कम्पास्तिक्य लक्षणैः।
लक्षणैः पँचभिः सम्यक्, सम्यक्त्व मुपलक्ष्यते ॥ १ ॥

पहला "सम" है हर एक प्राणीमात्रपर समभाव रखना चाहे मित्र हो या शत्रु। दूसरा "सम्वेग", वैराग्य वान होना। तीसरा "निर्वेद—निर्वेग" संसारिक विषय वासना से पृथक रहना। चौथा "अनुकम्पा" दुखी जीव को देखकर उसपर अनुकम्पाके भाव लाना और दुःख से छुडाना। पाचवा "आस्ता" जिनेन्द्रदेव के वचनों पर श्रद्धा लाना जो केवल ज्ञानी वीतराग प्रभू ने अपने अनुभव ज्ञान द्वारा देखा है और सभा के समक्ष कथन किया उस पर विश्वास लावे। इन उपरोक्त लक्षणों सहित होतो समझना कि यह सम्यकत्व रत्न का धारक है, समदृष्टि जीव जरूर घर के

सब काम धन्धे करते हैं लेकिन उनकी आत्मा फिर भी संसार से पृथक ही रहती है, जैसे कमल की उत्पत्ती कीचड़ मे होती है और वह जल से वृद्धि को प्राप्त होता है फिर वही कमल जलके ऊपर आकर फिर जल और कीचड मे लिपाय मान नही होता ठीक इसही प्रकार समदृष्टि जीवभी संसारिक बन्धनो मे नही बन्धते "समदृष्टी जीवडा" करे कुटुम्ब प्रतिपाल। अन्दर घट न्यारा रहे, ज्यों धाय खिलावे बाल ॥ २ ॥

❀ समदृष्टी जीव का आहार विहार ❀

दोहा—समकित धारीजीव का, होवे शुद्ध आहार ।
भोजन अशुद्ध करे नही, तजे प्राण निरधार ॥ १ ॥
अन्नखावे ते सोधके, ढँकन होवे जन्त ।
दया हेतु रजनी विषय, भोजन नही भखन्त ॥ २ ॥
जल पीवे छाण के, करुणा . धरे मन मांय ।
जीवानी दिन रातनों, तिनही अगड़ ठवाय ॥ ३ ॥
विध्या अन्न लेवे नही अरु विध्या अन्न न संच ।
विध्या ईन्धन ना ग्रहे, जैनी नाम धरन्त ॥ ४ ॥
चुल्हा नगन राखे नही, रजनी नहीं तपाय ।
भोजन घर के ऊपरे' चादर देवे तणाय ॥ ५ ॥
पुद्गल जो रस चलत है, समदृष्टी नहीं खाय ।
लीलण फूलण भोजन विषय, ताके निकट न जाय ॥ ६ ॥
अभक्ष आहार भखे नहीं समदृष्टी जे नर होय ॥
रतटूटे रोटी विषय, फरफर से नहीं कोय ॥७ ॥

थरे पाउ को। सम्यक्त्व के विचार को सुनकर अब राजा श्रेणिक मिथ्यात से वचने के लिये तथा अन्य जनता को मिथ्यात्व-अन्धकार से बचाने के लिये गुरु देव श्री गौतम स्वामी जी से मिथ्यात्व का स्वरुप पूछा, गुरु देव कहने लगे कि हे राजेश्वर इस जीवात्मा को संसार रुलाने वाली है तो एक मिथ्यात है। मिथ्याती किसको मानता है-

चौपाई-कबहूं पूजे शीतला, कबहूं गुग्गा गुण गावे।
कबहूं सुमरे क्षेत्र पाल को, कबहूं रुद्र चरण चित लावे।१।
श्लोक-**नीच देव रतो जीवो, मूढः कु गुरुः सेवकः।**
कुज्ञान तपसा युक्तं, कु धर्मात् कु गतिं व्रजेत् ॥ २ ॥

भा०-मिथ्यात्वी जीव कु देव को सुदेव मानकर और कु गुरु को सु गुरु मानकर उनकीसेवाकरता है और कु ज्ञान द्वारा कु धर्म कुतपस्या करने खोटीगती को जाता है। मिथ्यात्व से बढकर कोई रोग नही और न मिथ्यात्व से बढकर कोई अन्धकार ही है, मिथ्यात्व से बढकर कोई शत्रु नही और न इससे बढकर कोई विषही है।

श्लोक- **पटोत्पत्ति मूलँ यथा तन्तुवृन्दं, घटोत्पत्तिमूलं तथा म्टत्समूहः। तृणोत्पत्ति मूलँयथा तस्य बीजं, तथा कर्म मूलँ च मिथ्यात्व मुक्तम् ॥ ३ ॥**

भा०-जैसे वस्त्र की उत्पत्ति तागों से घडे की मट्टी से धान्यकी बीज से होती है ठीक उसही प्रकार कर्मोकी उत्पत्ति का मूल कारण एक मिथ्यत्व है। सर्प विष शस्त्र अग्नि व्याघ्र शेर तो एक जन्म में ही देहधारियों को दुःख देते हैं और मिथ्यात्व तो एक नही अनेक कोटी जन्मों तक दुःख देता है जैसे घोर अन्धकार में कुछ नही दीखता ठीक उसही प्रकार मिथ्या

ती को भी सम्यकत्व रूपी रत्न नही दीखता ।

श्लोक—वरं सर्प मुखे वासो, वरं च विष भक्षणम् ।
अचलाग्नि जले पातो, मिथ्यात्वान्नच जीवितम् ॥ ४ ॥

सर्प के मुख में वास करना और जहर पीजाना अच्छा है तथा पहाड़ से पड़ मरना, अग्नि में भस्म होना श्रेष्ठ है हिंसक जीवों के साथ जंगल में रहना भी ठीक है किन्तु मिथ्यात्त्वयुक्त जीवन विताना अच्छा नही ।

श्लोक **—वरँ ज्वाला कुले क्षिप्तो, देहिनात्मा हुताशने ।**
नतु मिथ्यात्त्व संयुक्तम्, जीवितव्यम् कदाचनः ॥ ५ ॥

भा०—हवा में उडजाना वृक्ष से गिर कर मर जाना अग्नि मे जलना अच्छा है किन्तु मिथ्यात्व युक्त जीवन बीताना किसी तरह भी अच्छा नही, मिथ्यात्वी की सगति भी बुरी होती है सज्जन पुरुषों का कर्तव्य है कि वह मिथ्यातियों (पाखडियों) से बचें ।

दोहा—मिथ्याती की संगति किया, अशुद्ध बुद्धि मन होय ।
जन्म २ शंकट लहे, मुक्ति न पावे कोय ॥ ६ ॥

प्यारे पाठको ! राजा श्रेणिक ने गुरु देव के मुख से ,सम्यक्त्व रतन और मिथ्यात्व अन्धकार के विचार को सुनकर फिर हाथ जोड़ चरणो में मस्तक झुकाकर प्रार्थना करी कि हे गुरुदेव ! सम्यक्त्व रत्न को उज्वल करने वाली कोई धार्मिक सम्यक्त्व रस से भरी हुई कथा सुनाओ

पाटकों को अब तो ज्ञात हो गया होगा कि राजा श्रेणिक ने बार २ जा सम्यक्त्व रत्न के विषय के प्रश्न किये हैं और उनके उत्तर सुनकर

भी उसको उस (सम्यक्त्व विषय) की कथा सुनने की उत्कठा लग़ रही है, उसका मुख्य कारण यही था कि राजा स्वय सम्यक्त्व रत्न का धारक था जो जैसा व्यक्ति होता है उसको वैसी ही बात अच्छी लगा करती हैं जैसे पापी को पाप और धर्मी को धर्म। राजा श्रेणिकके प्रश्न को सुनकर गुरू देव श्री गोतम स्वामी जी ने सम्यक्त्व रस से भरी हुई सेठ अर्हदास और उसकी स्त्री मित्रश्री आदि की कथायें कहनी शुरु करदी गुरु देवकहने लगे हे राजेश्वर-

❀ मथुरा के पद्मोदय राजा की कथा ❀

इस जम्बूद्वीपके-भरत क्षेत्र में एक सोरठ नाम का देश था, उस देश मे मथुरा नाम की नगरी थी वह श्रेष्ठ राज लक्ष्मी युक्त थी जो कि सताइस वकारों से सोभाय मान हो रही थी, सताइस वकारों के नाम।

श्लोक –**वापि वप्र विहार वर्ण वनिता वाग्मि वनं वाटिका,**
वैद्य ब्राह्मण वादि वेश्म विबुधा वाचंयमा वल्लकी ।
विद्या वीर विवेक वित्त विनया वेश्या वणिक् वाहिनी ।
वस्त्रं वारण वाजि वेसर वरं राज्यतुवं शोभते ॥ १ ॥

भा०–बावड़ी, वप्र (किला) विहार, (मनोहर भवन) वर्ण, (चारों वर्ण-के लोग) वनिता [स्त्री] वाचाल–मनुष्य, वन, वाटिका, [पुष्पोद्यान] वैद्य ब्राह्मण, वादी वेश्म,]बहुत ऊ ची २ सुन्दर हवेलिया] विबुध' [प डित-विद्वान] वाचंयम, [साधु] वल्लकी, [वीणा] विद्या, वीर, [शुभट] विवेक [विचार वान] वित्त [धन विनय,]बड़े जनों की सेवा भक्ति करना] वेश्या वणिक, वाहिनी [सेना, वस्त्र, वारण] (हाथी) वाजी[घोड़ा] वेसर [खच्चर मथुरा नगरी में "पद्मोदय" नाम का का राजा था, वह राजा न्याय

और धर्म कार्य में अति निपुण था।

परोपकार करने में तो हर समय तत्पर रहता था, प्रजा पालन में चतुर, शत्रु रूपी वृक्ष को उखाड़ फेंकने मे हस्ती के समान था, राजा के गुण।

श्लोक –सत्यं सौर्यं दया त्यागो, नृपस्यैते महा गुणाः।
एभिर्मुक्तो महीपालः, प्राप्नोति खलु वाच्यताम् ॥ २ ॥

भा० — राजा में ये चार महागुण होने बहुत जरूरी हैं यदि यह गुण न हों तो वह राजा निश्चय निन्दा का पात्र होता। वे चार गुण यह हैं सत्य, शूर, वीरता, दया और त्याग।

श्लोक—यः कुलाभिजना चारै, अति शुद्ध प्रतापवान्।
धार्मिको नीति कुशलः, स स्वामी युज्यते भूवि ॥ ३ ॥

भा०–कुलाचार और लोक चार में निपुण हो तथा महा प्रतापी, धर्म शील और नीति में कुशल हो वही पृथ्वी पति अर्थात् वही राजा राज्य के योग्य होता है।

श्लोक–यस्य प्रसादे पद्मास्ते, विजयश्च प्राक्रमे।
मृत्युश्च वसति क्रोधः, सर्व तेजो मयो हि सः ॥ ४ ॥

भा०–जिसकी प्रसन्नता में लक्ष्मी, प्राक्रम में जय, और क्रोध में मृत्यु रहती है वही तेजस्वी राजा राज्य के योग्य होता है।

श्लोक—हर्ष क्रोधौ समौ यस्य, शास्त्रार्थे प्रत्ययस्तथा।
नित्यं भृत्यानु पेक्षाच, तस्य स्याद्धन दाधराः ॥ ५ ॥

भा० जिस राजा को हर्ष खुशी और क्रोध समान है, सिध्दान्त पर विश्वास है, सेवकों पर स्नेह रखता है, उस राजा को ही यह पृथ्वी धन धान्य देने वाली होती है।

श्लोक-तस्करेभ्यो नियुक्तेभ्यः, शत्रुभ्यो नृप वल्लभात् ।
नृपति निज लोभाच्च, प्रजा रक्षेत्पितेव हि ॥ ६ ॥

भा० राजा को चोरों से, सेवकों से, शत्रुओं से, मन्त्री से और अपने लोभ से प्रजा को बचावे प्रजा को लूटे नहीं, पिता की तुल्य प्रजा की रक्षा करता रहे।

श्लोक-कामःक्रोध स्तथा मोहो,लोभो मानो मदस्तथा ।
षड्वर्ग मुत्सृजेदेन-मस्मिंस्त्यक्ते सुखी नृपः ॥ ७ ॥

भा० जो राजा काम क्रोध मोह लोभमान और मद को छोड़ेगा वही सुखी होगा। पद्मोदर की सब से बड़ी राणी का नाम " यशोमती " था वह अति रूपवान एव पतिव्रतादि गुण युक्त थी ,उस ही रानी के अंग से उत्पन्न हुआ सर्व गुण व लक्षण युक्त "उदितोदय" नाम का पुत्र था। राजा के मंत्री का नाम "सभिन्नमती" था वह साम दाम दण्ड भेद आदि राज्य नीति में अति ही निपुण था ,उत्पातिया विणिया कामिया परि-णामिया आदि बुध्दि का निधान था। नगर वासियों का आधार भूत था हर समय राज्य और प्रजा की भलाई में लगा रहता था ।

❀ मंत्री की महिमा ❀

श्लोक—स्मृतिश्च परमार्थेषु, वितर्को ज्ञान निश्चयः ।
दृढता मंत्र गुप्तिश्च, मंत्रिणः परमो गुणः ॥ ८ ॥

भावार्थ-धर्म के तत्वों को स्मरण रखना (याद रखना) विवेकवान होना, बुद्धि की स्थिरता दृढता मन्त्र को गुप्त रखना ये मन्त्री के महा गुण हैं।

श्लोक-स्वदेशजं कुलाचारं, विशुद्ध मुपधा शुचिम् ।

और दयालु हो, देव गुरु का परम भक्त होवे ।

श्लोक—पितुमातुःशिशुनांच, गर्भिणी वृद्ध रोगीणाँ ।
प्रथमँ भोजनं दत्वा, स्वयं भोक्तव्य मुत्तमैः ॥ १६ ॥

भा० – माता पिता बालक गर्भिणी वृद्ध (बूढे) और रोगी को पहले भोजन खिला कर फिर आप भोजन जीमे।

श्लोक- चतुष्पदानां सर्वेषां, धृतानां च तथा नृणाम्
चिन्ता विधाय धर्मज्ञ, स्वयं भुजतिनान्यथा ॥१७॥

भा०—श्रावक का सर्व प्रथम कर्तव्य है कि अपने पास में रहने वाले समस्त मनुष्य और पशुओं को खाना दाना खिला पिला के फिर आप खावे पीवे। जिनदत्त सेठ की धर्म पत्नी का नाम 'जिनमती' था वह पतिव्रता थी और जैन धर्म में अतिशय प्रेम रखती थी ।

कार्य दासी रतौ वैश्या, भोजने जननी समा ।
विपत्तौ बुद्धि दात्रो च, सा भार्या सर्व दुर्लभाः ॥१८॥

भा०—पतिव्रता स्त्री दासी की तरह घर के सब काम धन्धे अपने हाथो से करे नौकर चाकरों पर न रहे, अपने पति को भोजन ऐसे प्रेम से जीमावे जैसे कि माता पास बैठकर पुत्र को जीमाया करती है, पति दुःख सकट मे पड़ गया होतो उसको ऐसी बुद्धि देवे जिस से वह दुःख सागर से पार हो जावे, पति की आज्ञानुकूल चलने वाली हो ।

श्लो—कार्येषु मन्त्री करणेषु दासी, भोज्येषु माता शयनेषु रंभा
धर्मानुकूला क्षमया धरित्री, भार्याचैषा गुणतीह दुर्लभाः

भा०— पतिव्रता स्त्री पति देव कों मन्त्री की तरह हित शिक्षा देवे बादी की तरह गृह कार्य में लगी रहे' माता के समान पास बैठ कर पति को भोजन

जीमाधे, शय्या में पद्मनी हसनी के समान सुख के देने वाली हो।

धर्मवती क्षमावती विनय वती हो।

श्लोक–पतिर्हि देवो नारीणां, पतिर्वन्धुः पतिर्गतिः।
पत्युर्गति समानास्ति, देवत्त्वंवा यथा पतिः ॥ २० ॥

भा०–पतिव्रता के लिये पतिही देव और पति ही वन्धु (प्यारा) पतिही गति है सती के लिये पति से बढ कर न कोइ देव है और न कोई गति है।

श्लोक—भर्ताहि परमं नार्या' भूषणं भूषणे र्विना।
एषा वि रहिता तेनः, शोभमाना न शोभते ॥ २२ ॥

भा०–स्त्री के लिये पति बिना भूषण का भूषण हैं, भूषण पहिने हुए हैं और सिर पर पति नहीं तो उसका वह भूषण व्यर्थ है।

श्लोक–अनुकुलां विमलांगी, कुलजां कुशलां सुशील सम्प-न्नाम्। एतादर्शी सु भार्या, पुरुषः पुण्योदयाल्लभते ॥२३॥

भाव०–आज्ञा मे चलने वाली, निर्मल गात वाली श्रेष्ट कुल मे उत्पन्न हुई हर समय प्रसन्न चित रहने वाली, ठडे स्वभाव वाली स्त्री बड़े भारी पुण्यो-दय से मिला करती है।

श्लोक—पंगु मंधंच कुब्जंच, कुष्टांगं व्याधि पीड़ितं।
आपत्सु च गतं नाथं, न त्यजेत्सा महा सती ॥२४॥

भाव०–पति पागुला कूबडा लूला अन्धा काना कुष्टी रोगी चाहे कैसा भी क्यों न हो और चाहे कितने दुःख सकट मे क्यों न पड़ा हो तो भी पति-व्रता महा सती अपने प्यारे पतिदेव का साथ नहीं छोड़ती।

श्लोक–परुषाण्यपि या प्रोक्ता, दृष्टा क्रोध चक्षुषा।
सु प्रसन्न मुखी भर्तुः, सा नारी धर्म भागिनी ॥ २५ ॥

नगरस्थो बनस्थो वा, पापोवा यदिवा शुचिः यासाँ स्त्रीणां प्रियो भर्ता, तासाँ लोका महोदयाः ॥ २६ ॥

भा०—कारन बस पति स्त्री को कठोर बचन भी कहे क्रोध की दृष्टी से भी देखे त। भी पतिव्रता स्त्री पति के सामने मुख प्रसन्न किये खड़ी रहती है। पति नगर में हो बन में हो कारन बस पाप बुद्धिवाला हो गया हो, पुन्यरूप हो चाहे कैसी भी अवस्था क्यों न हों जो पति की सेवा करेगी वही पुन्यात्मा स्त्री सती कहलायगी।

श्लोक—सतीनां पाद रजसां, सद्यः पूता बसुन्धरा ।
पति व्रता नमस्कृत्य, मुच्यते पातकान्नरः ॥ २७ ॥

भा०—जिनमती जैसी पतिव्रता सती के चरणों की धूल से यह पृथ्वी शीघ्र ही पवित्र हो जाती ऐसी पतिव्रता सती को नमस्कार करने से मनुष्य शीघ्र पाप से छुट जाता है। सेठ जिनदत्त और जिनमती का पुत्र "अर्हदास,' था वह भी पिता की तरह धर्म का रागी और जिनेन्द्र देव का परम भक्त एवं नव तत्व ज्ञाता था नव तत्त्व के नाम—

जीव अजीव पुन्य पाप है, आश्रव सम्बर जाण।
निरजरा बन्ध मोक्ष है, ये नव तत्त्व को ज्ञान ॥ २८ ॥
सम्यक्त्व में सेठा घणा, छोड़ा पाखंड मत ।
हाडी २ नी मींजिया, जिन धर्म में रत ॥ २६ ॥

प्यारे पाठकों बड़े भारी पुन्योदय से इस जीवात्मा को मनुष्य का शरीर मिलता है और भी पुन्योदय से किसी २ वस्तु की प्राप्ती होती है वह भी देखिये।

पत्नी प्रेमवती सुतः स विनयों भ्राता गूणालकृतः,

स्निग्धो बन्धुजनः सखाऽति चतुरो नित्यँ प्रसन्न प्रभूः निर्लोभोऽनुचरः स्वबन्धु सुमुनि प्रायोप योग्यं धनं, पुण्याना मुदयेन संततमिद् कस्यापि सं पद्यते ॥३०॥

भा०—स्त्री प्रेम करने वाली, पुत्र विनय भक्ती करने वाला, भाई प्रेमादि गुण से युक्त, बन्धुस्नेह वाले, चतुर मित्र, स्वामी प्रसन्न चित वाले' नोकर निरलोभी, धन साधु सन्तो की सेवा में लगे तथा कुटुम्बी जनों की सेवा में लगे, ये कार्य पूर्वले पुन्य के उदय से होते हैं बिना पुन्य के कुछ नहीं होता.

श्लोक—जैनो धर्मः प्रकट विभवः सँगति साधु लोके, विद्वद्गो-ष्ठि र्वचन पटुता कौशलं सत् क्रियासु। साध्वी लक्ष्मीः चरण कमलो पासनं सद् गुरुणां, शुद्धं शीलं सुमतिरमला प्राप्यते नाल्प पुण्यैः ॥ ३१ ॥

भा०—जैन धर्म, धन, साधुओंकी सगति, विद्वानों से वार्तालाप श्रेष्ठ धार्मिक क्रियाओं मे उत्साह, लक्ष्मी रूप स्त्री, सत गुरु की सेवा, शुद्ध शीलाचार का पालना, थोड़े पुण्य से प्राप्त नहीं होता, यह उपरोक्त वस्तुयें बड़े भारी पुण्योदय से प्राप्त होती हैं।

श्लोक—मनुष्यं वर वंस जन्म विभवो दीर्घायुरारोग्यता, सन्मित्रं सु सुता सती प्रियतमा भक्ति श्चतीर्थं करे! विद्वत्वं यिन्द्रि-जयः सत्पात्र दाने रति-स्तेपुण्येन विना त्रयोदश गुणाः सँसारिणाँ दुर्लभा ॥ ३२ ॥

भा०—मनुष्य भव. उत्तम कुल में जन्म धन, दीर्घायु, शरीर निरोग, सच्चा मित्र, आज्ञाकारी पुत्र, सती स्त्री, तीर्थंकर देव की भक्ति! विद्वानपना, अच्छे स्वभाव वाला होना, इंद्रियों का जीतना, सुपात्र को दान देने की रुचि होना, यह तेरह गुण बड़े पुण्योदय से प्राप्त होते है जिनदत सेठने अपने प्यारे पुत्र "अर्हदास" का आठ

ड़े सेठों की सुयोग्य कन्याओं से शुभ महुर्त में विवाह कर दिया, उन आठों स्त्रियों के क्रम से यह नाम थे मित्र श्री, चन्दन श्री, विष्णुश्री, नागश्री, पद्मलता, कनकलता, विद्युतलता, कुन्दलता, यह आठों स्त्रिया भी पतिव्रता थी और जैन धर्म मे इनकी भी अधिक रुचि थी। वह सासु जिनमती को माता के समान और सुसरे जिनदत्त को पिता के समान समझती थी, ज्येष्ठ देवर के साथ भाई जैसा वरताव किया करती थी, सासु की दी हुई हित शिक्षा को बड़े प्रेम के साथ सुना करती थी और हित शिक्षा पर ध्यान दे हर समय वह वही काम करती थी जिससे सासुजी का दिल हर समय प्रसन्न रहता था। बहु का कर्तव्य

सवैया—सासु को मात, पिता सुसरा, अरु देवर जेठ लखे ज भाई। सासु जो सीख करे सो सुने, और कोमल बैन वदे हर्षाई। हे! मम मात मैं वालक जात हूं, आप पवित्र सु सीख सुणाई। कृष्ण कहे कुलवान बहु, सत्य धर्म की रीति चले सुखदाई॥३३

प्यारे पाठक बृन्द कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी के दिन मथुरा के राजा "पद्मोदय,, ने शहर भरमें डुंडी पिटवादीकि कल कार्तिक सुदी पूर्णमासी का दिन है इस लिये राजाकी आज्ञा है कि कलको शहर की समस्त स्त्रिया वन क्रिड़ा के लिये वन में जावें और दिन रात वहीं वन में रहकर गीत त्य वाजित्रों द्वारा बड़े आमोद प्रमोद के साथ अपना समय बितावे, के मेले में कोई पुरुष नहीं जाने पावेगा, जो हमारी इस आज्ञा का करेगा वह राज द्रोही समझा जावेगा और पुरुषों को शहर में ही होगा। डूडी की आवाज को सुनकर नगर निवासियों ने राजा की के अनुकुल ही कार्य किया। पूर्ण मासी के दिन नगरकी सब स्त्रिया राजा की सब रानिया वन क्रीड़ा के लिये वन में गई। राजाने चारों

दिशाओं में शूर वीरों का पहरा बैठा दिया कि स्त्रियों के जल से में कोई किसी प्रकार का विघ्न न होने पावे। इधर शहर के लोगों ने सारा दिन बड़े आनन्द के साथ बिताया, और रात को सब अपने २ घरों में चले गये, राजा ने भी वह दिन तो आनन्द पूर्वक बिता दिया किन्तु रात्रि को जब चन्द्रोदय हुआ तो काम वासना ने राजा के चित को विकल बना दिया, तब राजा के रानिया याद आई पर महलों में रानी नहीं थी। राजा ने उसी समय नोकर के हाथ "सम्भिन्नमती" मन्त्री को बुलाया और कहा अमात्य राज जहापर मेरी रानिया क्रिड़ा कर रही हैं वहीं उस वन में मैं भी जाना चाहता हूँ। राजा की इस बात को सुनकर मन्त्री विचारने लगा कि

श्लोक—नृप· कामासक्तो गणयति न कार्यन च हितं, यथेष्टं स्वच्छन्द· प्रविचरतिमत्तो गज इव । ततो मान ध्मात· स पतति यदा शोक गहने, तदा भृत्ये दोषान् श क्षिपती न निजं वेत्य विनयम् ३४

भावार्थ—राजा लोग काम भोगों में धस कर हितकारी और सुन्दर कार्य वाली बात को नहीं सुनते और मद में हस्ती की तरह मद मस्त होकर अपनी इच्छानुसार जो चाहें कर लेते हैं और फिर जब [illegible] स सागर में पड़ जाते हैं तब सेवकों पर दोषारोपण करते हैं अपने किये हुए कुकर्मों को नहीं देखते फिर भी राजा को समझाना मेरा कर्तव्य है।

मन्त्री बोला—श्री महाराज इस समय आपका वन में जाना उचित नहीं है, यदि इस समय आप वन में चले जाओगे तो शहर वालों से आपका पूरा २ विरोध हो जाएगा और फिर प्रजा से विरोध होने पर आपके राज्य को नष्ट होते हुये कुछ भी देर नहीं लगेगी क्योंकि बहुतों को जीतना बड़ा कठिन है। देखिये बड़े भारी मद मस्त हाथी को छोटी छोटी कीड़िया भी मारने में समर्थ हो जाती हैं। मन्त्री की बात को सुनकर

क्रोध में भरा कर राजा बोला रे मन्त्री तू क्या कहता है ? जब मैं क्रोध करूंगा तब ये नीच लोग मेरा क्या कर्लेंगे, मेरे हाथ में सबकुछ है, मैं जो चाहे सो कर कर सकता हूँ। राजा की बात को सुनकर मन्त्री बोला-श्री महाराज आप कहते हैं कि ये नीच हमारा क्या करेंगे सो आपका यह कहना ठीक नहीं हैं, असमर्थ मनुष्य भी यदि बहुत से मिल जावें तो एक बड़ी भारी शक्ति बहुत ही जल्दी तैयार हो जाती है फिर वह जो चाहे सो कर सकते हैं। इस लिये आप अपनी इस हठ को छोढ दें, देखिये तृण कितनी शक्तिहीन वस्तु हैं पर वह जस बहुत से मिलकर इकट्ठे हो जावें यानी उनका रस्सा वाट लिया जावे तो वह टूटना कठिन हो जाता है फिर चाहे उस रस्सा से हाथी भी बाध लेवे तो वह टस से मस नही होता। राजा कहने लगा कि मत्री यह ठीक है परन्तु हैं तो यह निर्बल ही। एक सबल के सामने हजारों, लाखों क्रोड़ों बेकार हैं, जैसे एक चन्द्रमा के सामने सब तारे बेकार हैं ऐसे ही एक तेजस्वी के आगे अनेक निस्तेज भी बेकार हैं। राजा के बचन को सुनकर निडर होकर मत्री कहने लगा कि श्री महाराज मालूम होता हैं कि अब आपका विनाश का समय भी आन पहुँचा है जो आप को सद् शिक्षा भी उलटी ही दिखती हैं, आपकी बुद्धि भी फिर गई है, इसमें आपका भी कोई दोष नहीं हैं सब आपके भाग्य का दोष है।

दोहा-होनहार हृदय बसे, बिसर जाय सब बुध, जो होनी सो
हैं, वैसी उपजे बुध ॥ ३५ ॥

राजा रावण यह खूब अच्छी तरह जानता था कि सीता जी के कारण मृत्यु होगी फिर भी तो वह सीता जी को चुराकर ही ले गया, पाच आदि सब जानते थे कि जुवा खेलने से किसी की भी जय फिर भी वह जुवा खेल कर ही रहे जिसके परिणाम (नतीजे) संसार जानता है। हे राजेश्वर सुयोधन राजा को अपने बलका

बड़ा भारी घमण्ड था लेकिन बलहीन प्रजा ने उसको गद्दी से उतार दिया और धक्का देकर शहर से निकाल दिया आप खूब अपने हृदय में सोचें और समझें और अपने हठ को छोड़ें। मैं आपको सुयोधन राजा की कथा सुनाता हूँ

❀ विकलमती सुयोधन राजा की कथा ❀

श्रीमहाराज हथनापुर नाम के शहरमें "सुयोधन" नाम काएक प्रतापी राजा राज्य करता था उसकी पटरानी का नाम"कमलादेवी" था और "गुणपाल" पुत्र था। मन्त्री का नाम "पुरुषोत्तमदास" था उसकी स्त्री का नाम "लक्ष्मीदेवी" और पुत्र का नाम "देवपाल" था। राज्य प्रोहित का का नाम "कपिलदेव" प्रोहितानी का नाम "कपिलादेवी" और पुत्र का नाम "सुशर्मा" था। राजा के यहा माना हुआ नगर रक्षक (कोतवाल) "यमदण्ड" था उसकी घर वाली का नाम "वनवर्ती" पुत्र का नाम "सुमतप्रकाश" था। एक दिन राजा कचेहरी में बैठा हुआ था कि एक गुप्तचर ने आकर कहा—श्री महाराज शत्रुओंने आपके देश को उजाड़ना शुरु कर दिमा हैं और बडा उपद्रव मचा रक्खा है, देश में हा हा कार मच रहा है, इतनी सुनकर राजा बोला कि हे गुप्तचर मैं अभी चलता हूँ, और उस दुष्ट को देखता हूँ। वह पापात्मा जबतक ही उधम मचाले कि जब तक मैं उसके सामने न जाऊ, मृग तब तक ही स्वतन्त्र होकर घूम फिर सकते हैं कि जब तक कि सिंह नेत्र मु दे गुफा में पडा रहे अथवा मद मस्त हाथी तब तक ही गरजे है कि जब तक कि शेर उसके पास न आवे अर्थात् शेर आवेगा तब न तो मृग ही ठहरने पावेंगे और न हाथी ही। सब चारों दिशाओं में भागते ही दृष्टिगत होंगे, मिडक पड़ा हुआ तब तक टरं डुं टरं डुं की धुनी करताहै जब तक कि काला नाग उसको दिखाई न देवे, यह कहकर राजा हाथी, घोड़ा, रथ, पैदल की फौज लेकर मंत्री

क्रोध में भरा कर राजा बोला रे मन्त्री तू क्या कहता हैं ? जब में क्रोध करूंगा तब ये नीच लोग मेरा क्या करलेंगे, मेरे हाथ में सबकुछ है, मैं जो चाहे सो कर कर सकता हूँ। राजा की बात को सुनकर मन्त्री बोला– श्री महाराज आप कहते हैं कि ये नीच हमारा क्या करेंगे सो आपका यह कहना ठीक नहीं हैं, असमर्थ मनुष्य भी यदि बहुत से मिल जावें तो एक बड़ी भारी शक्ति बहुत ही जल्दी तैयार हो जाती है फिर वह जो चाहे सो कर सकते हैं। इस लिये आप अपनी इस हठ को छोढ दें, देखिये तृण कितनी शक्तिहीन वस्तु हैं पर वह जस बहुत से मिलकर इकठ्ठे हो जावें यानी उनका रस्सा बाट लिया जावे तो वह टूटना कठिन हो जाता है फिर चाहे उस रस्सा से हाथी भी बाध लेवे तो वह टस से मस नहीं होता। राजा कहने लगा कि मत्री यह ठीक है परन्तु हैं तो यह निर्बल ही। एक सबल के सामने हजारों, लाखों क्रोड़ों बेकार हैं, जैसे एक चन्द्रमा के सामने सब तारे बेकार हैं ऐसे ही एक तेजस्वी के आगे अनेक निस्तेज भी बेकार हैं। राजा के बचन को सुनकर निडर होकर मत्री कहने लगा कि श्री महाराज मालूम होता हैं कि अब आपका विनाश का समय भी आन पहुँचा है जो आप को सद् शिक्षा भी उलटी ही दिखती हैं, आपकी बुद्धि भी फिर गई है, इसमें आपका भी कोई दोष नहीं हैं सब आपके भाग्य का दोष है।

दोहा–होनहार हृदय बसे, बिसर जाय सब बुध, जो होनी सो होत हैं, वैसी उपजे बुध ॥ ३५ ॥

राजा रावण यह खूब अच्छी तरह जानता था कि सीता जी के कारण से मेरी मृत्यु होगी फिर भी तो वह सीता जी को चुराकर ही ले गया, पाच पाडव–युधिष्ठिर आदि सब जानते थे कि जुवा खेलने से किसी की भी जय नहीं होती फिर भी वह जुवा खेल कर ही रहे जिसके परिणाम (नतीजे) को समस्त संसार जानता है। हे राजेश्वर सुयोधन राजा को अपने बलका

बड़ा भारी घमण्ड था लेकिन बलहीन प्रजा ने उसको गद्दी से उतार दिया और धक्का देकर शहर से निकाल दिया और पुत्र अपने हृदय में सोचें और समझें और अपने हठ को छोड़ें। मैं आपको सुयोधन राजा की कथा सुनाता हूँ

❀ विकलमती सुयोधन राजा की कथा ❀

श्रीमहाराज हथनापुर नाम के शहर में "सुयोधन" नाम का एक प्रतापी राजा राज्य करता था उसकी पटरानी का नाम "कमलादेवी" था और "गुणपाल" पुत्र था। मंत्री का नाम "पुरुषोत्तमदास" था उसकी स्त्री का नाम "लक्ष्मीदेवी" और पुत्र का नाम "देवपाल" था। राज्य प्रोहित का का नाम "कपिलदेव" प्रोहितानी का नाम "कपिलादेवी" और पुत्र का नाम "सुशर्मा" था। राजा के यहां माना हुआ नगर रक्षक (कोतवाल) "यमदण्ड" था उसकी घर वाली का नाम "धनवती" पुत्र का नाम "सुमतप्रकाश" था। एक दिन राजा कचेहरी में बैठा हुआ था कि एक गुप्तचर ने आकर कहा—श्री महाराज शत्रुओंने आपके देश को उजाड़ना शुरु कर दिया है और बड़ा उपद्रव मचा रक्खा है, देश में हा हा कार मच रहा है, इतनी सुनकर राजा बोला कि हे गुप्तचर मैं अभी चलता हूँ, और उस दुष्ट को देखता हूँ। वह पापात्मा जबतक ही ऊधम मचाले कि जब तक मैं उसके सामने न जाऊ, मृग तब तक ही स्वतंत्र होकर घूम फिर सकते हैं कि जब तक कि सिंह नेत्र मुंदे गुफा में पड़ा रहे अथवा मद मस्त हाथी तब तक ही गरजे है कि जब तक कि शेर उसके पास न आवे अर्थात् शेर आवेगा तब न तो मृग ही ठहरने पावेंगे और न हाथी ही। सब चारों दिशाओं में भागते ही दृष्टिगत होंगे, मिडक पड़ा हुआ तब तक टर्रंडु टर्रंडु की धुनी करताहै जब तक कि काला नाग उसको दिखाई न देवे, यह कहकर राजा हाथी, घोड़ा, रथ, पैदल की फौज लेकर मंत्री

और प्रोहित को साथ ले कर युद्ध के लिये चलने लगा तब नगर वासियों के सामनेयमदण्ड" कोतवाल को बुलाकर कहने
लगा कि हम तो शत्रु को जीतने के लिये जा रहे हैं और तुम प्रजा की हर प्रकार से रक्षा करना, प्रजा की सेवा में किसी प्रकार की त्रुटि न आने देना, राज्य का भार हम तुम को सोंप कर जाते हैं, यमदण्ड कहने लगा श्री महाराज मैं आपकी आज्ञा का पूर्ण रूप से पालन करूंगा।

दोहा—कर जोड़ी यमदण्ड कहे, स्वामी तुम प्रताप
सेवकरस्युँ पुरजन तनी, चिरञ्जीव रहो आप ३६

अब राजा ने दिग्विजे के लिये प्रयाण किया और यमदण्ड प्रजा के पालन में अपना सारा जोर लगाने लगा, कचेहरी के समय सभा में आवे और दुष्टों को दण्ड देवे सज्जनो का दास बन कर रहे, यमदण्ड की न्याय नीति से सब प्रसन्न चित हो उठे, उधर राजपुत्र, मन्त्री पुत्र, प्रोहित पुत्र भी कोतवाल के दास बन बैठे और कहने लगे कि जब हम अपने पद पर आरुढ होवेंगे तब हम भी इसी प्रकार न्याय नीति से प्रजा की पालना करेंगे। यमदण्ड ने खजाने में धन नहीं छीजने दिया और न प्रजा को लूट कर ही अपना कोष भरा। इधर थोड़े ही दिन के बाद सुयोधन भी शत्रु को जीत कर उसका सब धन माल लूट छीन कर उसको क़ैदी बना अपने शहर को आया, राजा के आने की सूचना प्राप्त होने पर यमदण्ड समस्त प्रजागण को साथ लेकर सामने पेशवाई में गया, प्रजा राजा को भेंट देकर मिली।

दोहा – गद्दी बैठा रायजी, प्रजा मिली सब आय।
भेंट धरी सन्मुख खड़ी, चरने शीश नमाय ॥६६।
धन्य हो धन्य श्री महाराज जी, धन्य आप अवतार
सरस बधाई बट रही, मुख मुख जय कार ॥३७

राजा ने प्रसन्न होकर सब प्रजा से कुशलता के समाचार पूछे, प्रजा

ने उत्तर दिया कि श्रीमहाराज हम यमदण्ड की कृपा से सब प्रसन्न हैं।
कुछ देर के बाद राजा ने प्रजा को पान सुपारी दे बड़े सन्मान से [illegible]
फिर पूछा कि मेरे पीछे तुम सब प्रसन्न तो रहे, प्रजा ने फिर भी उत्तर
दिया कि यमदण्ड की कृपा से हम सब प्रसन्न रहे, प्रजा की बात को
सुनकर राजा बड़ा आश्चर्य में पड़ा और प्रजा को विदा कर [illegible]
शहर से आ अपने महल में चला आया और मन में विचारने लगा कि
यमदण्ड ने मेरे से मित्र द्रोह किया और प्रजा को लोभ लालच देकर
अपने वस में करली, इस लिये इस दुष्टात्मा को तो मार देना ही अच्छा
है, मैंने यह अच्छा नहीं किया कि इस दुष्ट को कुछ दिन के लिये राज्य
का भार सौंप दिया जो राजा लोग नौकरों के हाथ में राज्य का भार सौंप
देते हैं वह नौकर स्वच्छन्द होकर आनन्द भोगा करते हैं और प्रजा को
लूट खसोट कर अपना घर भर लेते हैं, नौकरों के हाथ में राज्य का
सौंपना ऐसा है जैसे कि दूध की रक्षा के लिये बिल्ली को बिठाना।

श्लोक—विष दग्धस्य भक्तस्य, दन्तस्य चलितस्य च।
आमात्यस्य च दुष्टस्य, मूलादुद्धरणे सुखम् ॥२९

भा०—जहर वाले भोजन को हिलते हुए दांतों को और दुष्ट मन्त्री
(नोकर—चाकरों) को जड से उखाड़ डालना ही अच्छा है, इस लिये मैं
भी इसको मार के छोड़ुंगा इसने मेरा बड़ा अपकार किया है। फिर राजा
ने सोचा कि इस दुष्टने तो सारी प्रजाको ही वस में कर रखी है ऐसे वैसे
तो इसका मारना भी सहज नहीं है, अब तो इस पर कुछ दोष लगाकर
ही मारना होगा, ऐसे वैसे मारूंगा तो प्रजा बिगड़ जायगी। अब राजा
यमदंड को मारने का उपाय ढूंढने लगा इधर यमदण्ड भी राजा के दुष्ट
विचारों को जान ही गया। यमदण्ड मन में सोचने लगा कि उस समय
मैंने राज्य का भार अपने ऊपर ले लिया ये अच्छा नहीं किया और प्रजा
को भी राजाके सामने मेरी प्रसंसा नहीं करनी थी, मेरी बड़ाई सुनकर राजा
जल उठा। अब न मालूम यह किस बुरी मौत से मेरे को मारेगा। राजा
लोग न किसी के हुए और न होंगे।

श्लोक–आराध्य मानो नृपतिः प्रयत्ना–न्नतोषमायाति किमत्र चित्रम् । अयंत्व पूर्व प्रतिमा विशेषो, यः सेव्य मानो रिपुता मुपैति ॥४०॥

भा०–राजा की कोई चाहे कितनी भी सेवा करके देख ले । वह कभी प्रसन्न ही नहीं होता, इस में आश्चर्य भी क्या है क्योंकि यहतो एक अनोखी ही देव मुर्ति है जो सेवा करने पर भी उलटी शत्रुता करती है ।

श्लोक—काके शौचं द्यूतकारे च सत्यं, सर्पे क्षान्तिः स्त्रीषु कामोप शान्तिः । क्लीबे धैर्यं मद्यपे तत्वे चिन्ता, राजा मित्रं केन दृष्टं श्रुतंवा ॥४१॥

भा० कौआ में पवित्रता, जुवे खेलने वालों में सचाई, सर्प में क्षमा, स्त्रियों में काम वासना की उपशान्ति, हीजड़े में धैर्यता, मद्यप (शराब पीने वालों) में तत्व (धार्मिक) विचार नहीं होता। ठीक इसही प्रकार राजा भी किसी के मित्र न देखे और न सुने गये हैं, इस लिए मेरे को चाहिये राजा से मैं अपनी रक्षा करू । इधर सुयोधन राजा ने यमदण्ड को फसाने के लिये अनेक उपाय किये किन्तु उसके सब यत्न निष्फल गये । राजा ने एक दिन समय देखकर एकान्त मे मत्री को और प्रोहितजी को बुलाया और अपने हृदय की बात कह सुनाई, उन पापियों ने भी राजा की हा में हा मिलादी, नीतिकारों ने क्या ही अच्छा कहा है कि–

श्लोक–वैद्यो गुरुश्च मंत्री च, यस्य राज्ञः प्रियः सदा । शरीर धर्मकोशेभ्यः, क्षिप्रं स परि हीयते ॥४२॥

भा० जिस राजा के वैद्य प्रोहित और मत्री सदा हा में हा मिलाने वाले हों वह राजा शरीर धर्म और खजाने से रहित हो जाता है ·नीति शास्त्र में लिखा है कि—

श्लोक–यादृशी जायते बुद्धि–र्व्यवसायोऽपि तादृशः ।

सहाया स्ता द शाएव, यादृशी भेव्यतव्यता ॥४३॥

भा० – जैसा होनहार होता है वैसी ही मनुष्य की बुद्धी हो जाती है और उपाय व सहायक भी उसको वैसे ही मिल जाते हैं।

अब राजा मंत्री और प्रोहित यमदंड को मारने का उपाय सोचने लगे कि इसको कैसे मारें, निदान इन तीनों ने यमदंड को मारने का उपाय ढूंढ ही निकाला, रात्रि के समय तीनों पापी खजाने पर गये और राज्यकोष खजाने को तोड़ कर माल निकाल चलते बने और महलों में जा गुप्त स्थान में धर अपने २ ठिकाने सिलगो पर जा कर सो गये। यमदण्ड के पुण्योदय से समझो या उनकी भूल (पापोदय) से समझो कि जहां उन पापियों ने पाड़ दई थी वहीं पर जल्दी के कारण राजा की खड़ाऊं मंत्री की अंगूठी और प्रोहित देवता की जनेऊ रह गई। । प्रात: काल होते ही राजा जाग उठा और एक दम खजाने में चोरी हो जाने का शोर मचाया और इसी समय कोतवाल को बुलाने के लिये अपना अनुचर (सिपाही) भेजा, नोकर को दूर से आता देख कर यमदंड जान गया कि अब मेरा काल निकट ही आ गया है अब मेरे मरने में कुछ भी देर नहीं क्योंकि राजा तो मेरे पर पहिले से ही द्वेष रखता था अब उसने मेरे को मारने का कोई न कोई उपाय अवश्य ढूंढ लिया है आज मेरे लिये जो न हो जाय वही थोड़ा है। राजा के सामने पंडितों की पंडताई चली जाती है, चतुर मूर्ख और शूरवीर डरपोक हो जाता है दीर्घायु वाले अल्पायु और कुलीनकुल हीन हो जाते हैं। यमदण्ड नोकर के साथ दरबार में गया और राजा के सामने हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया देखता क्या है कि राजा प्रोहित और मंत्रीकरड़ी नजर लगाये बैठे हैं राजा क्रोध में भर कर बोला– रे यमदंड ! तू मेरी प्रजा की तो क्या रक्षा करता होगा तेरे से मेरा खजाना ही नहीं रखा गया मालुम होता है कि तू चोरों से मिला हुआ है, तेरे विना मिले खजाने में चोरी कैसे हुई, आज मेरे खजाने में चोरी हो गई है, जो मेरा माल चुरा ले गया है उस माल को और चोर को शीघ्र ही लाकर हाजिर

नहीं तोदेखले इस चमकती हुई तलवार से तेरा मस्तक काट लिया जावेगा राजा की इस कठोर आज्ञा को सुन कर यमदण्ड भागा हुआ खजाने पर गया, खजाना टूटा हुआ पाया और खजाने के पास ही खड़ाउ अगूठी जनेऊ पडी हुई पाई, यमदण्ड ने तीनो चीजे अपने कब्जे में कर चल दिया रास्ते मे विचार किया कि यह तो तीनो ही चोर हैं (खड़ाउ से राजा, अगूठी से मत्री जनेऊ से प्रोहित को जानलिया) इन तीनों ने ही मिल कर चोरी की है इन तीन के सिवाय और किसी के खोज भी खजाने पर नहीं दीखते, बड़े खेद की बात है कि राजा स्वय चोरी करने लगगया है तब मैं कहाँ जाकर पुकारु जो मेरी प्रार्थना को सुने। राजा के कोष मे चोरी हो गई है और कोतवाल साहब को बुलवाया है इसबात के समाचार सारी नगरी में विजली की तरह फैल गये और नगरी के बड़े २ पच महा जन नबरदार मुखिया सब दरबार में आये और अपने २ आसन पर बैठ गये. राजा ने चोरी का सब हाल पचो को कह सुनाया साथ मे यह भी कह दिया कि यदि कोतवाल चोर को और माल को हाजिर न करेगा तो उसका सिर काट लिया जावेगा। थोड़ी देर के बाद कोतवाल कचहरी मे आया और राजा ने पूछा कि क्या चोर को और माल को लाया? यमदड बोला श्री महाराज! खजाने पर न तो चोर ही मिला और न आपका माल ही मिला। राजा यमदण्ड के कत्ल का हुक्म सुनाने वाला ही था कि पचो ने मिल कर प्रार्थना की कि श्री महाराज आप हमारे कहने से अपने प्यारे कोतवाल को सात दिन की मोहलत (छुट्टी) दे दीजिये सात के भीतर यदि यह चोर को और चोरी की हुई वस्तू को उपस्थित न कर सके तो फिर जो आपने विचार रखा है वही करना, नगरनिवासी महा जन पंचो के बहुत अनुनय विनय युक्त वचन सुन कर यमदड को सात दिन की छुट्टी दी। कचैहरी मे आकर यमदड ने राजपुत्र, मंत्रीपुत्र, प्रोहित पुत्र, और पचों को बुला कर कहा बतलाओ अब मै क्या करु सबने मिल कर एक स्वर से कहा– आप डरना मत हम सब आपके साथी हैं आप कोई फिकर न करना, आपकी रक्षा में पहले कभी इस नगरी में न

चोरी हुई न होने की आशा है यह चोरी तो मालुम होती है कि [illegible]
भेद से हुई हो। आप चोरको तलाश करें जो चोर ढूंढेगा हम उसको दण्ड
देंगे चाहे वह राजा भी क्यों न हो। यमदण्ड कहने लगा कि यह तो मैं भी
जानता हूँ कि आप लोगों को सत्य प्यारा है और सत्य के ही प्यासे सभी
हैं,किन्तु कभी ऐसा न हो कि मैं चोर भी हाजीर करदूं और तुम लोग
मारे डर के मेरा साथ छोड दो! तब सबने यही उत्तर दिया कि हम आप
का साथ नहीं छोड़ेंगे चाहे कुछ भी क्यों न हो जावे, प्रजा को अधिकार
होता है कि वह अन्याई राजा को राज्य से पृथक् करदें आगे भी जिन २
राजाओं ने अन्याय जुल्म किया उनको प्रजा ने राज्य से अलग कर गद्दी
छीन धक्के दे बाहिर निकाल दिया आप प्रजा की शक्ति कुछ कम न
समझिये ।

यमदण्ड धूर्तता पूर्वक चोरकी तलाशमें रहने लगा, प्रथम दिन यम-
दण्ड राज्य सभा में गया और राजाको नमस्कार कर सामने खड़ा हो गया

दोहा– नमस्कार नृप ने करी, उभा जोडी हाथ।
क्रूर नजर अरि कोप कर, तब बोला नर नाथ॥४४॥
रे यमदण्ड तैं चोर को, तलाश कर्यो के नाय।
प्रभू मैं कहीं देख्यो नहीं, सारे पुर के माय॥४५॥

राजा बोला तेरे को चोर मिला है या नहीं, कोतवाल बोला श्री महाराज !
मैंने चोर को खूब ढूंढा लेकिन मेरे को चोर कहीं भी नहीं मिला राजा
कहने लगा कि जब तेरे को चोर नहीं मिला तो बतला इतनी देर क्यों
लगाई राजा को समझाने के लिये यमदण्ड ने कपोल कल्पित कथाकहनी
शुरू की। राजा से कहने लगा अन्नदाता एक जगह एक कथकड़ कथाकहने
लग रहा था, मेरे को उसकी कथा बड़ी प्यारी लगी इसलिये मभी वहीं पर
कथा सुनने के लिये खड़ा हो गया कथा सुनने मे मेरे को देर लग गई।

राजा हस कर बोला अरे! मूर्ख तू अपनी मृत्यु को तोभूल गया और वह कथा सुनने के लिये खड़ा हो गया, मालूम होता है तेरे को मरने का डर नहीं है यदि मरने का डर होता तो कथा सुनने के लिये खड़ा न होताखैर कोई बात नहीं जो तू कथा सुन कर आया हैवह मेरे को भी सुना, यमदड बोला श्री महाराज सावधान हो कर (आलश्य-प्रमाद को छोडकर) इस कथा को सुनिये।

एक बन में तालाब के कौंठे एक बड़ी छायावाला ऊचा बड़ का वृक्ष था, उस बड़ पर बहुत से हंस रहा करते थे, उस वड़े के पास ही एक बेल का अकुर ऊग आया, उस अकूर को देख कर बृद्ध हस अपने बेटे पोतों से कहने लगा भाई अब बृद्धावस्था के कारण मेरी चूच तो कमजोर हो गई है और तुम तुम्हारी चूच ताक़तवर है इसलिये तुम ईस अकुर को उखाड़ कर फैंक दो नहीं तो इस अकूर के द्वारा तुम अपनी मृत्यू निकट आई ही समझना। बूढे हस की बात को सुन कर बेटे पोते आपस मे हसने लगे देखो! ये बूढा अब भी मरने से डरता है काल के गाल में जाने को तो तैयार हो रहा है फिर भी चाहता है कि मैं सदा अमर बना रहूँ, चाहे कोई मृत्यु से डर कर कहीं किसी गुफा में जाकर छुप जाये या कहीं भी जाकर छुप जाओ या कहीं भी चले जाओ मृत्यू वही आ कर ढूड लेगी ये भला मरने से क्यो डरता है। बेटे पोतों की बात सुन कर बूढा हंस मन में बिचारने लगा कि मूर्खों को उपदेश देना हित शिक्षा की बात कहना अपना अपमान करवाना है, सर्प को दूध पीला कर देखो वह जहर ही उगलेगा।

श्लोक—उपदेशो ही मूर्खाणां, प्रकोपाय न शान्तये।
पयः पान भुजङ्गानां, केवलं विष वर्धनम् ॥४६॥

सवैया—काणी को काजल आँधे को आरसी, खोजन को कहाँनार सुहाई। स्वान के आगे कपूर धर्यो, जैसे [illegible] कस्तूरी सुंघाई। गधे को कहां चन्दन लेपन, मूर्ख की कहा करत बड़ाई। मूर्ख आगे ज्ञान कह्यो, जैसे भैंस के आगे मृदङ्ग बजाई ॥३७॥

काणी को काजल, आंधे और नाकहीनको आरसी ([illegible]), हीजड़े को स्त्री, कुत्ते को कपूर, सूवर को कस्तूरी, गधे को चन्दन का लेपन और मूर्ख की बड़ाई, भैंस के आगे बाजा बजाना व्यर्थ है, [illegible] वैसे ही मूर्ख को शिक्षा देना भी व्यर्थ है।

श्लोक—शक्यो वारयितुं जलेन हुतभुक् छत्रेण सूर्यातपो, नागेन्द्रो निशिताङ्कुशेन समदो दंडगा गर्दभो। व्याधिर्भेषज संग्रहैश्च विविधै मंत्रि प्रयोगै विषम्। सर्वस्यौषधमस्ति शास्त्र विहितं मूर्खस्य नास्त्यौषधम् ॥४८॥

भा०—अग्नि को शान्त करने के लिये पानी, सूर्य की तेजी को रोकने के लिये छत्र (छत्री), हाथी को वस मे करने के लिये अकुश, दुष्ट पशु और गधे के मद को दूर करने के लिये दडा, व्याधि युक्त (रोगी के लिये) औषधी, सर्प आदि के विष के लिये मत्र यत्र तत्र दि हैं यानि सब की औषधी है किन्तु मूर्ख की कोई भी औषधी नहीं है। मैंने इन मूर्खों को हित की बात कही मगर इन्होंने उल्टी हसी उड़ाई समय आनेपर इनको अवश्य मूर्खता का फल मिलेगा॥ बूढा हंस उस वृक्ष को छोड कर दूसरे वृक्ष पर जा बैठा॥ अब वह अकुर बढता २ बेल के रूप मे परणित हो गया और वह बेल बड़ के वृक्ष पर चढ गई जहा हसो का निवास स्थान था [illegible] तक पहुँच गई। एक दिन शिकारी वहा उस ही बन में जा निकला जहां हंस रहते थे, उस ही बेल के सहारे वृक्ष पर चढ गया और सोते हुए [illegible]।

पर जाल बिछा कर नीचे आकर सो गया, जब हंस जाल में फस गये तो उन्होंने एक दम कोलाहल किया, उनके कोलाहल सुनकर बूढा हंस भागा हुआ आया और बोला रे मूर्खो! तुमने मेरा कहा नहीं माना आज उसबेल के अकूर के द्वारा तुम्हारी मौत आ पहुँची है। सबने मिलकर एक स्वर से वृद्ध हंस से प्रार्थना करी कि हे पिताजी! जो कुछ होंना था सो वह तो हो गया, अब आप हमारे बचानेका उपाय निकालिये, बालकों चेलकोंकी दया कर वृद्ध बोला पुत्रो तुम मरे हुए मृग की तरह स्वांस खींच कर पड़ जाओ प्रात काल होते ही शिकारी तुम्हारे पास आवेगा और तुमको मरा हुआ समझ कर ऊपर से जालउतार लेगा बस फिर तुम एक दम उड जाना बेटे पोतों ने बूढे बाबा का कहना मान लिया और वैसे ही दम खैंच कर पड़ गये सुबह के समय शिकारी आया और उनको मरा हुआ जानकर ऊपर से जाल उठा लिया उसका जाल समेट कर एक तरफ खड़ा होना था कि इतने में सब हंस आकाश को उड़ गये और दूर जाकर एकान्त म जाकर एक वृक्षपर बैठ गये बावा साहब भी वहीं अपने परिवार के पासजा पहुँचा। सब ने मिलकर बाबा देव का स्वागत किया और सब आपसमे कहने लगे आज बाबा की शिक्षा मानी तों अपनी सब कीजान बच गई। हरएक सज्जन महपुरुष का कर्त्तव्य हैं बुद्धिमान समझदार की सद् शिक्षा को माने।

इस कथा मों सुना कर यमदण्ड अपने घर गया और दूसरे दिन फिर कचैहरी मे आया राजा को नमस्कार कर सामने खड़ा हो गया। राजा कहने लगा कि क्या चोर मिला? तब कोतवाल बोला नहीं मिला। राजा बोला जबकि चोर तेरे को नहीं मिला तो फिर इतनी देर कहा लगाई? कोतवाल बोला श्री महाराज एक कुम्हार अपनी राम कहानी (आत्म कहानी) सुना रहा था मैं भी उसको सुनने लग गया इस लिये आने म देर हुई। राजा बोला तो वह कुम्हार वाली कथा मेरे को भी सुना? यमदण्ड बोला अपनी इसी नगरी मे एक पाल्हल नाम का कुम्हार था, वह बर्तन भाँडे बनाने मे बड़ा चतुर था, खदाने मे से मिट्टी लकर बर्तन बना बना कर शहर म बेचा करता था। बर्तनों के व्यापार

द्वारा उसके पास बहुत सा धन हो गया, उस धन से उसने हवेली वगैरह बना ली अपना विवाह करवा लिया और बालक बच्चे हो गये उनका विवाह कर दिया, साधु सन्त महात्माओं की सेवा में खूब धन लगाया। याचको (भिखारियों को) खूब दिल खोल कर दान दिया धन से क्या नहीं होता—

श्लोक—यस्यास्ति वित्तं स नरः, कुलीनः स पंडितः स श्रुत्वा न्गुणज्ञः। स एव वक्ता स च दर्शनीयः, सर्वे गुणाः कांचन माश्रयन्ति ॥४६॥

भा०—जिसके पास धन है लोग उसको ही कुलीन पंडित सुनने वाला गुण वाला दर्शनीय (माननीय) होता, धनमें सब गुण आकर बसजाते है।

श्लोक—माता निन्दति नाभि नन्दति पिता भ्राता न संभाषते, भृत्य कुप्यति नानु गच्छति सुत कान्ता च ना लिगते। अर्थ प्रार्थन शङ्कया न कुरुते संभाषणं वै सुहृत्, तस्माद् द्रव्य मुपार्जयस्व सुमते द्रव्यण सर्वे वशाः ॥५०॥

श्लोक—निर्द्रव्यं पुरुषं सदैव विकलं सर्वत्र मन्दादरं, तात भ्रातृ सुहृज्जनादि कुपितं दृष्ट्वा न संभाषितम्। भार्या रूप-वती कुरङ्ग नयना स्नेहेन नालिगते, तस्माद् द्रव्य मुपार्ज-याशु सुमते द्रव्येण सर्वे वशा ॥३१॥

भा०— धन हीन पुरुष का चित सदैव विकल रहता है कहीं भी जाओ वही अनादर पाता है, माता पिता भाई बन्धू सीधे मुह बात भी नहीं करते उलटे उसे ताना सुनाते हैं, मृग नयना स्त्री भी मीठे वचनों से नहीं बोलती उलटे झिडके देती है सेवक सेवा नहीं करता, मित्र दूरसे ही मुह फेर लेता है कि कहीं ये कुछ माग न बैठे-पास मे पैसा होतो सब आपसे आप खिचे चले आते हैं इस लिये कहा गया है कि सब धन के दास हैं

अर्थात् धनोपार्जन में लगे रहते हैं ।

श्लोक—अहोनु कष्टं सततं प्रवास, ततोऽति कष्टं परगहे वासः । कष्टाधिका नीच जनस्य सेवा, ततोऽपि कष्टा धन हीनता च ॥५२॥

भा–देखो सब से दुखदाई देशाटन है, उससे भी अधिक दुखदाई दूसरे के घर में जाकर बसना, उससे भी अधिक कष्ट प्रद नीच जन की सेवा है और सब से अधिक दुखदाई निर्धनता है ।

श्लोक—बुभुक्षितै र्व्याकरणं न भुज्यते, पिपासितै काव्य रसोन पीयते । न छंदसा कापि समुद्धृतं कुलं, हिरण्य मेवाश्रय निष्फलागुणाः ५३॥

भा०–भूख में व्याकरण नहीं खाई जाती, प्यास लगने पर काव्य का रस नहीं पिया जाता, छन्द से कोई कुल का उद्धार नहीं होता, एक बिना धन के सब गुण निष्फल हैं । दान पुन्य के द्वारा पाल्हण कुम्हार ने खूब यशोपार्जन किया । धन के कारण वह अपनी जाति में सब से बड़ा गिना जाने लगा, एक दिन वह अपनी गधी को लेकर मिट्टी खोदने के लिये खदाने पर मिट्टी खोदने लगा खान का टुकडा टूट कर उसकी कमर पर आ पड़ा जिससे उसकी कमर टूट गई और वह वहा दब गया, उसके रोने की आवाज सुन कर राहगिरों (मुसाफिरों) ने मिलकर उसको जीवित निकाल लिया और उसको उसके घर पहुँचा दिया,दवा दारू करने के बाद जब उसका स्वास्थ ठीक हो गया तब बाजारमें आकर उसने आज यह आत्म कहानी कह सुनाई और साथ मे यह भी कहा कि जिस खानके प्रतापसे मैंने धन पैदा किया था याचकों को मुंह मांगा मान दिया करता था उस खान से ही मैंने दुःख उठाया, जिसकी कृपा से मैं बढा था उसने ही मेरी कमर तोड़ दी, इसका मतलब यह है कि जिसका मैंने शरण लिया उससे ही मेरे को भय प्राप्त हुआ, जो जिसकी शरण मे रहे उसका कर्तव्य है कि शरणागत की रक्षा करे । यह कथा कह कर यमदण्ड अपने घर को

गया और तीसरे दिन फिर दरबार में आया, हाथ जोड़ कर सामने खड़ा हो गया राजा बोला अरे मूर्ख आज तो चोर को ढूंढ कर लाया होगा, वह बोला श्री महाराज चोर नहीं मिला राजा बोला जब चोर नहीं मिला तब इतनी देर कहा लगाई, कोतवाल बोला कि मैं रास्ते में एक कथा सुननेलग गया वहा देर हो गई। राजा बोला जो कथा तू सुन कर आया है वह मेरे को भी सुना दे। कोतवाल बोला सुनिये — पंचाल देशमें एक 'वरशक्ति' नाम का नगर था वहा का राजा बड़ा प्रजा वत्सल था उसका नाम'सुधर्म' था वह जीवों का रक्षक और ईश्वर भक्त आस्तिकवादी था, उसकी राणी का नाम जिनमती था वह पति व्रता दया दान धर्म में अति दृढ थी। थी। राजा के मन्त्री का नाम 'जयदेव' था उसकी स्त्री का नाम 'विजया' था ये दोनों पति पत्नि बड़े पापी थे उनकी धर्म कर्म मे कुछ भी श्रद्धा न थी। वह नास्तिक मत का मानने वाला था, उन नास्तिक मनियों का कहना था कि—

श्लोक —यावज्जीवं सुखं जीवे—दृणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मी भूतस्य देहस्य, पुनरा गमनं कुतः ॥५४॥

भा० —यह शरीर जल बल कर राख की ढेरी हो जायगा फिर कुछ आना है न कुछ जाना है, अपने आराम के लिये जब तक जीवे तब तक खूब ऋण (करजा ले कर) घी बूरा खावे और शरीर को पुष्ट बनावे।

श्लोक —पंच भूत्तात्मक वस्तु, प्रत्यक्षं च प्रमाणकम्।
नास्तिकानां मते न्यान्य—दात्माऽमुत्र शुभाशु भम्॥५५

भा० —यह पञ्च भौतिक आत्मा यहीं सुख दुःख भोग लेती हैं और आगे कुछ भी नहीं, शरीर के साथ जीव का भी नास हो जाता है।

श्लोक —न स्वर्गो वाऽपवर्गो, नैवात्मा पार लौकिकः।
नैवा वर्णाश्रमादीनाँ, क्रिया च फल दायिका ॥५६

भा० —न कोई स्वर्ग और मोक्ष और न कोई जीव है न वर्णाश्रम हैं न कोई परलोक में शुभाशुभ क्रिया का फल है।

श्लोक —अशक्तस्तु भवेत् साधु, ब्रह्मचारी च निर्धनः।
व्याधितो देव भक्तश्च, वृद्धा नारी पति व्रता ॥५६॥

भा० —शक्ति हीन ही साधु हुआ करते हैं और निर्धन ब्रह्मचर्य का पालन किया करते हैं रोगी ही भगवान की भक्ति किया करते हैं, वृद्धा स्त्री ही पति-व्रत धर्म का पालन करती हैं। एक दिन 'सुधर्मा' राज सभा मे बैठा हुआ था कि एक गुप्तचर ने आ कर सूचना दी कि श्रीमहाराज आपके शत्रु 'महा बल' ने आपकी सारी प्रजा को कष्ट में डाल रखी है आप शीघ्र ही उस दुष्ट से अपनी प्रजा को बचावें। इतनी सुनते ही राजा बोला कि मैं अभी चलता हूँ और उस दुष्ट को देखता हूं कि वह कैसा है, राजा का कर्तव्य है कि —

श्लोक —दुष्टस्य दंडः स्वजनस्य पूजा, न्यायेन कोषस्यहि वर्द्धनचं। अपक्षपातो निज राष्ट्र रक्षा, पँचेव धर्माः कथिता नृपाणाम् ॥५७॥

भा० —दुष्टों को दंड देना, सज्जनों की सेवा करना, न्याय से भंडा भरना, पक्षपात रहित होना अपनी प्रजा की रक्षा का हर समयध्यान रखना ये राजा के मुख्य धर्म हैं।

सुधर्मा राजा फौज को साथ ले महाबल पर चढाई कर दी और संग्राम हुआ अन्त में सुधर्म की जय हुई महाबल को बांध कैदी बना साथ में ले अपनी नगरी को आया और बाग मे डेरा डाल दिया, दूसरे दिन प्रजा के साथ राजा ने नगरी में प्रवेश दिया तो दरवाजा एकदम टूट के गिर पडा राजा ने यह अपशकुन हुआ समझा और वापिस ही बाग मे आकर ठहर गया और नया दरवाजा बनवाया तो वह भी प्रवेश के समय गिर पडा

राजा वापिस बाग मे चला गया, फिर दरवाजा बनवाया तीसरे प्रवेश करने के लिये आया तो तीसरे फिर दरवाजा गिर गया राजाने अपने दिल में बहुत दुःख माना और दरवाजा के विषय मे मन्त्री से कहा कि अब क्या करना चाहिये। वह पापी मा नास्तिक मति बोला -श्रीमहाराज यदि आप अपने हाथ से मनुष्य को मारकर उसके खून से इस दरवाजेको सींचन करो तो ये स्थिर रह सकता है, ऐसा अपने कुल के पुरातन पुरुषो से सुनता आ रहा हूँ। राजा बोला-रे मन्त्री यदि मनुष्य के मारने से ही यह दरवाजास्थिर रहता हो तो मुझे ऐसी नगरी की आवश्यकता नहीं, जहा में हूँ वही मेरी नगरी है, वह सोना किस काम का है जो कानों को तोडे।

अहिंसा—दया—विचार

श्लोक-अमेध मध्येकीटस्य, सुरेन्द्रस्य सुरालये।
समाना जीविता कांक्षा, समंमृत्यु भयं द्वयोः ॥५८॥

भा०-गदगी में पैदा हुआ कीडा और स्वर्ग में पैदा हुआ इन्द्र ये सब जीना चाहते हैं और मरने से सब डरते हैं, हर एक प्राणी जीवनओर सुख चाहता है, इसलिये प्रत्येक प्राणी को चाहिये कि जीवों की रक्षा करे (अहिंसा व्रत का पालन करे)

श्लोक-अहिंसा परमो धर्मस्तथाऽहिंसा परोदमः ।
अहिंसा परमंदान-तहिंसा परमं तपः ॥५९॥

श्लोक-अहिंसा परमो यज्ञः-स्तथाऽहिंसा परमं फलम् ।
अहिंसा परमं मित्रं-महिंसा परमं सुखम् ॥६०॥

भा०-अहिंसा ही परम धर्म है अहिंसा ही परम दम, परम दान, श्रेष्ठ तप, श्रेष्ठ यज्ञ उत्तम फल, हितइच्छुक, मित्र, महा सुख दातृ, मनोवाञ्छित फल के देने वालीहै तो एक अहिंसा ही है।

श्लोक—सर्व, यज्ञेषु यद्दानं, सर्व तीर्थेषु यत्फलम् ।
सर्व दान फलं वाऽपि, तन्न तुल्य महिंसया ॥६१॥

भा०—सर्व यज्ञों में जो दान दिया जाता है उसका फल तीर्थाटन से जो फल मिलता है दानों का जो फल प्राप्त होता है। वह एक जीव रक्षा के बराबर भी नह होता है।

श्लोक—लक्ष्मीः पाणि तले तस्य, स्वर्गस्तस्य गृहांगणे ।
कुरुते यो जनः सर्वः,जीव रक्षां सदाऽऽदरात् ॥६२॥

भा०—जो जीव रक्षक है समझो कि उसके हाथ में लक्ष्मी का वासा है, और समझो कि स्वर्ग उसके आगन (चौक) में ही है।

श्लोक—लावण्य रहितं रुपं, विद्यया वर्जितं वपुः ।
जलत्यक्तम् सरोभाति, तथा धर्मो दयां विना ॥६३॥

भा०—जैसे चतुराई रहित रूप, विद्यारहित शरर, जल बिनाशरोवर की शोभा नहीं ह ती ठीक इस ही प्रकार दया के बिना धर्म व्यर्थ है। जयदेव मत्री बोला—श्री महाराज पुन्य पाप का फल किसने देखा है यह पॉच तत्त्व का पुतला पाच तत्व में मिल जाता है,आमे न कुछ आना है और न जानाहै

गाथा—न मे दिट्ठे परे लोए, चक्खु दिट्ठा इमारई ।
को जाणइ परे लोए, अत्थिया नत्थि वा पुणो ॥६४॥

भा०—मैंने परलोक नहीं देखा जो नेत्रों से देख रहा हूँ बस यही है और कुछ नहीं है, इस बात को कौन जानता है कि परलोक है या नहीं,यह तो अपना मतव्य जाहिर कर ही रहा था कि इतने में मन्त्री के बहकाये हुये पच लोग भी राजा के पास आये और प्रार्थनाकरने लगे कि श्रीमहा-राज आप अपने हाथ से कुछ न करना, हम लोग ही सब कुछ करलेंगे, जिसका पुन्य पाप आपको कुछ भी नहीं लगेगा। राजा बोला भोले भाईयो भला यह कैसे हो सकता है प्रजा के पुन्य पाप का छटा अश (हिस्सा)

राजा को अवश्य भोगना पड़ता है।

यथैव पुन्यस्य सुकर्म भाजां, षडांश भागी नृपतिः सुवृत्तः।
तथैव पापस्य कुकर्म भाजां, षडांश भागी नृपतिः सुवृत ॥६५॥

भा०—जैसे सदाचारी राजा पुन्यात्मा जीवोंके पुन्य मे छटे अंश का भागी है ठीक उसही प्रकार पापियों के पाप मे भी छटे हिस्से का भागी होता है। प्रजाके पुन्य और पाप इन दोनों में राजा का हिस्सा है। राजा के कथन को सुन कर मन्त्री और पांच लोगों ने मिल कर फिर कहा—स्वामी नाथ हमारे पुन्य के हिस्सेदार तो आप रहिये और पाप के भागी हम ही बने रहेंगे, आप किसी प्रकार की चिन्ता न करें, हम धन देकर किसी का बालक खरीद लेंगे, जब माता पिता अपने पुत्र को बेचदे तब कहिये आपको पाप कैसे लगेगा, इत्यादि वचनों द्वारा राजा का मन धर्म से हटा दिया, नीच की संगति क्या नहीं करती।

श्लोक—असतां संग दोषेण, साधुवोयान्ति विक्रियाम्।
दुर्योधन प्रसँगेन, भीष्मो गो हरणेगतः ॥६६॥

भा०—नीचों की संगति से श्रेष्ठ जनों का मन भी विकार भाव को प्राप्त हो जाता है जैसे दुर्योधन की कृपा से गो सेवक भीष्म जी भी गो हरण के लिये तैयार हो चले गये थे राजा ने कहा भाइयो जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो। मंत्री ने सुवर्ण (सोने) का पुरुष बनवाया और उसको वस्त्राभूषण पहना कर गाडी में बैठा कर शहर मे फिरवाया और डुंडी पिटवाई और कहा जो अपना पुत्र बली के लिये (मारने के लिये) देवे, पिता तलवार से मस्तक काटे माता जहर पिलावे उस को यह सोने का पुरुष दिया जावेगा और साथ में एक क्रोड मोहरें भी दी जावेंगी।

सी"वरशक्ति" नगरी मे एक"वरदत्तनाम" का महा दरिद्री ब्राह्मण रहा।

करता था उसकी ब्राह्मणी का नाम "रुद्रदत्ता,, था उस के अग से उपन्न हुए सात पुत्र थे धन के अभाव से वे नोजीव आधे भूखे रहा करते थे,धन के लोभ में आकर डुडी की आवाज सुनकर "वरदत्त,, भागा हुआ अपनी घरवाली के पास आया और बोला अपने छोटे बेटे इन्द्रदत्त को बेचदेना चाहिये जिससे आपा साहूकार हो जायेंगे अब जो भूखे रहते हैं पास में पैसे होने से फिर भूखे न रहेंगे 'बुभुक्षित' किंन करोतिपाप, निरधन (भूखा) मनुष्य क्या पाप नही कर बैठता है।

श्लोक–राज्यं कुञ्जर चामरे च कुसमं छत्र ध्वज कॉचनम्
गीतम् नाद विनोद शास्त्र रचना संभोग रत्नावली
विद्या काव्य नटाद्य नाटक गुणा रत्नं तथा मन्दिरं,
एषा सर्व विडम्बना अगुणसखे! एकं हि चान्नं विना।।६७।।,

भा०–एक अन्न के बिना राज्य कीय हाथी चामर फूलमाला छत्र ध्वजासोन गीत नाद विनोद शास्त्र मोती आदि के हार, काव्य नाटकादि गुण तथा रत्न जड़ित वस्त्राभूषण महल आदि सब व्यर्थ है।

श्लोक–यासा रूप विनाशिनी स्मृतिहरी पंचेन्द्रिया कर्षिणी,
चक्षु. श्रोत्र ललाट दीन करणी वैराग्य सम्पादिनी।
बन्धुनां त्यजनी विदेश गमनी चारित्र ध्वंसनि,
सा मे तिष्ठति सर्व भूत दमनी प्राणापहारी क्षुधा ॥६८॥

भा०–जब भूख निकलने लग जाती है(भूख लगने पर खाने को न मिलने से) मनुष्य का रूपभी जाता रहता, स्मृति (याद दास्त) का ज्ञान भीनष्ट ह जाता है, पाचों इन्द्रियों की शक्ति भी क्षीण हो जाती है, नेत्र करण (कान) मस्तकादि तेज हीन हो जाते हैं, और दिल में यह आने लगता है कि कुए में डूब कर मर जाऊ या क्या करू, भाई बन्धु नारी पुत्रादि छुडाने वाली विदेश में भ्रमण कराने वाली, चारित्र को ध्वश (नष्ट) वाली प्राण रहित करने वाली एक क्षुधा (भुख) है।

है ही तो क्यों न मैं अब अपना चित्त प्रभु भक्ति मे गाऊ। यह विचार कर वह भगवान का ध्यान लगा हस मुख हो राजा के सामने जा उपस्थित हुआ [इन्द्रदन्त]को प्रसन्नचित एव हसते हुए को देखकर राजा कहने लगा भाई तू हसता क्यों है, क्या तेरे को मरने का डर नहीं लगता। इन्द्रदत्त बोला महाराज सुनिये—

श्लोक—तावद्भ येषु भेतव्य, यावद्भय मनागतम् ।
आगतँ तु भयँ दृष्ट्वा, प्रहर्तव्य मशंकया ॥७०॥

भा०—भय से तब तक ही डरना चाहिये जब तक कि भय पास न आया हो भय पास आने पर तो उसके सामने छाती ठोक कर खड़ा जानाही उचित है, दूसरे श्री महाराज मृत्यु तो आ कर ही रहेगी यह कहीं भी चले जाओ छोड़ेगी ही नहीं, फिर क्यों न मैं हर्ष पूर्वक यज्ञ वेदी पर चढ जाऊ ,यदि मैं रोने भी लगू तो मेरे रोने धोने की आवाज को सुन कर भला किस दयालु को दया आवेगी। जब बालक पिता से दुखित होता है तब वह माता की शरण मे चला जाता है, और जब माता से ताड़ित होता है तो पिता के पास जाता है, जब माता पिता ही बालक को मृत्यु के घाट पार उतारना चाहते हों तो बालक राजा की शरण ग्रहण करता है, यदि राजा घात करना चाहे तो नगर गाम के पचों की शरण लेवे भला जहा माता बालक को जहर पिलावे, पित तलवार से गरदन उतारे, राजा मन्त्री और पच लोग धन देकर खरीद लेवें फिर बतलाईये वह बालक किस की शरण लेवे जिस से उस का दुःख से छुटकारा होवे।

सवैया—तात जो दुःख देवे निज पुत्र को, तो सुत मात पै जाय पुकारे। मात जो नाहीं संभार करे सुत की, तब तात

है ही तो क्यों न मैं अब अपना चित्त प्रभु भक्ति मे गाऊ । यह विचार कर वह भगवान का ध्यान लगा हस मुख हो राजा के सामने जा उपस्थित हुआ [इन्द्रदन्त] को प्रसन्नचित एव हसते हुए को देखकर राजा कहने लगा भाई तू हसता क्यों है , क्या तेरे को मरने का डर नहीं लगता । इन्द्रदत्त बोला महाराज सुनिये—

श्लोक—तावद्भ येषु भेतव्य, यावद्भय मनागतम् ।
आगतँ तु भयँ दृष्ट्वा, प्रहर्तव्य मशंकया ॥७०॥

भा०—भय से तब तक ही डरना चाहिये जब तक कि भय पास न ही आया हो भय पास आने पर तो उसके सामने छाती ठोक कर खड़ा ही जानाही उचित है, दूसरे श्री महाराज मृत्यु तो आ कर ही रहेगी यह ..ा कहीं भी चले जाओ छोड़ेगीं ही नहीं, फिर क्यों न मैं हर्ष पूर्वक यबल वेदी पर चढ जाऊ ,यदि मैं रोने भी लगू तो मेरे रोने धोने की आवाज को सुन कर भला किस दयालु को दया आवेगी । जब बालक पिता से दुखित होना है तब वह माता की शरण मे चला जाता है, और जब माता से ताड़ित होता है तो पिता के पास जाता है, जब माता पिता ही बालक को मृत्यु के घाट पार उतारना चाहते हों तो बालक राजा की शरण ग्रहण करता है, यदि राजा घात करना चाहे तो नगर गाम के पचों की शरण लेवे भला जहा माता बालक को जहर पिलावे, पित तलवार से गरदन उतारे, राजा मन्त्री और पच लोग धन देकर खरीद लेवें फिर बतलाईये वह बालक किस की शरण लेवे जिस से उस का दु:ख से छुटकारा होवे ।

सवैया—तात जो दु:ख देवे निज पुत्र को, तो सुत मात पै जाय पुकारे । मात जो नाहीं संभार करे सुत की, तब तात

को आय संभारे । मात रु तात रुसे नर के जब, आय के नर पति शरण विचारे । भज्जु कहे गति कौन हुवे जब, भूपति अपने हाथ से मारे ॥७१॥

श्लोक—मातापिता अर्थ का लोभी, राजा लोभी प्रतो लीका देवता बली का लोभी 'कस्य शरणं गतं व्रजे ॥ ७२ ॥

भा० मेरे माता पिता तो धन के लोभी हो रहे हैं और श्री महाराज आप को अपने दरवाजे का लोभ लगा हुआ है, नगर रक्षक देवता मेरी वली लेने के लिये तत्पर हो रहा है ' कृपा कर बतलाइये कि अब मैं किसकी शरण में जाऊ, यहा मेरे को किसीका शरना दृष्टिगत नहीं हुआ इसलिये प्रसन्न वदन हो मैंने धर्म का शरण लिया है धर्म से ही आत्म कल्याण होता है।

श्लोक – धर्मो माता पिता चैव, धर्मो बन्धुः सुहृत्तथा ।
धर्म स्वर्गस्य सोपानं, धर्मात् मोक्ष माप्नुयात् ॥ ७३ ॥

भा०—धर्म ही माता पिता भाई बन्धु और मित्र है धर्म स्वर्ग की निशरनी (पैडी) है और धर्म मे मोक्ष की प्राप्ति होती है।

अन्नेन गात्र नयनेन वक्त्र, नयेन राज्य लवणेन भोज्य ।
धर्मेण हीनं वत,जीवतव्य, न राज्यते चन्द्र मसा निशीथ

भा० —जैसे अन्न के विना शरीर की नेत्र के बिना मुख की ' न्याय के बिना राज्य की, नमक के विना भोजन की,चन्द्रमा के विना रात्री की कोई शोभा नहीं होती ठीक उसही प्रकार धर्म के बिना मनुष्य की कोई शोभा नहीं अर्थात् धर्म के बिना मनुष्य जीवन ही व्यर्थ है।

श्लोक– चला लक्ष्मी श्चला प्राण- श्चले जीवित मंदिरे

है ही तो क्यों न मैं अब अपना चित्त प्रभु भक्ति में लगाऊ। यह विचार कर वह भगवान का ध्यान लगा हंस मुख हो राजा के सामने जा उपस्थित हुआ[इन्द्रदत्त]को प्रसन्नचित एवं हंसते हुए को देखकर राजा कहने लगा भाई तू हंसता क्यों है, क्या तेरे को मरने का डर नहीं लगता। इन्द्रदत्त बोला महाराज सुनिये—

श्लोक–तावद्भयेषु भेतव्यं, यावद्भय मनागतम्।
आगतं तु भयं दृष्ट्वा, प्रहर्तव्य मशंकया ॥७०॥

भा०–भय से तब तक ही डरना चाहिये जब तक कि भय पास न ही आया हो भय पास आने पर तो उसके सामने छाती ठोक कर खड़ा हो जानाही उचित है, दूसरे श्री महाराज मृत्यु तो आ कर ही रहेगी यह ना कहीं भी चले जाओ छोड़ेगी ही नहीं, फिर क्यों न मैं हर्ष पूर्वक यज्ञ वेदी पर चढ जाऊ ,यदि मैं रोने भी लगू तो मेरे रोने धोने की आवाज को सुन कर भला किस दयालु को दया आवेगी। जब बालक पिता से दुखित होता है तब वह माता की शरण में चला जाता है, और जब माता से ताड़ित होता है तो पिता के पास जाता है, जब माता पिता ही बालक को मृत्यु के घाट पार उतारना चाहते हों तो बालक राजा की शरण ग्रहण करता है, यदि राजा घात करना चाहे तो नगर गाम के पंचों की शरण लेवे भला जहा माता बालक को जहर पिलावे, पित तलवार से गरदन उतारे, राजा मन्त्री और पंच लोग धन देकर खरीद लेवें फिर बतलाईये वह बालक किस की शरण लेवे जिस से उस का दुःख से छुटकारा होवे।

सवैया–तात जो दुःख देवे निज पुत्र को, तो सुत मात पै जाय पुकारे। मात जो नाहीं संभार करे सुत की, तब तात

को आप संभारे । मात रु तात रुसे नर के जब, आय के नर पति शरण विचारे । भज्जु कहे गति कौन हुवे जब, भूपति अपने हाथ से मारे ॥७१॥

श्लोक—मातापिता अर्थ का लोभी, राजा लोभी प्रतोलीका देवता बली का लोभी 'कस्य शरणं गतं व्रजे ॥ ७२ ॥

भा० मेरे माता पिता तो धन के लोभी हो रहे हैं और श्री महाराज आप को अपने दरवाजे का लोभ लगा हुआ है, नगर रक्षक देवता मेरी बली लेने के लिये तत्पर हो रहा है ' कृपा कर बतलाइये कि अब मैं किसकी शरण मे जाऊ, यहां मेरे को किसीका शरना दृष्टिगत नहीं हुआ इसलिये प्रसन्न वदन हो मैंने धर्म का शरण लिया है धर्म से ही आत्म कल्याण होता है।

श्लोक – धर्मो माता पिता चैव , धर्मो बन्धुः सुहृत्तथा । धर्म स्वर्गस्य सोपानं , धर्मात् मोक्ष माप्नुयात् ॥ ७३ ॥

भा०—धर्म ही माता पिता भाई बन्धु और मित्र है धर्म स्वर्ग की निशरनी (पैड़ी) है और धर्म से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

अन्नेन गात्र नयनेन वक्त्र , नयेन राज्य लवणेन भोज्यं । धर्मेण हीनं वत,जीवतव्य , न राज्यते चन्द्र मसा निशीथ

भा० —जैसे अन्न के विना शरीर की नेत्र के विना मुख की ' न्याय के विना राज्य की, नमक के विना भोजन की,चन्द्रमा के विना रात्री की कोई शोभा नहीं होती ठीक उसही प्रकार धर्म के विना मनुष्य की कोई शोभा नहीं अर्थात् धर्म के विना मनुष्य जीवन ही व्यर्थ है।

श्लोक— चला लक्ष्मी श्चला प्राण- श्चले जीवित मंदिरे

चला चलं च संसारे, धर्म एको हि निश्चलः॥ ७५ ॥

भा०-इस नाशवान ससार में लक्ष्मी प्राण धन यौवन सब चलायमान हैं, एक धर्म ही निश्चल है। सुधर्म राजा 'इन्द्रदत्त' की धर्ममयी भावना को देखकर तथा इन्द्रदत्त को धर्म में दृढ देखकर मन्त्री और नगरी के पन्च लोगों को बुला कर बोला कि जहां जीव हिसा होती हो शरणागत की रक्षा का ध्यान न रक्खा जाता हो ऐसी नगरी की मेरे को आवश्यकता नहीं, जहा मैं हु वही मेरी नगरी समझना, मैं इस नगरी को छोडकर और नई नगरी बसाऊ गा। राजा के इस धैर्य और इन्द्रदत्त के साहस को देख कर क्षेत्रपाल देवता ने उसी समय वह दरवाजा बनाकर खडा कर दिया, पच दिव्य प्रकट किये इन्द्रदत्त के चरणों की पूजा करी राजा ने भी इन्द्रदत्त के चरण पूजे और बड़े मान महात्म के साथ उस को नगरी में ले गया और धनमाल दे इन्द्रदत्त को सुखी बना दिया और मन्त्री को बहुत कुछ भला बुरा कहा और कहा अरे मूर्ख जिसका पुन्य सहायक हो भला उसको कौन मार सकता है।

श्लोक-भीमं वनं भवति तस्य पुरं प्रधानं, सर्वोजनाः सुजनता मुपयाति तस्य। कृत्स्न भुर्भवति सन्निधि रत्न पूर्णा, यस्यास्ति पूर्व सुकृतं विपुलंनरस्य ॥७६॥

भा० जिसने पहले जन्म मे कुछ पुन्य किया है उसके लिये भयानक बन तो नगर के समान हो जाता है, दुर्जन सज्जन हो जाता है और पृथ्वी रतनों से भरी हुई मिलती है। इन्द्रदत्त की कथा सुनाकर यमदण्ड अपने स्थान को चलता बना किन्तु राजा इस कथा के आशयको भी न समझ सका। अब चौथे दिन यमदण्ड दरबार में आया और राजा ने पूछा अरे आज तो तू चोर को ढूंढ़ के लाया होगा-उत्तर दिया श्री महाराज

बच्चो सहित पकड़ी गई और दरबार में लाई गई तब नगरवासी उस हिरणी और उनके बच्चों की दयनीय दशा देख कर आपस में कहने लगे कि ये जगल में स्वतंत्र विचरने वाली इन के पजे में कैसे फस गई तब एक पठित विद्वान बोला जब कि बन में एक तर्फ तो आग लगा दी जावे दूसरी तर्फ जहर का पानी भरवा दिया जावे और तीसरी तर्फ जाल बिछवा कर चोथी तर्फ शिकारी धनुष बाण लेकर खडे हो जावें तो फिर तृण आहारी जगली जीवों की जीवने की क्या आशा की जा सकती है और उस में भी फिर राजा स्वय शिकारी बन कर अनाथ असहाय जीवो का भक्षक बन जावे तब बतलाईये रक्षा कौन करेगा अर्थात् उस को तो मृत्यु के मुख में जाना ही पड़ेगा। यह कथा कह कर कोतवाल अपने घर को गया अब पाचवे दिन यमदड कचहरी में आया और राजा को नमस्कार कर अपने स्थान बैठ गया राजा नेपूछा कि चोर मिला है या नहीं तब कोतवाल ने वही बनावटी उत्तर दिया कि श्री महाराज मैंने चोर को खूब तलाश किया किन्तु मेरे को नगरी में कहीं भी ढू ढा नहीं मिला राजा बोला तो इतनी देर कहा लगादी ? कोतवाल बोला --श्री महाराज मैं एक कथा सुनने लग गयाइस लिये देर हो गई राजा बोलाकि वह कथा मेरे को भी सुना ? तब कोतवाल बोला -- नेपाल देश में एक पाडलपुर नाम का नगर था वहा का राजा बसुपाल था उसकी रानी का नाम बसु-मती था। राजा को कविता करने का बड़ा शोक था और वह था भी कविता करने में बड़ा चतुर। बसुपाल राजा के मन्त्रीका नाम भारतीभूषण था,। उसकी स्त्री का नाम देविका था मन्त्री भी राजा की तरह कविता का भण्डार था, इस की कविता ससार भर में प्रसिद्ध थी। एक दिन राजा ने एक श्लोक बनाया और सभा सदों तथा मन्त्री से पूछा कि कहिये मेरे इस श्लोक में कोई त्रुटी तो नहीं रह गई है-सभा सदोंने एक स्वरसे कहा

[illegible] आप के श्लोक (कविता) में कोई त्रुटी नहीं मन्त्री की दृष्टी में जो [illegible] उस ने त्रुटी दिखाई दी वह राजा से कह सुनाई, राजा सभा सदों से [illegible] सुन प्रसन्न हुआ और त्रुटी बतलाने पर मन्त्री पर क्रुध हो [illegible] अथवा अनुचरों द्वारा गंगाजी की धार में फिकवा दिया, [illegible] धार मे न पड कर परले कांठे की वालु (रेत) में जा [illegible] चोट भी नहीं लगी पुन्यात्मा को दुष्ट चाहें कितना भी [illegible] और दुःख मे क्यों न डाले वह तो सदा सुख ही [illegible] है उसको किसी प्रकार का दुख नहीं भोगना पडता।

श्लोक—वने जले शत्रु जलाग्निमध्ये, महार्णवे पर्वतमस्तकेवा।
सुप्त प्रमत्त विषम स्थितं वा, रक्षन्ति पुण्यानि पुरा कृतानी

भा०—वन मे जल में शत्रुओं के बीज में अग्नि में समुद्र में पहाड़ की चोटी पर [illegible] सोता हो अथवा जागता हों चाहे कैसी भी विषमावस्था में [illegible] न हो पुन्य सर्व स्थानपर रक्षा करता है। मन्त्री मन मे विचारने लगा [illegible] राजा ने मेरे गुण न जाने और न अपनी भुल ही स्वीकार करी राजा [illegible] चाहिये तो यह था कि मेरे मे गुण लेता किन्तु गुण न लेकर मेरे को गंगा जी मे डलवा दिया नीतिकार ठीक कहते हैं कि—

श्लोक—इन्दु निन्दति तस्करो गृहपतिं जारो सुशील खलः,
साध्वी मध्यमती कुलीन म कुलो जह्यारज्जर तं युवा।
विद्यावन्त मनक्षरो धनपति नीचश्च रूपो ज्वलम्।
वैर पेशहन, प्रबुध मवुधो कुष्ट निकृष्टो जन।। ७८

भा०—चोर चन्द्रमा को ,जार (व्यभचारी) घर के स्वामी को, बुरे [illegible] अच्छे स्वभाव वाले को स्वभाव वाले को, व्यभिचारिणी [illegible] नीच कुलवाले अच्छे कुलवाले को, युवक वृध्द को निरक्षरमूर्ख,

भट्टाचार्य विद्वान (पण्डित] को निर्धन धनवान को कुरूप। रूपवान को, बुद्धिहीन बुद्धिमान को, दुष्टजन श्रेष्ठ को देख कर दुःख पाया ही करते हैं उनका स्वभाव ही दुःख पाने का होता है ।

श्लोक —मूर्खाणा पण्डितो द्वेष्या, अधनानां महा धनाः ।
दुर्भगानांच सुभगा, कुलटानां कुलांगना ॥ ७६ ॥
लुब्धाना याचकः शत्रु–र्मूर्खाणाँ बोधका रिपु ।
जार स्त्रीणां पतिः शत्रु–श्चोराणाँ चन्द्रमा रिपु ॥८०॥

भा०—मूर्खों का विद्वानों से, धन हीनों का धनवानों से, भाग्य हीनों का भाग्यशालियों से, व्यभिचारिणियों को भले घर की स्त्रियों से, लोभियों का याचकों से, मूर्खों का हित शिक्षा देनेवालोंसे, कुलटा स्त्रियों का पति से, और चोरों का चन्द्रमा से,द्वेष होता है । रसोइया—रसोइय्ये को, वैद्य—वैद्य को, ब्राहमण—ब्राह्मण को नट—नट को,राजा—राजा को, कवि—कवि को और कुत्ता—कुत्ते को' देख कर घुर घुराय करता हैअथवा यों कहियेकि गुणी को गुणी अच्छा नहीं लगता ।

सवैयः—वैद्य को देख वैद्य जले, शुद्ध साधु को देख जति दुःख पावे । चातुर को देख चातुर दहे, भल पंडित पंडित को न सुहावे। कवि देखत ही कवि दुःख धरे, नट नट देखत अकुलावे । भज्जुलाल कहे नर श्रेष्ठ सुनो, जैसे श्वान को देख श्वान घुरावे ॥ ८१ ॥

मन्त्री के दिल मे एसी अनेक तुकें उठ रही थी कि इतनेमें गगाजल को देख कर बोला—हे जल देव तुम मे शीतलता का महा गुण है और वैसे स्वभाव से भी तुम निर्मल हो पवित्रता के तुम खजाने हो, तुम्हारे

यमदड की इस कथा के आशय को भी राजा न समझ सका। कथा कह कर कोतवाल अपने घर गया छठे दिन छत्रपति सभा में आकर बैठ गया इधर यमदण्ड भी आया और राजा को नमस्कार कर बैठ गया। राजा बोला अरे मूर्ख शिरोमणी मेरे भण्डारे का चोर तो तू है और ढूण्ढता फिर रहा है सारी नगरी में। यदि और कोई चोर होता तो तू जल्दी ही ढूण्ढ के ले आता आज छः दिन हो गये अब तक तेरे को चोर नही मिला ? कोतवाल बोला श्री महाराज जो आपकी इच्छा हो सो कहलें मैं बड़ों के सामने बोलना उचित नह समझता दूसरे आप बली हैं आप के हाथ में सब कुछ है, मैं निरबल हूँ आप जो चाहे सो कर सकते हैं" बलिया करे सो होए जिस लाठी उस की भैंस,जिसका जोरा– उस का गोरा,, जबरदस्त (ठाडा) मारे और रोने न देवे,, श्री महाराज चोर बहुत तलास किया किन्तु चोर मेरे को नहीं मिला, राजा बोला तो फिर इतनी देर कहा लगाई ? बोला श्री महाराज बाजार में मे एक आदमी से कथा सुनने लग गया था इस लिये आने में विलम्ब हुआ। राजा बोला तो वह कथा मेरे को भी सुना यमदण्ड बोला सुनिये।

कुरु जगल देश में एक पाडलीपुर नाम का नगर था उस में एक बिना बुद्धि का (अक्कल हीन) राजा रहता था उस का नाम "सुभद्र" था और उसकी रानी का नाम सुभद्रा था, राजा ने अपने मनो विनोद के लिये एक लक्खी बाग लगवाया, उस बाग में नाना प्रकार के वृक्ष लगवाये, वृद्धि पाकर वह बाग नन्दन बन की शोभा को भी जीत गया, दूर २ शान्तरों में उस बाग की प्रससा फैल गई, नाना प्रकार के पक्षी मिल कर धहा किलोलें किया करते थे, एक समय उस बाग में बन्दर आ घुसे और ताडी का मद भी पी कर खूब ही धूम मचाने लगे कहा भी है कि—

श्लोक– मर्कटस्य सुरापानं, तत्र बृश्चक दंशनम् ।

तन्मध्ये भूत संचारो, यद्वा तद्वा भविष्यति ॥ ८२ ॥

भा०—एक तो बन्दर स्वभाव से ही चंचल (उजाड़ विगाड़) होता है फिर यदि वह पीले मद्य (शराब) तो कहना ही क्या है, इस पर भी यदि उस के बिछु डक मारदे और उस में बड़जावे भूत, बस फिर उस की लीला का क्या ठिकाना है, फिर तो वह जो कुछ लीला न करले वही थोडी है। बागवान ने बन्दरों को बहुत ही खेदना चाहा लेकिन वह उस के बस मे नहीं आये, अब बागवान हताश हो भागा हुआ राजा के पास गया और बानरों के उधम का सारा किस्सा कह सुनाया और प्रार्थना करी कि आप बाग की रक्षा के लिये सिपाही भेजिये, राजा बोला आदमी जा कर क्या करेंगे मेरे घर के और शहर के बन्दरों को भेजता हूँ तुम मेरे घर वाले और शहर वाले बन्दरों को ले जाओ बस वे ही सब प्रकार से रक्षा करलेंगे, अब राजा ने बाग की रखवाली के लिये बन्दर भेज दिये, बागवान ने विचारा कि भला कहीं बन्दर भी बाग की रक्षा कर सकते हैं, वहतो बाग को उजाडा हीकरते हैं।

दोहा—बाग उजाड़े बानरा, चुगल उजाड़े गाम।
कुबुद्धि उजाड़े देश को, जाय कपूतसे नाम ॥ ८६ ॥

मालूम होना हैं कि राजा बुद्धि हीन है' यदि राजा मे थोड़ा भी विवेक (अक़ल-बुद्धि) होता तो कभी भी बाग रक्षा के लिये बानर न भेजता जिस के विवेक रूपी नेत्र नहीं यदि वहअन्याय रूपी अन्धकार में चले कुमार्ग में प्रवृत्तिकरेतो उस में उसका अपराध भी क्या है, राजा के दो नेत्र होते हैं एक तो विवेक दूसरे ज्ञानी पुरुषों की सगति, हमारे राजा के इन दोनों नेत्रों मे से एक भी नेत्र नहीं है। जगल के और राजा के और गाम के बानरों ने उस राजा के लक्खी बाग को उजाड़ दिया जिससे

शहर के लोगबागों ने राजा का बडा उपहास किया जो बुद्धि रहित राजा होते हैं वह उपहास के पात्र हुआ ही करते हैं। इतनी बात कहके यमदण्ड अपने घर को चला गया। सातवें दिन फिर कचहरी मे आया – राजा बोला चोर मिला है या नहीं यमदण्ड बोला –अन्नदाता नही मिला ? राजा बोला तो तैने इतनी देर कहा लगाई ? यमदण्ड बोला अन्नदाता रास्ते मे एक माली कथा सुनारहा था मैं भी उस को सुनने के लिये वहां खडा हो गया इसलिये आने म देर हुई। राजा बोला तो जो कथा तू सुनकर आया है वह मेरे को भी सुना। यमदण्ड बोला – मालव देश उज्जयिनी नगरी मे एक सुभद्र नाम का व्यापारी रहा करता था उस के दो स्त्रिया थी एक दिन वह अपनी माता को अपनी स्त्रियों के सुपर्द कर आप अच्छा सा मुहूर्त देख व्यापार के लिये अपने मित्रों के साथ परदेश को चल दिया और शहर के बाहर जा कर ठहर गया। सुभद्र की माता बडी व्यभिचारिणी थी उसने समझा कि पुत्र तो परदेश चला गया अब मैं स्वतन्त्र हो गई हूँ यह विचार कर उसने अपने मित्र को बुला लिया और फुलवाडी म जा निरभय हो मित्र के सग म सो गई। किसी खास जरूरी कार्य के लिये सेठ आधी रात के समय घर पर आया और माता को आवाज दी कि दरवाजा खोलो ? पुत्र की आवाज को सुन कर बुढिया मित्र को कहीं छुपा कर दरवाजा खोल दिया और फिर आप भी एक कोने मे जा छुपी। जब सेठ अन्दर गया तो माता के पहरने के वस्त्र विरह के वृक्ष पर टगे (रक्खे) हुए देखे और उधर माता के मित्र को भी भागते हुये देख लिया, माता के इस विचित्र चरित्र को देख मन में विचारने लगा कि–देखो हमारी बुड्ढी माता सत्तर वर्ष की हो गई फिर भी वह व्यभिचार मे बाज नहीं आती. सच है कि यह पापी कामदेव तो मरे को भी मारता है धन्य है उन महापुरुषों को जिन्हों ने इस कामदेव को

जीत लिया।

श्लोक-प्राणी घातक वीरश्च, वहवः शन्ति भूतले।
कन्दर्प; घात को वीरः, क्वचित्तष्ठति वा न वा ॥८४॥

भा०-इस पृथवी पर प्राणियो के प्राण हरण करने वाले वहुत से शूर वीर हैं किन्तु इस दुष्ट कामदेव को जीतने वाले शूरवीर धर्मात्मा तो कहीं मिलें भी और नहींभी मिलें

श्लोक-व्याकोरण केसर कराल मुखा मृगेन्द्रा, नागाश्च भूरि मद राजि विराजमानाः। मेधा विनश्च-पुरुषाः समरेषु शूराः, स्त्री सन्निधौ परम का पुरुषा भवन्ति ॥८५॥

भा०-केशरा युक्त विकराल मुखवाले सिंह को और मद मस्त हाथी को जीतने वाले और युद्ध में एक नहीं हजारों लाखों कोडों मनुष्यों को जीतनेवाले वहुत हैं किन्तु वही शूर वीर स्त्रियों के (कामदेव के) सामने कायर हो जाते हैं।

श्लोक—उपवासोऽव मौदर्यं, रसानॉ त्यजनं तथा।
स्नान स्या सेवनं चैव, ताम्बुलस्य च वर्जनम् ॥ ८६ ॥
असे वेच्छा निरोधस्तु, ज्ञानस्य स्मरणं तथा।
एते हि निर्जरो पायाः, मदनस्य महा रिपोः ॥ ८७ ॥

भा०-इस कामदेव के जीतने के उपाय ज्ञानी पुरुषो ने यस वतलाये हैं यथा—उपवास करना भूख से कम खाना, षट रस छोड़ देना स्नान न करना, काम सेवन न करना, काम इच्छा को रोकना, काम भावों क स्मरण न करना ज्ञान में रमन करना विधवा स्त्री को चाहिये कि वह अपने विधवापन के धर्म को विचार के ब्रह्मचर्य महाव्रत का पालन करे

सवैया—अंजन मंजन लेपन ताम्बुल, वस्त्र छटा तिलकादि निवारे। माने अगारसिंगार सभी, तन शीलशिंगार सदा उर धारे। काम कथा न करे भली कौतुक, भोजन सरस निरन्तर टारे। दुर्जन संग तजे कृष्ण सती वधवा के ये धर्म विचारे ॥ ८८ ॥

श्लोक—धन्यास्ते वन्दनीयास्ते, तै स्त्रैकोक्यं पवित्रतम् । परेष भुवन क्लेशी काम मल्लो विनिर्जितः ॥ ८९ ॥

भा०—जिसने कामदेव को जीत लिया है वह त्रिलोकी मे पवित्र बन्दनीय और धन्यवाद का पात्र हैं। सुभद्र ने उसी समय अपनी स्त्रियौ को बुलाकर उपालम्भ दिया और कहा मैं तुम दोनों को माता की रक्षा के लिये छोड गया था तुमये कुछ भी रखवाली नही की जो कुछ ऐसा ही रहा तो घर चोपट हो जायगा माता का सब चरित्र सुना स्त्रियों को सावधान कर और परदेश को चलागया। यह कथा कह यमदण्ड भी अपने घर चला गया अब आठवें दिन यमदण्ड दरबार मे आया राजा लाल पीले नेत्र कर बोला—अरे मूर्ख शिरोमणी अब तो तेरे को चोर मिल गया होगा॥ यमदण्ड बोला – श्री महाराज न तो अबतक मेरेको चोर ही मिला है और न आप का माल ही। चोर न मिलना सुन कर राजाने उसी समय सिपाही के हाथ शहर के पंच महाजन लोगोको बुलाया महाजन आये तो इनसे कहा है कि

श्लोक—भ्रु भंग भंगुर मुखा विकराल रूपो, रक्त क्षणो दशन पीडित दन्तवासाः। त्रासंगतोति मनुजो जन निन्द्य पः। क्रोधेन कम्पित तनु र्भुवि राक्षसोत्रा ॥ ९० ॥

भा ०– राजा मारे क्रोध के विकरालराक्षस रूप हो रहा है और शरीर काम्प

रहा है आंख लाल हो रही हैं आखों की भ्रुयेंतणी हुई हैं दान्त पीस रहा है और होंठों को डस रहा है कहातक कहा जावे एकबार यदि कायर देख नां लेवे तो उसके प्राण निकल जावे पन्च महाजनों ने विचार किया कि अब राजा अपने आपे में नहीं हैं यह क्रोध के वस मे हो न्यायानीति को भूल बैठा है

श्लोक–उत्तमेतु क्षणं कोपो, मध्यमे घटिका द्वयम्
अधमे स्यादहो रात्रं, चॉडालेमरणान्तिकः ॥६१

भा०–उत्तम पुरुषों का क्रोध क्षणमात्र के लिये मध्यमों का दो घड़ी के लिये अधम का एक रात दिन के लिये और चाडाल (नीच) का क्रोध जीवन पर्यन्त रहता है दूसरेके प्राण लेने को हर समय उद्यत (तैयार रहता है। शहर के पन्च महाजन आदि प्रणामकरके खड़े हो गये राजा पंचों से बोला – देखो मैंने तुम्हारे कहने से इस पाजी यमदण्ड को सात दिन की छुटी दी थी अब मेरे को दोष न देना। यह मेरे को सात दिन से धोखाही धोखा दे रहा है न तो यह अब तक चोर को ही लाया है और न मेरे खजाने का माल ही हाजिर किया। अब मैं इस नंगी तलवार से इस पाजी के टुकड़ेसे दिशाओं की वली दूंगा, यदि ये अब भी चोर को और माल को हाजिर करदे तो मैं अब भी इस को छोड सकता हूँ। पंच व प्रजा जन कहने लगेकि यम दण्जी तुम राजाकी बातका उत्तर क्यों नही देते ? सोच समझ कर जल्दी ही राजा को उत्तर दो। पन्चों के कहने से निडर हो यमदण्ड बोला– भाई पंचो जब राजा मन्त्री प्रोहित स्वयं ही चोर हों और खजाने में जाकर चोरी करें तो बतलाओ मैं शहर में चोर को कहा से ढूंड कर लाऊ। यमदण्ड की बात सुनकर राजा बोला–अरे मूर्ख क्या हम ही

चोर हैं यमदण्ड ने उसी समय पचों के सामने राजा की खडाऊं मन्त्री की अंगूठी प्रोहित की जनेऊ रखदी और बोला—कि यह तीनों ही चोर हैं इन तीनों ने ही मिलकर खजाने मे चोरी करी है। जब मालिक ही चोरी करने लग जावे तो नगर वासियों को चाहिये कि ऐसे पापी राजाकी बस्ती को छोडकर कहीं जङ्गल में जाकर बस जायें। इसमें ही भला है जब रक्षक ही भक्षक बन जावे तो बतलाओ फिर किसकी शरण में जाकर रहे इसलिये पंच भाइयो तुम मेरा कहा मानो और अधर्मी राजा को छोड़दो यदि इस पापी राजा को न छोड़ोगे तो आप लोग भी पाप के भागी बनोगे। शत्रु से मिले हुये मित्र को, व्यभिचारिणी स्त्री को, कुल नष्ट करने वाले पुत्र को, मूर्ख मन्त्री को न्याय नीति रहित राजा को, आलसी [प्रमादि] वैद्य को, सरागी देव को, दया रहित धर्म को जो मोह ममता के वश होकर नहीं छोड़ता हो उसका कभी कल्याण [भला] नहीं होता।

यमदण्ड की बात को सुनकर राजा मन्त्री और प्रोहित के होश हवाश उड़ गये। पच लोगों ने तथा समस्त सभा के लोगों ने खडाऊं अगूठी जनेऊ, से जान लिया कि बस ये तीनों ही चोर हैं। यह राजा यमदण्ड को मारना चाहता है और यमदण्ड का इसमें कुछ भी अपराध नहीं है। आज तो यह इस पर दोषारोपण करके मारना चाहता है और फिर धीरे२ यह है हम सबों को मार देगा। इसलिये प्रजा को ऐसे अन्यायी राजा की आवश्यकता नहीं जो स्वार्थ वश हो अन्याय करने लग जावे वह राज ह क्या है। इसलिये राजा को गद्दी से उतार देना ही उचित है, प्रजा पची जनों ने आपस में सङ्गठन बल बढ़ाकर राजा को गद्दीसे उतार दिया और गद्दी खाली करवाली, राजा मन्त्री प्रोहित को धक्का देकर शहर से बाहर निकाल दिये। राजगद्दी पर राजपुत्र 'गुणपाल' को बैठाया, मन्त्री—पुत्र 'देवपाल' को मन्त्री बनाया और प्रोहित पुत्र 'सुश ।' को प्रोहित बनाया

अब राजा मन्त्री और प्रोहित अपने पापों का पश्चाताप करते हुये शहर से बाहर जा रहे थे कि उनको देखकर लोग बाग बोले कि विनाश के समय बुद्धि नष्ट हो ही जाया करती है। रास्ते में राजा जी मन्त्री और प्रोहित से बोला—मैं तो यह चाहता था कि यमदण्ड को मारकर सुख से राज्य करूंगा। किन्तु यहा तो सारा ही काम उल्टा होगया। उसका पुण्य तेज था इसलिये उसकी जीत हो गई, पुण्य से दुश्मन भी दब जाता है। जैसा हमने पाप कर्म किया [यमदण्ड को मारना चाहा] था वह पाप अब हमारे उदय हो आया है-

श्लोक—ग्राहा रोगा .विषा सर्पः, डाकिन्यो राक्षसा स्तथा।
पोडया त नरं पश्चात्, पडितं पूर्व कर्मणा॥ ६२॥

भा०मनुष्य को ग्रह रोग विष सर्प डाकिनी शाकिनी राक्षस आदि तीं पीडा पीछे देते हैं पहिले तो पाप कर्म ही दुःख देते हैं।

श्लोक—यादृशं क्रियते कर्मः, तादृशं भुज्यतेफलम्।
यादृशमुप्यते बीजं, तादृश प्राप्यते फलम्॥ ६३॥

भा० जो जैसा, कर्म करेगा वैसा फल पायगा, जो जैसा बीज बोवेगा उसको वैसा ही फल प्राप्त होगा।

श्लोक—रंकं करोति राजानं,राजानं रंकमेवच।
धनिनं निर्धनं चैव,निर्धनं धनिनंविधि॥ ६४॥

किये हुए कर्म राजा को रक और रक को राजा बना देते है धनवान को निर्धन और निर्धन को धनवान बना देते है। कर्मों की बडी विचित्र माया है राजा मन्त्री प्रोहित रोते पीटते चले गये। यह कथा सभिन्न मन्त्री ने (पद्मोदय राजा को सुनाइ और साथ मे यह भी बतला

–या कि जो धर्मात्मा संघ से द्वेष करता है वह अपमान का भाजन बनता है जैसे सुयोधन राजा ने धर्मात्मा यमदड को दड देना चाहा उसका फल यह हुआ कि वह बडपन (राज्य गद्दी) से हाथ धो बैठा ऐसे ही यदि आप भी अति बात खीचोगे तो सुयोधन की तरह दु ख पावोगे। संभिन्न मत्री की बात कों सुनकर राजा का हृदय काप उठा और मन म विचारने लगा कि मत्री जी ने मेरे को बचा लिया। राजा ने सभिन्न मन्त्री का वडा आदर सत्कार किया और कुछ दिन ससार में रह संसार से विरक्त हो (उदितोदय) कुवर को राज्य दे जिनचन्द्र गुरु के पास जा दीक्षा धारण करी इधर मंत्री ने भी (सुबुद्धि) कुंवर कों मन्त्री पद पर स्थापन कर आप भी जिनचन्द्र गुरु के पास जा दीक्षा धारण करी राजा और मन्त्री साधु बन तपस्या कर कर्म क्षय कर केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष को पहुॅच गये। इधर उदितोदय राजा अखण्ड राज्य करता हुआ आनन्द पूर्वक रहने लगा। कार्तिकशुदि सप्तमी को नगर सेठ अरहदास जी बहुकिमती भेट लेकर राजा के पास पहूॅचा और भेट धर के हाथ जोड सामने खडा हो गया सेठ की भेट को स्वीकार कर राजा बोला कहिये सेठ जी आपका कैसे शुभागमन हुआ सेठ हाथ जोड कर विनय पुर्वक बोला पृथ्वीनाथ मैंने और मेरी घर वालियोंने कार्तिकचौमासी की अठाई तपस्या करनी है यह धर्म का कार्य है इसमेमैं आपकी आज्ञा चाहता हूॅ कि आठ दिन तक मैं और मेरी घरवालियों घरवाले स्थानकजी में बैठकर प्रभु भक्ति में [तपस्याऔर धर्म ध्यान में] अपना समय बितावें। यह सुन कर राजा विचारने लगा कि इस सेठ की धर्म में श्रध्दा है जो आठ दिन के लिये भोग विलाशों के ठोकर मारकर धर्म में अपना समय बितावेगा ऐसे पुन्यात्माओं से ही मेरी नगरी की शोभा है राजा बोला–सेठजी आप धन्यवाद के पात्र हो आप का ही मनुष्य जन्म सफल है जो धर्म के लिये

पठन पाठन व धर्म चर्चा आदि मनोविनोद मे बीतता है और मूर्ख लोगो का वक्त खाने पीने सोने क्लेश (दगा–फिसाद) मे बीतता है मन्त्री बोला। श्री महाराज मै तो आपका आज्ञाकारी सेवक हूँ जहा कहोगे वहीं चलने को तैयार हू चलिये। अब राजा और मन्त्री हथियार पेटी से सुसज्जित हो चर चार नगरी निरक्षण के लिये चल दिये कि देखें हमारी नगरमे कौन दुखी और कौन सुखी है। आगे कुछ दूर चल कर चन्द्र देव के प्रकाश मे एक छाया दिखाई दी। राजा बोला–मन्त्रीजी यहा स्त्री पुरुष तो कोई दिखाई नही देता फिर यह छाया किसकी है। मन्त्री बोला–अन्नदाता यह अजन गुटिका आदि विद्या मे निपुण 'सुवर्णखुर' नामक चोर की परछाई है। इस के पास आखों मे घालने का अजन है जिस के घालने से यह किसी को दिखाई नहीं दिया करता, हा इसकी चादनी (रोशनी–प्रकाश)में पर छाया अवश्य दिखाई देती है इसने शहर वालो के धन को खूब लुटा है। राजा बोला–चलो देखे यह कहा जाता है जहा भी जावे वही मे इस को पकड़ना चाहिये। इधर चोरने भी देख लिया कि राजा और मन्त्री मेरे पीछे २ आ रहे है कभी ऐसा न हो कि ये मेरे को गिरफ्तार करले अपनी रक्षा के लिये चोर झट से जिस मकान मे सेठ अरहदास पोसा करके बैठा था उसके पास वाले विशाल बड वृक्ष पर चढ गया और बड के पत्तों मे अपने अग को छुपा कर बैठ गया। राजा और मन्त्री भी उसके पीछे बड पर चढ गये और विचारने लगे कभी तो यह नीचे उतरेगा जब उतरेगा पकड़ेगें। सेठ अरहदास और उसकी आठों स्त्रिया सामायक दशमिक प्रतिक्रमण करके आपस मे धार्मिक चरचा करने लगे। धर्म चर्चा के बाद सेठ जी अपनी स्त्रियों से बोले तुमको सम्यक्त्व किस तरह की कैसे प्राप्त हुई। तब स्त्रिया बोली स्वामीनाथ आप हमारे पति हो। है ससार मे स्त्रियो का पति ही आराध्य देव एव पूज्यनीय माना गया

इसलिये सब से पहिले आप ही अपने दृढ़ सम्यक्त्व रत्न प्राप्त होने की कथा हमें सुनाइये। स्त्रियों के अधिक अनुरोध से अर्हदास कहने लगा कि इसी मथुरा नगरी में पद्मोदय नाम के एक अति विख्यात राजा था उनकी रानी का नाम यशोमती था इनके सुपुत्र वर्तमान राजाधिराज श्रीमान् उदितोदय है। जिनका अखण्ड शासन चल रहा है पद्मोदय के राज मन्त्री का नाम संभिन्नमती था उस की स्त्री का नाम सुप्रभा था और पुत्र का नाम सुबुद्धि है जो वर्तमान नरेश उदितोदय का महामन्त्री है। इसही नगरी में एक रूपखूरा नाम का चोर रहा करता था उसकी स्त्री का नाम रूपखुरी था और उसके एक पुत्र था जिसका नाम सुवर्णखुरा था। इसी नगरी में मेरे परम पूज्यनीय पिता जिनदत्त जी रहा करते थे उनका मैं एक लाडला पुत्र हूँ। मेरे पिता जी बड़े धर्मातमा एवं पुन्यात्मा थे उनके भाग्योदय से सब बातों के टाट लग रहे थे अब भी उनके पुन्योप्रताप से सब बातों का टाट लग रहा है।

सवैया—पूरण सम्पत्ति हो घर में, तन रोग रहित हो सुन्दर काया। पुत्र सु पुत्र सु लच्छणीनार हो, धर्म के रंग में खूब रगाया। दान पुण्य करे निशिवासर, कौ·ल जैन वद मन भाया। ये सह बोल मिले जिनके घर, कृष्ण कहे तस भाग सवाया॥६६॥

राजा और मन्त्री ने जब अपने माता पिता का नाम सुना तो उनको बड़ी उत्कण्ठा हो गई कि देखें अब आगे सेठ जी क्या कहते हैं—इधर सुवर्ण खुरा भी सोचने लगा कि जबकि सेठ जी अपनी आंखों देखी और कानों सुनी बात कह रहे हैं तो क्यों न इनकी बात सुनों यदि आज

खुरा चौर का ही काम c उसके बिना ये काम और कौन कर सकता है। जल्दी ही उस पाजी का इतजाम करना चाहिये, नहीं तो राजाजी औरभी कमजोर हो जायेंगे। मन्त्रि बोला—श्री महाराज मैं जल्दी ही उपाय करुगा और देखूगा कि वह दुष्ट कौन है दूसरे दिन आख के और आम के सूखे पत्ते दरवाजे में बिछवा दिये और चारों कौने मे तिव्र धुम्रके घड़े मुखवन्द वा कर धरवा दिये और बड़े शूर वीरों के हाथ में तलवार भाला बर्छी दे कर उनको गुप्त रूप बैठा दिये। मन्त्री वह बन्दोवस्त करके हटा ही था कि इतने में रसोई का समय हो गयाऔर राजा जी के लियेथाल मेंभोजन परोसा गया इतने में रूपखुरा चोर भी आ गया, जब उसने दरवाजे में प्रवेश किया तो उसके पग आम और आक के पत्तों पर पड़े तो एक दम पत्ते खड़ खड़ाये उसी समय मन्त्रीने जानलिया कि अब चोर आ गयाहै, झट मन्त्रि ने दरवाजे बन्द करवा दिये ताला ठुकवा दिया और उन जहरीलेधुवों वाले घड़ोंका मुख खुलवा दिया वह जहरीलीधुवा रूपखुरा की आखों में बड़ गया धुवा लगते ही उसने आखे मली और आँखो में से पानीनिकला, पानी निकलने के साथ ही उसकी आखों से सुरमाभी निकल गया। आखों में से सुरमा निकलते ही 'रूपखुरा' सब को दिखाई दिया और मन्त्रि के हुक्म से सुभटोंने उसी समय उसको पकड़ लिया। रूपखुरा सोचने लगा कि मैंने विचारा था कुछ और हो गया कुछ और ही। मैंने राजा के साथ बैठ कर भोजन क्या कियाअबतो मेरे प्राण ही जाते दीखते हैं, मेरी तो यह दशा (हालत) हुई —कि—मारे गर्मी के हाथी पानी पीने के लिये तालाव पर गया, कर्म योग से हाथी किनारे वाले कीचड़ में ही जा फसा, अथवा यों कहिये कि—एक मगते पर एक राजपुत्री प्रसन्न हो गई कर्म योग से उस मगते को सिंह ही खा गया मगते की मन की मन में ही रह गई—

श्लोक-रात्रि गमिष्यति भविष्यतिसुप्रभातं, भास्वानुदयष्यति हासिष्यति पंकजश्री । एवं विचिन्तयति कोशगते द्विरेफः, हा हन्त हन्त नलिनीं गज उज्जहार: ॥ ६ ॥

भा०-एक भमरा एक तालाब वाले कमल पर आकर बैठ गया, मारे लोभ के सन्ध्याकेसमय भी वह कमल पर से न उडसका और वहीं बैठा रहा, सूर्य अस्त के समय वहीं कमल मे फस गया पश्चात्, मन में विचारने लगा कि सूर्योदय होवेगा कमल खिलेगा और मैं फिर कमल के रस को पी करउड जाऊगा, वहतो यह विचार कर ही रहा था कि इतने में तालाब पर पानी पीने के लिये हाथी आगया और उस भमरे वाले कमल को तोड पेट में धर गया भमरा काल के गाल में चला गया-

सवैया-पंकजकोप में भृंग फँस्यो अपने मन में करत मनसूबो,
होयगो प्रभात उगेंगे दिवाकर जाऊंगो धाम पराग ले खूबो.
रैन बीच ये औरही भईनहीं जानत काल को ख्यालअजूबो,
आय गयन्द चबायलियो रहिगो मन को मन में मन सूबो ।

इत्सितं मनसः सर्वं कस्य संपद्यते सुखम्

मन चाहा काम किस का होता है अर्थात् किसी का नहीं होता । अब जग मेरी भी मृत्यु आ गई है राज्य पुरुषो ने रूपखुरा कोपकड लिया और मस्तों बाप राजा के सामने ला कर खड़ा कर दिया । राजा ने शुभटों को आज्ञा दी कि इस दुष्ट को शूली पर चढा दो और शूली के चारों तरफ पहरेदार बैठा दो, जो इस चोर्टे से बात करने के लिये आवेगा या इस से इस दु ख के समाचार पूछने आवेगा वही राजद्रोही समझा जावेगा और

चोरी का सारा माल भी समझो कि उस के पास ही निकलेगा, उस दुष्ट से ही सारा माल लिया जावेगा और चोर की जो सजा होनी चाहिये वह उस को दी जावेगी। राजा की आज्ञा से शुभटों ने उसी समय चोर को गधे पर बैठा मस्तक पर पाच चोटी रख टूटी हुई जुत्तियों का मनोहर हार गले मे पहना आगे फुटा ढोल बजवाते हुये शूली पर चढानेके लिये चलदिये। मार्ग में जाते हुये चोर को देखकर शहर के लोग बाग आपस में कहने लगे कि एक चोरी के व्यशन में पड़कर आज रूपखुरा मरने के लिये बध भूमि में जा रहा है। जुवा खेलने से पाचों पाडव मास भक्षण से बक दाना, मन्दिर के पीने से यादव वेश्यगमन से चारुदत्त सेठ,चोरी करने से अभगसैन चोर, शिकार खेलने से ब्रह्मदत्त राजा, स्त्री के कारण दैत्य रावणने दुःख उठाया, एक २ व्यशन के कारण उन्होंने इतना दु'ख पाया जो सातों के बस में पड़ जाते हैं उनका तो न मालूम क्या हाल होगा और व व्यशन के सेवन वाले न मालूम कौनसी नरक में जाकर पडेंगे अब राज्य पुरुषों ये चोर को लेजा कर शूली पर चढा दिया और उस के चारों तर्फ गुप्त रूप से पहरेदार बैठा दिये। जिस समय उसको शूली दी गई थी उस से पहले मेरे पिता जी मेरे को साथ लेकर गृह कार्य के लिये बाहर गाम में गये थे, कार्य कर के जब वापिस नगर को आ रहे थे कि रास्ते में रूपखुरा को शूली पर लटके देखा, जिसके शरीर से खून टपाटप पड़ने लग रहा था। मारे प्यास के उस के प्राण निकलना ही चाहते थे कि उसकी यह दशा देखकर मैंने अपने पूजनीय पिताजीसे उसको शूली चढानेका कारण पूछा तो पिताजी ने उत्तर दिया कि—भाई इसने नगरी के लोगों को खूब लुटा और खसोटा बहुतों को निर्धन बनाया और रहा सहा राजा जी के साथ थाल में बैठ कर उनके खाने काभोजन खाया जिस मे इसको शूली चढाया गया किये हुये कर्म कभी पीछा नही छोड़ा करते

रूपगुप्त इम को देखकर बोला—सेठजी आप दया के सागर हैं धर्मात्मा हैं जरी भी दयाल्नवें देखो गिद्धों ने तो मेरे पग खालिये हैं कौओं ने टोंगे मार २ कर मेरे सिरमें से खून निकाल दिया और जहा तहा (जगह २) म मेरेको खा डाला एक तो में शूली पर लटका हुआ महाघोर दुःख पा रहा हूँ और दूसरे ये जगली जीव जानवर मेरेको दुखी कर रहे हैं, इतने पर भी मेरे प्राण नहीं निकलते और तीन दिन से वैसे प्यास के मारे मैं महा दुख भोग रहा हुँ, ये पापी प्राण भी तो नहीं निकलते सेठजी ? मैंने आप ही एसे कर रक्खे है उनका फल मैं न भोगु गा तो और मेरे बदले कौन भोगेगा। आप मेरे पर दयाकर पानी पिलानेकी कृपा करें अब आप यह ख्याल न करें कि यह चोर है कुपात्र है मैं क्यों पानी पिलाऊं ससार में दयाधर्म ही प्रधानधर्म है ये दया धर्म मोक्षादि सुखों का देनेवाला है।

श्लोक— लावण्य रहितं रूपं, विद्यया वर्जितं वपुः।
जल त्यक्तं सरो भाति, तथा धर्मो दयां विना ॥ ५॥

भा०—चतुराई (अकल] के विना रूप की, विद्या के विना शरीर की जलके विना सरोवर की कोई शोभा नहीं होती और उस ही प्रकार दया रहित धर्मकी भी कोई शोभा नहीं जिसके चित म दया बस रही है और दया से ही जिसका हृदय भीग रहा है वही ज्ञानी ध्यानी और वही मोक्ष का अधिकारी है।

श्लोक—परोपकाराय फलन्तिवृक्षाः, परोपकारायवहन्ति नद्यः।
परोपकाय दुहन्ति गावः, परोपकारार्थ मिदं शरीरं ॥ ६ ॥

भा०—परोपकार के लिये वृक्ष धूप में खड़े रहते और खाने को फल फूल देते हैं, गाय भी परोपकार के लिये दूध देती है और नदिया भी परोपकारके लिये बहती हैं, धर्मात्मा पुरुषों का शरीर भी परोपकार

लिये ही होता है। सेठजी ! आप बड़े परोपकारी हो, और परोपकार के लिये ही आप का शुभ जन्म हुआ है, मेरे उपर कृपा कर पानी लाकर पिलावें मैं आपका बडा भारी उपकार मानूंगा। यद्यपि चोर को पानी पिलानादि राजा की अज्ञा के विरुद्ध था तो भी दया (अनुकम्पा) मे मेरे पिता का हृदय पिघल गया और चोर को बोले-प्यारे बन्धु म अभी तेरे लिये जा कर पानी लाता हु किन्तु मेरे गुरुदेव ने बारा वर्ष की सेवा से प्रसन्न हो कर ही आज मेरे को महा पति नो द्धारक स्वर्ग और मोक्ष का देने बाला मत्र बतलाया है, जबतक मैं पानी लेकर वापिस न आऊ तब तक तू इस महापवित्र श्रेष्ठ मन्त्र को मुख ढक के पढते रहना, इस से तेरे को महासुख की प्राप्ती होगी। अब मेरे पिता जी रूपखुरा को नौकार महा मन्त्र बतला के मेरे को साथ ले पानी लाने के लिये चल दिये और रूपखुरा महामन्त्र का शुद्ध मन से मुख के आगे हाथ लगा कर ध्यान करने लगा, उस नवकार मन्त्र के ध्यान में ही उसके प्राण पखेरू उडगये प्राणान्त होने पर वह उस महामन्त्रके प्रभाव से पहले देवलोक मे जाकर देव पने उत्पन्न हुआ, वहाँ उससे छोटे अनेक देवी देवता उसकी सेवा में आ उपस्थित हुये। इधर मेरे पिता जी जल लेकर शमशाण भूमि मेंआये और चोरको मरापाया, मुखके आगे हाथ लगा देख कर दिल में विचार किया कि मालूम होता है यह महामन्त्र के ध्यान में मर कर अवश्य देव लोक में गया होगा मैंने अपने पिता जी से कहा कि—

श्लोक—महाजनस्य संसर्गः, कस्यनोन्नति कारकः।
पद्म,पत्रस्थितं वारि, धत्ते मुक्ता फलं फलं िश्रयम् ॥ ७ ॥

भा०—सज्जनोंकी सगति से किसकी उन्नति नही होती अर्थात् सब ही उन्नति को प्राप्त होते हैं, पद्म कमल पर पड़ी हुई पानी की बून्द मोती

जैसे चमकने लगती है।

श्लोक—महानु भाव संसर्गः, कस्यनोन्नति कारकः ।
रथ्याम्बु जान्हवीसंगात्, त्रिदशैरपि वन्द्यते ॥ ८ ॥८

भा०—उत्तम की सगति से सब ही उन्नति (तर्की) को प्राप्त होते हैं, जैसे गलियों और मोरियों का गन्दा पानी गंगा जी में मिलने से देव द्वारा भी पूज्यनीय हो जाताहै ।

श्लोक—कीटोऽपि सुमनः संगाद्, आरोहति सतांशिरः ।
अश्मापि याति देवत्वं,महद्भिः सुप्रतिष्ठतः ॥ ९ ॥

भा०—कीड़ा भी फूलों की संगति से [फूलों में बैठकर] राजा महा राजाओं के मस्तक पर जा विराजित होता है, पत्थर भी कारीगर की संगत से देव कहाने लग जाता है, काठ के संग से लोहा भी तिर जाता है, ऐसे ही जो सत्पुरुषों की संगति में आवे तो क्यों न उसका उद्धार होवे अर्थात् अवश्य उद्धार होता है। वहां से चल के हम गुरु श्री जिनचन्द्र के पास गये और सब समाचार कह सुनाये और फिर घर के पास वाले थानक में जा कर पिता जी व्रत पोसा ले कर बैठ गये और मैं घर को चला आया इधर राजा के सिपाहीयों ने मेरे पिताजी को चोर के साथ बात चीत करते देखकर वह भागे हुये राजा के पास गये और कहा कि सेठ जिनदत्त चोर से बातें करी है राजा ने कहा यह सेठ राज्य द्रोही है [राजा की आज्ञा का भंग करने वाला है] जरूर इस के पास ही चोरी का माल होगा, चोरों का माल ले कर ही यह इतना बड़ा धनाढ्य होगया है, दूसरे के माल को ले कर [दाब २ कर] ही सेठ बनते हैं मार के पराया धन सेठजी कहावे है, क्रोध में भर कर राजा ने सिपाहियों को आज्ञा दी कि जहां भी सेठ हो वहीं से उसको उस को पकड़ लाओ और शूली पर चढा दो सिपाही सेठ

जी को पकडने के लिये चल दिये, उधर वह जो देवता स्वर्ग में जा कर देव पने उत्पन्न हुआ था उस ने उसी समत अवधिज्ञान के द्वारा देखा कि मेरे को पहले जन्मके धर्मगुरू सेठ जिनदत्त ने धर्म का शरण दिया और नवकार महा मत्र का पाठ बतलाया उस महामत्र के प्रभाव से ही मैं यहा देवलोक में आकर देवता हुआ हूँ अब उन के ऊपर मेरे कारण से ही शकट आने वाला है इसलिये मेरें को भी उचित है कि मनुष्य लोक मे चल कर उन का शकट मेटू, यदि ऐसे शकट के समय मे भी न उनकी सेवा न करूगा तो फिर मेरे जैसा भी कोई पामर (नीच) न होगा, यह विचार कर उपसर्ग निवारण के लिये वह वेक्रय रूप बना स्वर्ग से चल जहा सेठजी पौषधव्रत में बैठे दे वहा मनुष्य का रूप बना हाथ में डडा ले दरवाजे के ऊपर आ पहरेदार बन के बैठ गया। सेठ को पकड़ने के लिये यमराज जैसे क्रूर स्वभाव वाले सिपाही आये। सिपाहियों से देवता बोला अरे मुर्खों तुम कहा आगे बढे चले जा रहे हो जहा से आ येहो वस वहीं वापिस चले जाओ मैं तुम को सेठके पास तक नहीं पहुँचने दूगा द्वारपाल के इस कटुक बचन को सुनकर सिपाही बोले अरे अज्ञानी तू क्यों व्यर्थ बकवाद करता है रास्ता छोड़ एक तर्फ को होजा नहीं त सब से पहिले हमनेरे को ही मारेंगे देख तू एक है और हम कितने हैं दूसरे यहा तेरा कोई सहायक भी नहीं है जो तेरे को आकर छुडा देगा और हम इतने हैं कि तेरे शरीर का खडो खंड करदेंगे। देवता बोला तुम बहुत भी हो और मोटे ताजे भी हो पर इस से होगा क्या—

श्लोक—हस्तिस्थूलतनुः सचांकुशवसः किंहस्ति मात्रांकुशो।
वज्रैणाभि हताः पतन्ति गिरयः किंशैल मात्रः नगः।
दीपे प्रज्वलिते विनश्यतितमः किंदीप मात्रं तमः।

तेजो यस्य विराजते स बलवान स्थूलेषु कः प्रत्ययः ॥ १० ॥

अर्थ—हाथी कितना बड़ा मोटा ताजा और ऊंचा होता है किन्तु वह महावत के अंकुश के वश में आ जाता है तो क्या अंकुश हाथी के बराबर है यदि [वज्र] शैलों (पहाड़ों) का चूरा बना देता है तो क्या वज्र वह विशाल कायपहाड़ों के सदृश है दीपक से घर का सब अन्धकार नष्ट हो जाता है तो क्या अन्धकार दीपक के बराबर है, संसार में वही बड़ा है जिस में तेज हो फिर वह चाहे छोटा ही क्यों न हो वही बलवान है अधिक मोटे ताजे और विशाल काय हैं, और हैं वह शक्ति हीन तो फिर भला वे बिचारे क्या कर सकते हैं। जंगल में रहने वाला सिंह चाहे कितना ही दुबला पतला क्यों न हो किन्तु जब वह गरजता है कि बड़े २ हाथियों का मद जाता रहता है इसलिये तुम मेरा कहा मानो यहां से चले जाओ नहीं तो मैं तुम्हारे में बहुत बुरी करूंगा। द्वारपाल के वचन सुन कर क्रोध में भर कर सिपाही आपस में बोले अरे देखते क्या हो पहले इस पाजी को ही क्यों नहीं मार लेते। एक दम सिपाही पहरेदार पर टूट पड़े उधर देवता ने हाथ में ले कर उनको मारना शुरु किया कितनेक तो मार खा कर मूर्छित हो भूमि पर गिरपड़े और कितनेक मरगये और कितनेकों ने मुख में तृण ले लिया और कहा हम तेरी शरणागत हैं हमें छोड़ अभय दान दो कितनेक भागे हुए राजा के पास गये और सारे समाचार कह सुनाये फिर राजा ने और भी बहुत सख्या में सिपाही भेजे उनकी भी देवता ने वही दशा (हालत) की खबर लगने पर राजाजी को बड़ा क्रोध आया और सारे प्रकार की सेना ले स्वयं युद्ध करता हुआ, देवता ने भी देव माया से अपनी सेना बनाली दूर से ही राजा ने वह सेना देखी और मंत्री से बोला यह सेना किस की है मंत्री बोला—श्री महाराज यह सामने कोई

देवता है और सेना भी इसकी ही मालूम होती है आपके येमिपाहियों को जो मारा पीटा है यह देवता का ही काम है मनुष्यका काम नहीं है देखो तो सही वह कितना तेज और प्रभाव शाली है इसलिये आप मेरा कहा मानो और वापिस अपने स्थान को चले चलो नही तो यहां दुःख सागर । में गोतेखाने पड़ेंगे राजाने मन्त्रीका कहा नहीं माना और सेना बढ़ाई राज देवता में घोर सग्राम हुआ अन्त मे देवताकी जय हुई और राजा की सेना कुछ तो मरगई और जो कुछ बची वह प्राण लेकर भाग गई अब सामने [मुकाबले पर] राजा रहगया वहभी देवताके भयानक रूपको देख कर मारे डरके शहर की तर्फ भाग निकला, देवता भी उस के पीछे २ दौड़ लिया और निकट (पास) आकर बोला अरे मूर्ख शिरोमणी अब मेरे हाथ से बचके कहा जावेगा जहा भी तू जावेगा मैं वहीं तेरेको मार कर और तेरी नगरी को उजाड़ कर ही दम लूंगा देवताके कथन को सुन कर राजा भयभीत हो गया और मुख में तृण लेकर बोलामें तेरी शरण हुं मेरी रक्षा कर । देवता बोला यदि तू थानकमें पोषध व्रत लिये हुए जिनदत्त सेठकी शरण लेवेगा तो में तेरे को छोडदूंगा नही तोअब मैं तेरे खण्ड२ करे बिना नही रहुगा । यह सुन राजा सेठजीके पासआया और एक चरण से खड़ा हो हाथ जोड़कर बोला सेठजी इस दैत्य से मेरे को बचाओ मेरी रक्षा करो मैं अब आप की शरण में हूं आप बचओगे मैं बच सकता हूं नहीं तो मेरे को और कोई बचाने वाला नहीं है

श्लोक—अशाश्वता ह्यमि प्राणाः, विश्व कीर्तिश्च शाश्वते
अर्थीं प्राण नाशे ऽपि, तद्रक्षोच्छरणा गतम् ॥११॥

टी०—श्रावक जी ये प्राण नाश मान हैं संसार में एक कीर्तिही अचल है, यश के चाहने वालों कायर्तव्य है कि शरण में आये हुए की तो प्राण

[illegible] की आवश्यकता करें।

गथा—विहलं जा अवलम्बइ, आविइ पडियंच जो समुद्धरइ
शरणागयंच रक्खइ तिसु तेसु अलंकिया पुहवी ॥ १२ ॥

भा०—जो दुःख में घबराते प्राणी को सहारा देता धैर्य बन्धाता है, दुःख में पड़े हुए का जो उद्धार करता है तथा जो शरणमें आये हुओं की रक्षा करता है ऐसे धर्मात्मा पुरुषों से ही यह पृथ्वी शोभा को प्राप्त हो रही है। श्रावक जी? आपभी मेरे को अभय दान दो दानाण सेट्ठ अभय पयाण सब दानों में अभय दान ही श्रेष्ठ दान बतलाया गया है—

श्लोक—न गो प्रदानम् न मही प्रदानम्, नचान्न दानंहि तथा प्रधानम् । यथावदन्तीह बुधाः प्रधानं सर्वदानेष्वभय प्रदानम् ॥ १३ ॥

भा०—गो दान, पृथ्वी दान अन्न दान आदि सब दानों से अभय दानही श्रेष्ठ दान है—

श्लोक—हेम धेनु धरादीनां, दातारः सुलभ भुवि ।
दुर्लभः पुरुषो लोके, यः प्राणिष्वभय प्रदः ॥ १४ ॥

भा०—चांदी सोना गाय पृथ्वी आदि के दान करने वाले तो बहुत हैं किन्तु [illegible] भीत प्राणी को अभय दान के देने वाले तो कोई विरले ही होते हैं—

श्लोक—एकतः कांचनो मेरु, बहु रत्ना वसुंधरा ।
एकतो भय भीतस्य, प्राणिनः प्राण रक्षणम् ॥ १५ ॥

[illegible] सुवर्ण का सोने का मेरु पर्वत और एक रत्नों से भरी हुई [illegible] दान [illegible] और एक भय भीत प्राणी "जीव" को

देवता है और सेना भी इसकी ही मालूम होती है आपके येमिपाहियों को जो मारा पीटा है यह देवता का ही काम है मनुष्यका काम नही है देखो तो सही वह कितना तेज और प्रभाव शाली है इसलिये आप मेरा कहा मानो और वापिस अपने स्थान को चले चलो नही तो यहा दुख सागर मे गोतेखाने पड़ेंगे राजाने मन्त्रीका कहा नही माना और सेना व राज देवता में घोर सग्राम हुआ अन्त मे देवताकी जय हुई और राजा की सेना कुछ तो मरगई और जो कुछ बची वह प्राण लेकर भाग गई अब सामने [मुकाबले पर] राजा रहगया वहभी देवताके भयानक रूपको देख कर मारे डरके शहर की तर्फ भाग निकला, देवता भी उस के पीछे २ दौड़ लिया और निकट (पास) आकर बोला अरे मूर्ख शिरोमणी अब मेरे हाथ से बचके कहा जावेगा जहा भी तू जावेगा मै वही तेरेको मार कर और तेरी नगरी को उजाड़ कर ही दम लूगा देवताके कथन को सुन कर राजा भयभीत हो गया और मुख मे तृण लेकर बोलाम तेरी शरण हुं मेरी रक्षा कर। देवता बोला यदि तू थानकमे पोषध-व्रत लिये हुए जिनदत्त सेठकी शरण लेवेगा तो मैं तेरे को छोडदूंगा नही तोअब मैं तेरे खण्ड२ करे बिना नही रहुगा। यह सुन राजा सेठजीके पासआया और एक चरण से खड़ा हो हाथ जोड़कर बोला सेठजी इस दैत्य से मेरे को बचाओ मेरी रक्षा करो मैं अब आप की शरण में हूं आप बचओगे मैं बच सकता हूं नही तो मेरे को और कोई बचाने वाला नहीं है

श्लोक—अशाश्वता ह्यमि प्राणाः, विश्व कीर्तिश्च शाश्वते
यशोऽर्थी प्राण नाशे ऽपि, तद्रक्षोच्छरणा गतम् ॥११॥

भा०—श्रावक जी ये प्राण नाश मान हैं संसार में एक कीर्तिही अचल है, यश के चाहने वालों कायर्तव्य है कि शरण मे आये हुए की तो प्राण

देकर नी आवश्यक रक्षा करें।

गथा—विहलं जो अवलम्बई, आविइ पड़ियंच जो समुद्धरइ
शरणागयंच रक्खइ तिसु तेसु अलंकिया पुहवी ॥ १२ ॥

भा०—जो दु:ख से घबराये प्राणी को सहारा देता धैर्यबन्धाता है, दु:ख में पड़े हुये का उद्धार करता है तथा जो शरणमें आये हुओं की रक्षा करता है ऐसे धर्मात्मा पुरुषो से ही यह पृथ्वी शोभा को प्राप्त हो रही है।
श्रावक नी? आपभी मेरे को अभय दान दो दाणाण सेठ अभय पयाण सब दानों मे अभय दान ही श्रेष्ठ दान बतलाया गया है—

श्लोक—न गो प्रदानम् न मही प्रदानम्, नचान्न दानंहि तथा प्रधानम्। यथावदन्तीह बुधाः प्रधानं सर्वदानेष्कभयं प्रदानम् ॥ १३ ॥

भा०—गो दान, पृथ्वी दान अन्न दान आदि सब दानों से अभय दानही श्रेष्ठ दान है—

श्लोक— हेम धेनु धरादीनां, दातारः सुलभ भुवि।
दुर्लभः पुरुषो लोके, यः प्राणिष्वभय प्रदः ॥ १४ ॥

भा०—चादी सोना गाय पृथ्वी आदि के दान करने वाले तो बहुत हैं किन्तु भय भीत प्राणी को अभय दान के देने वाले तो कोई विरले ही होते हैं—

श्लोक— एकतः कॉचनो मेरु, बहु रत्ना वसुधरा।
एकतो भय भीतस्य, प्राणिनः प्राण रक्षणम् ॥ १५ ॥

भा०—एक मनुष्य तो सोने का मेरु पर्वत और एक रतनों से भरी हुई पृथ्वी का दान करने लग रहा और एक भय भीत प्राणी "जीव" को

अभय दान देने लग रहा है, इन में अभय दान देने वाला मरते हुए-जीव को बचाने वाला ही श्रेष्ठ है-

श्लोक – महताऽपि दाननां, कालेन क्षीयते फलम् ।
भीताऽभय, प्रदानस्य, क्षय एव न विद्यते ॥ १६ ॥

भा०—बड़े भारी दान का फल तो किसी समय क्षय भी हो जाता है किन्तु अभय दान का फल तो कभी क्षय होता ही नहीं हैं।

श्लोक—क्षीयन्ते सर्व दानानि, यज्ञ होम बलि क्रिया।
न क्षीयते पात्र दान—मभंयं सर्व देहिनाम् ॥ १७ ॥

भा०—सब दानो का यज्ञ होम बलिका फल भी नष्ट हो जाता है किन्तु सत् पात्र को दिया हुआ दान तथा भय भीत जीव को अभय दान देने का फल कभी नष्ट नहीं होता इसलिये' आप मेरे को इस दैत्य से बचावें। भय भीत हुए राजा के बचन सुनकर मेरे पिता जी ने बिचार किया कि हो न हो यह जो राजा के पीछे पड़ रहा है सो यह कोई देवता है जो वैक्रयसे अपना ऐसा भयंकर रूप धारण कर रखा है देवता के बिना ऐसा चमत्कार भला कौन दिखा सकता है। पिता जी यह बिचार देवता से बोले–हे देव तुम हमारा कहा मानो और क्रोध को शान्त करो भागे हुये के पीछे भागा नहीं करते। पिता जी के कथन को सुनकर देवता ने उस भयकर राक्ष रूप का त्याग कर वही असली देव रूप बना पिता जी को प्रणाम कर सामने हाथ जोड़ खड़ा होकर बोला कि हे सेठ जी मैं उस अधम महानीच रूप खुरा चोर का जीव हूँ जिसको आपने नवकार महा का शरण दिया था उस महामन्त्र के प्रभाव से ही मैं स्वर्ग में अ देवता हो गया हू यह कह देवता बार बार सेठके चरणों मे पडा। राजा मन मे सोचने लगा कि अहो सेठ बडा पुन्यआत्मा है जो इसने

ग्मा कारण ही चोर को धर्म का शरण दिया। धर्मात्मा पुरूष ही परोप ककार किया करते हैं।

पिवन्तिनद्यः स्वमेवनाम्भः, स्वयं नखदन्ति फलानिवृत्ताः। नादन्ति सस्यं खलु वारीवाहाः परोपकाराय सतां विभूतय

नदिया जल की भरी हुई चलती हैं किन्तु वह स्वय जल नही पीती वृक्ष के फल लगते हैं किन्तु उन फलों को वृक्ष नही खाते। मेघ बरसता है हरी घास उगाता है किन्तु हरे हरे घास को स्वय नही खाता है। नदी परोपकार के लिये बहती। वृक्षभी परोपकार्थ ही फल देने हैं और मेघराज भी परोपकार के लिये बरसता है परोपकारीयों का जीवन परोपकार में ही व्यतीत होता है

पद्माकरं दिन करो विकचो करोति चन्द्रो विकाशयति कैरव चक्र वालम्। नाभ्यर्थितो जलधरो ऽपि जलं ददाति।सन्तः स्वयं परहिते सुकृताभि योगाः॥ १६॥

सूर्य से हाथ जोडकर कौन कहता है तुम अन्धकार को मेट कर उजाला करो और सूर्य विकाशी कमल को विकशित करो चन्द्रमा को कौन कहता है कि तुम चन्द्रविकाशी कमल को विकशित करो और रोशनी करो मेघ भी विना प्रार्थना के ही जल वरसता है। वृक्ष भी परोपकार के लिये ही छाया करते हैं! ऐसे ही सज्जन पुरुष भी स्वभाव से परोपकार के लिये हर समय कमर कसे रहत हैं किन्तु

दृश्यन्ते भूवि भूरिनिम्ब तरवः कुत्रापिते चन्दनः, पाषाणैः परि पूरिता वसुमति वज्रो मणि दुर्लभः। श्रुयन्ते करटारवाश्च सततं चैत्रै कुहु कुजितं ' तन्मन्य खल संकुल जगदिदं

द्वित्रा चित्रौ सज्जनाः॥ २० ॥

पृथ्वी पर नीम्बादि के वृक्ष तो बहुत देखने में आते हैं किन्तु चन्दन के वृक्ष तो कहीं कहीं ही पाते हैं पत्थरों में तो भूमि भरी पड़ी है किन्तु वज्रमणि तो कहीं कहीं ही उपलब्ध होती है। काग तो हर जगह बोलते हुए देखे जाते हैं किन्तु कोयल तो चैत्रादि मासों मे कूक सुनाती देखी जाती है किन्तु धर्मातमा और सज्जन पुरुष तो कही २ पर देखने को मिलते हैं। हमारी नगरी में भी यह सेठ एक ही ऐसा परोपकारी एवं धर्मात्मा है जो कि एसे पापी चोर का भी एक छिन में उद्धार कर दिया ये परोपकार की शिक्षायें इसको जैन गुरु से ही प्राप्त हुई हैं यह सोचकर राजा भी बार २ सेठजी के चरणों में पडा और बोला—सेठजी मालूम होता है कि सब धर्मों में जैन ही सर्वोत्कृष्ट धर्म है सेठजी बोले कि

जैनो धर्मः प्रकट विभवःसंगति साधुलोके,विद्वद् गोष्ठि वचन पटुता कौशलं सत्क्रियासु साध्वी लक्ष्मीश्चरण कमलो पास नं सद्गुरुणां, शुद्धं शीलं सुमति रमला प्राप्यते नाल्प पुण्यैः

जैन धर्म भारी पुन्योदय से प्रापत होता है मैंने भी पहले जन्म में बडा भारी पुन्य किया था जिसके प्रताप से मेरेको सत्य शुद्ध सनातन जैन धर्म की प्राप्ती हुई है। महा प्रभावशाली जैन धर्मकी प्राप्ती धन सज्जनों की सगति, विद्वानों से सम्पर्क बोलने की चतुराई सम्पूर्ण शास्त्रों में प्रवीणता सतीसाध्वी स्त्री, जिनेन्द्रदेव के चरण कमलों की भक्ति सच्चे निग्रन्थ गुरुओंकी सेवा निर्मल बुद्धि ये सब बातें बडे भारी पुन्योदय से ही मिलती हैं। सेठजी की बातों को सुनकर देवताभी बडा प्रसन्न हुआ और पन्च दिव्य प्रगट किये और बार२ चरणारों मे पड कर बोला—सेठजी—मैं नरक का अधिकारी चोर था आपको मैंने जरासा भी चोरी का माल नही

दिया था फिर भी आपने स्वार्थ बुद्धि से मेरे उपर असीम उपकार किया आपकी कृपा से ही मेरे को यह देवत्व प्राप्त हुआ आपका मैं अत्यन्त कृतज्ञ हुं जब तक इस देवपने में रहूंगा तबतक आपके उपकार को नही भूलू गा इस रचनाको देखकर राजा कोवैराग्य हो आया और कहाकि देख धर्म की महिमा बडी विचित्र है। धर्मात्मा पुरुषको देवताभी नमस्कार करते हैं—

श्लोक—तस्याग्निर्जलं अर्णवः स्थल मरि र्मित्रसुराः किङ्कराः कान्तारं नगरं गिरि गृहं महिर्माल्यं मृगारि मृगः। पातालं विषमस्त्र मुत्पल दलं व्याल शृगालो विषं, पीयूषं विषमं समंच वचनं सत्याँचितं वक्तियः॥ २२॥

सत्य वक्ता धर्मात्मा सज्जन पुरुषो के लिये अग्नितो पानी समुद्र पृथ्वी के तुल्य, दुश्मन मित्र के समान, देवता नौकर के तुल्य' जगल—नगर, पहाड—घर नर्प—फूलों की माला, सिंह—मृग, पाताल स्थल, तलवार कमलसा भगेरा गिदड विष— अमृत रसायण के समान हो जाता है और तो कहा तक कहा जावे धर्मात्मा पुरुष के लिये देवता आकाश से रतनों तथा पुरुषों की भी वृष्टि तक करते हैं वह देवता सेठ जी को नमस्कार कर स्वर्ग लोक को चला गया धर्म की महिमा देखकर राजाजी को तो वैराग्य हो ही गया था कि अब साथ मे मंत्री जी को भी वैराग्य हो आया राजा जी ने अपने पुत्र उदितोदय कुवरको राज्य दे मत्री के साथ जा सद्गुरु श्री जिनचन्द्र सूरी के पास दीक्षा धारण करली और मेरे पिता जी ने भी बहुत पुरुषों के साथ ससार समुद्र से पार उतारने वाले मुनि दीक्षा लेली अर्थात् ससार को छोड साधू बन गये ससार मे वहीं सुखी है जिसने घर बार को छोड के दीक्षा लेली हो और मोह माया ममता को छोड कर एकान्त में रहने लग गये हों।

श्लोक–नचेन्द्रस्य सुखं किचित्, नचापि चक्रवर्तिनः
सुखमस्ति विरक्तस्य मुनेरेकान्त जीविनः ॥ २३ ॥

भा०–जैसा उन समार विरक्त ऐकान्त स्थान सेवी माधू सन्त को सुख है वैसा सुख है न तो स्वर्ग लोक के इन्द्र को ही है और न पृथ्वी पति चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव आदि राजाओं को है। र ना मन्त्रि और सेट के साथ जब बहुत-से पुरुषों ने दीक्षा ली तब शहर वाले और भी बहुत से भद्र परणामी सरल स्वभावी स्त्री पुरुषो ने एक मे लेकर बारह व्रत धारण किये और जैनधर्म के पक्के श्रद्धालु भक्त बन गये।

अर्हदास अपनी स्त्रियों मे बोला कि–हे वल्लभाओ यह सब मैंने प्रत्यक्ष अपनी आखों से देखो और कानो से सुना इस कारण से ही मेरे को दृढ सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ती हुई है। यह सुनकर स्त्रिया बोली हे नाथ यह जो बात आपने सुनाई वह आखों देखी कानों सुनी अनुभव मे आई हुई सुनाई है, हम भी आपकी बात का श्रद्वान करती हैं और हमारी भी आपकी बात मे रुचि है। अर्हदास की सब मे छोटी स्त्री कुन्दलता थी बोल उठी यह जो आपने कहा सब झूठ है इसलिये मैं न इनका श्रद्धान करती हूँ और न मेरी इन बातों मे रूचि है आप कहते हो कि मैं उस दिन से सम्यक्त्व रत्न मे दृढ पक्का हो गया हुँ सो सम्यक्त्व रत्न का पाना तो महा कठिन है सम्यक्त्व के रस के चाखने वाले तो कोई बिरले ही होते हैं कुन्दलता की बात को सुनकर उदितो दयराजा और सुबुद्धि मन्त्री को बडा क्रोध आया और अपने २ मन मे कहने लगे कि ये सब बाते हमने भी प्रत्यक्ष देखी है और इन बातों को शहर के सब लोग भी जानते हैं और यह पापनी इन बातों को झूठ बतला रही है मैं प्रातः काल होते ही इस पापनी को दड दूगा सुवर्ण खुरा चोर को भी बड़ा गुस्सा आया और अपने मन मे कहने लगा कि देखो इस स्त्री का कैसा दुष्ट

स्वभाव है जिसकी कृपा से यह अपना सुख पूर्वजीवन व्यतीत कर रही है उसकी ही बातो का अनादर करती है मैं अब इसकी कुछ काणन मान कर इसका नुकसान करू गा। सेठ अर्हदास अपनी पहली स्त्री मित्र श्री से बोला—हे भद्रे तुम अपने दृढ सम्यकत्व रत्न प्राप्त होने का कारण कहो पति देव के बचन सुनकर मित्र श्री बोली स्वामी जी नाथ सुनिये -

❀ मित्र श्री का कथा कहना ❀

हे पति देव मगध देश की राजगृही नगरी में मेरा जन्म हुआ था वहा का सग्रामशूर ना का राजा था उसके कनक माला नाम की रानी थी और सिंहशूर नाम का पुत्र था उसही नगरी में ऋषिभदास नाम का एक सेठ रहता था वह सम्यक्त्व रत्न का धारक एवं बड़ा धर्मात्मा था और जैन धर्म में उसका अतिसमय 'बहुत जादह, राग था पात्र को दान देना गुणी जनों में प्रेम रखना सब के साथ बैठ कर सुखोपभोग करना शास्त्रों का स्वाध्याय का करना यह उसका नित्य का कर्म था। सेठ की स्त्री का नाम जिनदत्ता वस भी श्राविका के व्रतों का पूर्ण रूप से पालन किया करती थी और सम्यक्त्वरत्न में अति सुदृढ थी। पतिकी आज्ञा को सर्वोत्कृष्ट समझा कर ी थी जो स्त्री पति की आज्ञा में चलने वाली हो सन्तोष वृति वालीहो पति व्रता हो और समझदार हो वह साक्षात् लक्ष्मी ही है इस में कुछ भी सन्देह नही है वह पति देव की सब इच्छाओं को पूर्ण करने में कल्पवृक्ष के तुल्य थी किन्तु उसमें बाझ पने का, एक बड़ा अव गुण था अर्थात् उसके कोई सन्तान नहीं होती थी पुत्रोतपित्त के लिये अनेक उपाय किये किन्तु वे सब निष्कल गये एक दिन जिनदत्ता समय

देखकर अपने पति देव से बोली हे स्वामी नाथ पुत्र के बिना कुल की शोभा नही होती है पुत्र न होने से वंस नष्ट हो जाता है इसलिये आप मेरा कहा मानो और पुत्रत्पत्ति के लिये दूसरा विवाह करलो। नीति शास्त्र में कहा हैकि हाथी की मद से सरोवर की कमलों से, रात्रि की पूर्णमा के चन्द्रमा से वाणी की व्याकरण से नदी व मान सरोवर की हंस हंसनी के जोड़े से सभा को पंडितो से स्त्रियों की शील से, घोड़े की वेग दौडने से सोभा होती है।

श्लोक—पृथ्व सत्पुरुषं विना न रुचिरा चन्द्रं विनाशर्वरी
लक्ष्मीर्दान गुणं विना वनलता पुष्पं फलंवा विना।
आदित्येन बिना दिनं सुखकरं पुत्रं विना सत्कुलम्
धर्मोनैव धृतः सदाश्रुतधरैः शीलं विना शोभाते ॥ १ ॥

भा०—सत्पुरुष राजा के विना पृथ्वी की चन्द्रमा के विना रात्रि की दान के बिना लक्ष्मी की फल फूल के बिना वेल की सूर्य के विना दिन की धैर्य के बिन धर्म की, शील बिना श्रुत सिद्धान्त का जैसे कोई शोभा नहीं है ठीक इस ही प्रकार पुत्र के बिना घर की सोभा नही है।

श्लोक—शर्वरी दीपकश्चन्द्रः, प्रभाते रवि दीपकः।
त्रिलोक्य दीपको धर्मः, सत्पुत्रः कुल दीपकः ॥ २ ॥

भा०—रात्रि का दीपक चन्द्रमा हैं प्रातः काल का दीपक सूर्य है तीन लोक का दीपक धर्म है ठीक इसही प्रकार कुलका दीपक सुपुत्र है।

श्लोक—अपुत्रस्य गृहं शून्यं दिशः शून्यास्त्व बान्धवाः

मूर्खस्य हृदयं शून्यं सर्व शून्या दरिद्रता ॥ ३ ॥

भा०–बिना भाई बन्धुओं के दिशायें शूनी हैं मूर्ख का हृदय शूना है दरिद्र सर्व प्रकार से शून्य है और बिना पुत्र के घर शूनशान है शैव शास्त्रों में लिखा कि अपुत्रस्य गति र्नास्ति बिना पुत्र वाले की गात नही होती इसलिये में आप से हाथ जोड़ कर कहती हुं कि आप अपना दूसरा विवाह करवालें। जिनदत्ता के कथन को सुनकर सेठ जी बोले–हे सुभगे ये भोग विला शादी सब अनित्य एव नासमान है जो भागों को भोगता है वह अज्ञानी (ज्ञान रहित होता है और अनना पाप से पिंड़ भरता है और दूसरी बात यह है कि पुत्र की क्या ताकत है जो पिता की गति कर दे माता पिता पुत्र पुत्री भाई बन्धु सब अपने किये हुये शुभा शुभ कर्म के अनुसार गति को प्राप्त होते हैं और अब मैं बुटा भी हो चला हूँ मेरी यह अवस्था अब धर्मा राधन की है न कि विषय वासना में फसने की यदि में ऐसी हालत में विवाह करवा लू गा तो लोग बाग मेंरी हसी उड़ायेंगे और इस अवस्था में विवाह करवाना लोक विरुद्ध भी है अब में विवाह नहिं करा ऊगा सेठ का निश्चय देख कर सेठानी बोली हे पति देव राग और मोह के वस मे हो जो ऐसा करता है तो लोग उस की अवश्य दिल्लगी (हसी उडाया करते हैं किन्तु जो पुत्रोत्पत्ति के लिये विवाह करता है ससार में वह हसी का पात्र नहीं बनता इस विबाद में सेठानी की जीत हुई और सेठ को हार माननी पडी जैसे तैसे कर के सेठानी ने विवाह स्वीकार करवा लिया अब जिनदत्ता चली हुई अपने पिता के घर पर गई और अपनी सोतेली माता बन्धु श्री तथा पिता के आगे गोद बिछा कर ऋषभ दास के लिये अपनी वहन कनकश्री की मागनी की तब

पति से को अपने पर लुभा रक्खा है हर तरह से उस पापिनी ने सेठ का अपने वस मे कर रखा है वे दोनों हर समय थानक में ही पडे रहते हैं एक -ोजन जीमने के लिये तो वह घर पर आते हैं और मैं रात को भी अपनी घर पर पड़ी रहती हूं। कनकश्री ने झूठी बातें बनाकर अपनी माता को बहकादी। बन्धु श्री अपने मन में कहने लगी देखो जिनदत्ता ने मेरे से कैसा दगा किया मेरे को उसने ठगली म उसके बहकाव में आकर अपनी बेटी का ब्याह बुढे मे कर किया मेरी पुत्री कनकश्री रति के समान सुन्दरी को छोडकर वह बुढा खुंसड उस काली कु दर्शनी जिनदत्ता पर मुग्ध हो रहा है उस बुढे को बिलकुल भी तो लाज नहीं आती सच है कि यह सब काम की हा बिटम्बना है ।

श्योक—कामेन विजितो ब्रह्मा कामेन विजितो हरिः।
कामेन विजितो शम्भु शक्र, कामेन निर्जितः॥ ४॥

भा०—इस काम देवने ब्रह्मा विष्णु महादेव इन्द्र को भी जीत लिया मनुष्य चाहे कला कौशल मे कितनाही निपुण क्यों न हो उसको भी वह क्षण भर मे ही विकल बना देता है पण्डितों की बिम्बना कर डालता है धीरको अधीर बना देता है इस काम देव ने ही सेठ को विकल बना रक्खा है। बन्धुश्री बोली पुत्री अब तू किसी प्रकार की चिन्ता न कर मैं वहीं उपाय करूंगी जिस से तरी शोक मर जाय शोक के मरने के बाद फिर तू निश्चिन्त हो कर रहना, ऐसे सन्तोष मय वचन कह कर पुत्रीको सासरे भेजदी और आप पुन्य पाप को कुछ भी न गिनती हुई जिनदत्ता को मारने का उपाय ढूंढने लगी एक दिन बहुत सी स्त्रियों को साथ लिये शरीर मे हाड के गहने पहने हुये महा भयकर रूप धारण किये हुये एक कपालिक योगी

उन्होंने उत्तर दिया कि बाई तू स्वयं समझदार है एक के होते हुये हम दूसरी लडकी कैसे दे सकते हैं शोक समन्धी नाता बड़ा दुःख दाई होता है जिनदत्ता बोली माता पिताओं आप मेरी कोई चिन्ता न करें मैं सपथ पूर्वक (सोगन्ध खाकर) कहती हूँ कि एक बार तो भोजन जीमने के लिये घर पर आया जाया करूंगी और बाकी दिन रात थानक में रह कर धर्म ध्यान किया करूंगी घर बार से मैं अपना कुछ भी मतलब न रखूंगी कनक श्री ही घर की मालिकिनी बन के रहेगी माता पिता ने जिन दत्ता का कहा मान लिया और शुभ महुरत में कनक श्री का विवाह ऋषभदास के साथ कर दिया कनक श्री के घर आते जिनदत्ता थानक में रहकर धर्म ध्यान करती हुई समय बिताने लगी सेठ जी अपनी नव बधु कनक श्री के साथ आनन्द पूर्वक घर में रहने लगे किन्तु सेठ जी ने तीनों समय जिनदत्ता के पा बैठ कर धर्म ध्यान करने में किसी प्रकार की कमी न आने दी सेठ जी जिनदत्ता के पास बैठकर धर्म ध्यान करते देखकर कनक श्री शोक रूपी दाह मे जल उठी और अपने मन में कहने लगी कि सेठ जी का मेरे से प्यार नहीं है जो भी कुछ प्यार महो-ब्बत जिनदत्ता से ही है एक दिन कनक श्री अपनी माता के पास मिलने को गई तो उसकी माता ने पूछा कहो पुत्री तू सुख से तो रहती है न कनक श्री कपट पूर्वक बोली माता जी मेरे पति तो मेरे से बात तक भी नहीं करते वह तो हर वक्त मेरी शोक के पास पड़े रहते हैं आपने कुछ भी विचार नही किया जो कि शोक के होते हुये आपने मेरे को उस से ब्याहदी और अब आप मेरी सुख की बात पूछती हो मूंड मुंडाकर ज्यो-तिषी से जाकर तिथि वार नक्षत्र पूछना जैसे व्यर्थ है ठीक उसही प्रकार आप का भी मेरे से कुशलता के समाचार पूछने व्यर्थ हैं जिनदत्ता ने मेरे

पति देव को अपने पर लुभा रक्खा है हर तरह से उस पापिनी ने सेठ को अपने वस मे कर रखा है वे दोनों हर समय थानक में ही पडे रहते हैं एक भोजन जीमने के लिये तो वह घर पर आते हैं और मैं रात को भी अकेली घर पर पड़ी रहती हूँ। कनकश्री ने झूठी बातें बनाकर अपनी माता को बहकादी। बन्धुश्री अपने मन मे कहने लगी देखो जिनदत्ता ने मेरे से कैसा दगा किया मेरे को उसने ठगली म उसके बहकाव में आकर अपनी बेटी का ब्याह बुढे मे कर किया मेरी पुत्री कनकश्री रति के समान सुन्दरी को छोडकर वह बुढा कुंसड उस काली कु दर्शनी जिनदत्ता पर मुग्ध हो रहा है उस बुढे को बिलकुल भी तो लाज नहीं आती सच है कि यह सब काम की हा बिटम्बना है ।

श्योक–कामेन विजितो ब्रह्मा कामेन विजितो हरिः ।
कामेन विजितो शम्भु शक्र, कामेन निर्जितः ॥ ४ ॥

भा०–इस काम देवने ब्रह्मा विष्णु महादेव इन्द्र को भी जीत लिया मनुष्य चाहे कला कौशल मे कितनाही निपुण क्यों न हो उसको भी यह क्षण भर मे ही विकल बना देता है पण्डितों की विम्बना कर डालता है धीरको अधीर बना देता है इस काम देव ने ही सेठ को विकल बना रक्खा है । बन्धुश्री बोली पुत्री अब तू किसी प्रकार की चिन्ता न कर मैं वही उपाय करूंगी जिस से तेरी शोक मर जाय शोक के मरने के बाद फिर तू निश्चिन्त हो कर रहना, ऐसे सन्तोष मय वचन कह कर पुत्रीको सासरे भेजदी और आप पुन्य पाप को कुछ भी न गिनती हुइ जिनदत्ता को मारने का उपाय ढूढने लगी एक दिन बहुत सी स्त्रियों को साथ लिये शरीर मे हाड के गहने पहने हुये महा भयंकर रूप धारण किये हुये एक कपालिक

भीक्षा के लिये बन्धुश्री के घर पर आया योगी को देखकर बन्धुश्री मन में सोचने लगी कि मैंने योगी तो बहुत देखे हैं किन्तु सब इस के नीचे हैं यह चमत्कारी पुरुष है इस से ही मेरा कार्य सिद्ध होगा ये सोचकर अन्दर घर मेंसे बहुत बड़िया २ मेवा मिठाई ला योगी को भिक्षा मे दी और कह दिया कि अब तुम नित्य प्रति हर रोज मेरे घर आकर मनोज्ञ भोजन जीमा करना। अब योगी हर रोज बन्धु श्री के घर पर आकर मन चाहा भोजन जीमने लगा बन्धु श्री की सेवा भक्ति को देखकर एक दिन योगी बोल उठा—माता जी मेरे एक नही अनेक विद्या सिध्द हैं जो कोई तुम्हारा कार्य हो वह मुझसे कह देना मैं उसी समय तेरा कार्य कर दूगा जिसको कुछ दिया जावे भला वह सेवक रूप क्योंन बने कहा भी है कि—

श्लोक—को न याति वसं लोके, मुखेपिंडेन पूरितः।
मृदंगो मुख लेपेन करोति मधुर ध्वनिम् ॥ ५ ॥

भा०—मुख भरने 'खाने, को देने से कौन बस मेंनही होता देखो मृद गढोल के मुख पर आटा लगाने ढोल का मुख भरने से देखो कैसा मधुर शब्दो च्चारण करता है बन्धुश्री ने आखों में पानी भर कर कनकश्री और जिन दत्ता का सारा हाल कह सुनाया और कहा कि जैसे भी बने तुम अपनी शक्तिसे जिनदत्ताको मार दो वह पापात्मा योगी बोला माता जीतुम जरा धैर्य धारण करोमें इस कृष्ण पक्षकी चतुर्दशी को मशाण भूमि मे जाकर विद्या सिध्द कर के जिनदत्ता को मार डालूगा मेरे इस कथन का विश्वास करो ऐसे को जीव हिंसा का कुछभी [किंचित मात्रभी] भय नहीं है ...र न मैं जीव के मारने में कुछ पाप ही मानता हू। यदि मैं तेरे इस ...को न कर सका तो स्वयं अग्नि में कूदकर अपने प्राण खो दूगा

अब वह जिनदत्ता के मारने की प्रतज्ञा कर मशाण भूमिमें जाकर चोदस के दिन अखड मुरदाले उसके हाथ मे नगी तलवार बान्धकर मुरदा की पूजा कर रात्रिके समय मन्त्रजपकर वैताली विद्या [देवीं] की आराधना की मन्त्र के प्रभाव से खिची हुई वैता॰ीक विद्या देवी आई और उस मृतक शरीर मे प्रवेश होकर बाली कि कहो मेरे लिये क्या आज्ञा है। योगी बोला—कनकश्री की शोक जहा भी हो उसको वहीं मार कर आना तथास्तु कह देवी किलकार मारती हुई जहा जिनदत्ता थानक में पोषधब्रत लिये दैठी थी वहा पहुँची वहा जिनदत्ता के सम्यक्त्वरत्न के प्रभाव से तथा जिन शाभन के रक्षक देवताके प्रभा॰ से उस वैताली देवी का कुछ भी जोर नहीं चला हार मान कर वह वापिस मशाण भूमि में योगी के पास पहुँची योगी ने देवी को दो तीन बार जिनदत्ता को मारने के लिये भेजी किन्तु जिन धर्म की कृपा से देवी सती का बाल भी बाका न कर सकी चौर तीन प्रदक्षणा दे क्रोध में भरी हुई योगी के पास आई उसके भयकर क्रोव को देखकर योगी झट देवीके पैरों में पड गया और बोला माता मेरी तो रक्षा कर मैं तो नेरा सेवक हू देवी बोली मैं अपना भक्ष लिये कैसे जाऊगी क्या तो मेरे को भक्षदे नहीं तो मैं तेरे को मारूगी योगी कहने लगा माता उन दोनों में से जो दुष्ट है उसको मार कर अपनी तृप्तीकर अब वह देवी योगी के पास से चलकर अकेली सोती हुई कनक श्री के धर आदर तलवार से कनक श्री को मार लोहू लुहान कर योंगी के पास आकर कहने लगी मैं पापणी कनक श्री को मार आई हूँ और अब अपने स्थान को जाती हूँ यह कह कर देवी अपने स्थान की चली गई और योगी भी अपने घर को चला गया प्रातः काल होते ही बन्धु श्री प्रसन्न होती हुई अपनी पुत्री कनक श्री के धर को चल दी कि

पुत्री को जिनदत्ता के मरवाने का समाचार कह आऊ घर पर आकर दूर से क्या देखती है कि कनक श्री का मस्तक धड से अलग पड़ा और खून में लथ पथ होरही है अपनी पुत्री की यह दशा 'हालत, देख कर रोती चिल्लाती हुई गली में खड़ी होकर कहने लगी कि देखो रे गाम के लोगों पापनी जिनदत्ता ने सोत के द्वेष मे आकर मेरी पुत्री कनक श्रीं को तल-वार से मार दी है ऊपर से तो यह भगतन दीखती है मैं इस के कपट को कुछभी नहीं समझती थी धोखे से इसने मेरी पुत्री की मागणी कर ऋषभ दास से ब्याह करवा कर आज कनक श्री को इस पापनी ने मार कर हो छोर्डी सारे शहर मे जन २ के मुख से आवाज निकलने लगी कि पापनी जिनदत्ता ने कनदश्री कोमारदा। यह आवाज जिनदत्ता के कान में भी पहूँची, इधर ऋशभदास जिनदत्ता के पास पहूँचा और कहा सुभगे जो अपने पूर्व जन्म मे कर्म किये वे भला बिना भोगे कैसे मिट सकते हैं इन कर्मो को मेटने के लिये आपा यहा से चलें और समाधीगुत गुरु के पास जाकर दीक्षाले सेठ सेठनी दोनों गुरु के पास गये और जा दीक्षा धारण करी इधर बन्धु श्री बावली सी बन दरबार मे गई और राजा से पुकार करी श्री महा राज जिनदत्ता ने सपत्नी के द्वेष में आकर मेरी पुत्री कनक श्री को मार डाली इस बात को सुनकर राजा क्रोधमे भर कर सिपा हियों को हुक्म दिया कि जावो उस पापी ऋषभदास और उसकी घरवाली पापणी जिनदत्ता को पकड लाओ देखना उसके घर की वस्तुये कही इधर उधर न हो जावे घर की सब वस्तुओं को लूट लाओ आज्ञा प्राप्त होते ही सिपाही सेठ सेठानी को पकड़ने के लिये चलदिये। मार्ग मे शासन रक्षक देवता ने उनके पग स्तम्भन कर दिये पग स्थभन की और सेठ सेठानी की दीक्षा की बात राजा ने सुनी और बडा अश्चर्य पाया मन मे सोचने

लगा कि इसके लिये अब क्या किया जावे उधर शाशन रक्षिका देवी ने जन अप वाद मेटने के लिये योगी के पास जा उसकी मस्कें बाध शहर में लाई और कहा अरे पापी यह सारे तेरे ही कुकर्म हैं तू शहर में गली २ में अपने इस अपराध को स्वीकार कर। योगी देवी के मारे डर के शहर में जन २ के सामने कहने लगा कि इस में जिनदत्ता का कोई अपराध नहीं है मैं ने बन्धु श्री के कहने से वैताली देवी को बुलाई और जिनदत्ता को मारने भेजी किन्तु वह तो जैन धर्म के प्रसाद से बच गई और वह देवी आकर मेरे से बोली कि ला मेरा भक्ष [खाना] मैंने कहा उनमें जो पापनी हो उसको मार दे देवी गई और उस पापनी कनक श्री को मार आई,इस मे जिनदत्ता का कुछ भी अपराध नहीं है। इधर नगर रक्षक देवता वैताली देवी को पकड लाया और खूब उसको ताड़ना करी देवी ने बुढिया का रूप बनाकर शहर की गली २ मोहल्ले २ बाजार २ में खड़ी हो कर कहने लगी जिनदत्ता निर्दोष है कनदश्री ही पापिनी थी इसलिये मैंने उसको मार डाली हैं, योगी और देवी के कथन को सुनकर नगर के लोग कहने लगे कि जिनदत्ता बड़ी सती साध्वी निर्दोष स्त्री है राजा भी इस बात को सुनकर सिपाहियों को आज्ञा दी कि इस दुष्टा बन्धुश्री को गधेपर चढा कर नगर से निकालो राजा की आज्ञा से बन्धुश्री कीउल्टी मस्कें बान्ध कर गधे पर चढा कर नगर से बाहर निकाल दी। राजा और शहर के सब लोग जहा ऋषभदास और जिनदत्ता थी वहा आये देवताओं ने जिनदत्ता पर पंच वर्ण के फूलों की बारिस की और जय हो जिनदत्ता की बड़ी मधुर ध्वनी से देव दुंद भी बजाई और सिपाहियों के जो पगस्थंभन कर रक्खे थे वह सब खोल दिये, यह अपूर्व चमत्कार देख कर राजा अपने मन ही मन में कहने लगा कि जिनधर्म को छोड़ कर अन्य धर्म में इतना चमत्कार एव प्रभाव नहीं है, राजा ऋषभदास और

भा०—हे गुरू देव हमारी आयु ऐसे नष्ट होती जा रही है जैसे कि कच्चे घड़े में डाला हुआ पानी यौवन जवानी की शोभा हमारी बिजली के तथा चपलाके समान क्षणिक (नाशमान, है वृद्धावस्था हमारे सामने ऐसे दौड़ी हुई आरही है जैसी सिंहनी हो इन भयों से डर कर ही हमने आपका शरणा लिया है अथवा यों कहिये कि संसार के भयों से त्रसित हो यानी डर कर ही हमने वैराग्य का आश्रय लिया है राजा मन्त्रि सेठ सेठानी और बहुतसे नगर निवासियों के सयमलेने और धर्म के अपूर्व चमत्कार को देखकर बहुत से भव्य जीवों ने श्रावक श्राविका के व्रत धारण किये तथा कितने कों तो सम्यक्त्व रत्न प्राप्त किया मित्रश्री सेठ अर्हदास जी से बोली स्वामी नाथ यह दृश्य मैंने अपने नेत्रों से देखा था इसलिये ही मेरे को दृढ़ सम्मक्त्वरत्न की प्राप्ती हुई है। अर्हदास बोला-भद्रे जो तूने आखों से देखा है मैं उसका विश्वास करता हूँ उसको चहता हूँ और उस में रुचि करता हूँ सेठ की अन्य स्त्रियोंने भी मित्रश्री की बात की प्रसंसा की किन्तु छोटी स्त्री कुन्दलता कहने लगी कि यह सब झूठ है मैं इस पर श्रद्धा नहीं करती और न बहन मित्र श्री का बात काही आदर करती हूं यह तो यों ही झूठी सच्ची बात बना २ कर अपना लबाड़ पना नाम सार्थक करना चाहती है कुन्दलता की बात राजा मन्त्रि और चोर ने भी वृक्षापर छुपे हुये ने भी सुनली। राजा ने मन में विचारा कि देखो यहकैसी पापनी है जो सत्य को भी असत्य कह रही हैप्रातः काल होते ही इसे गधे पर चढवा कर शहर से बाहिर निकल वादूंगा यह किसी कीएक बात भी सच्ची नहीं मानती चोर अपने मन में कहने लगा कि दुष्ट गुणों को छोडकर अब गुणों की तरफ ही दौडा करते है अर्थात् अब गुण ही

ग्रहण किया करते हैं—

श्लोक—मुक्ताफलैः किं मृग पक्षियांच मिष्टान्न पानंकिमु

गर्दभानां। अन्धस्य दीपो बधिरस्य गीतं मूर्खस्य किं धर्म कथा प्रसंगः ॥ ॥ ६ ॥

भा०—मृग आदि को मोती देना गधे को खाने के लिये मिठा अन्न देना अन्धे को दीपक दीखाना बहरे को खुश करने के लिये सुन्दर बढ़िया २ गीत सुनान जैसे व्यर्थ हैं ठीक उसही प्राकर मूर्खो के आगे धार्मिक कथा का कहना व्यर्थ है विवेकहीन मनुष्य गुण को ग्रहण न कर दोषों को ही ग्रहण किया करके हैं जैसे स्तनो थनों पर लगी हुई जौंक दूध को न पीकर खून को ही चूसा करती है। अर्हदासने अपनी दूसरी स्त्री चन्दनश्री से कहा प्रिये तुम भी अपनेदढ सम्यक्त्व रत्न प्राप्ती की कथा सुनाओ। पतिदेव के बचन सुनकर चन्दन श्री कहने लगी—

❀ २ चन्दन श्री का—कथा कहना ❀

कुरुदेश में हस्तिना पुर एक अति रमणिक नगर है वह मेरी जन्म भूमि का नगर है उस नगरी में सुभागी नाम का राना था उसकी राणी का नाम भोग वती थाउस नगरी में गुण पाल नामका सेठ रहताथा बड़ा ही धर्मात्मा एव सम्यक्त्व रत्न का धारक था उसकी घर-वाली का नाम गुण वती था सेठानी पतिदेव की आज्ञा में चलने वाली और वह स्त्री के सर्व गुणों से युक्त थी उसी नगरी में एक सोमदत्त नाम का माह दरिद्री ब्राह्मण रहा करता था उसकी ब्राह्मणी का नाम सोमिला था और उसके एक पुत्री थी जिसका नाम सोमा देवी था एक समय सौमिला विमार हो गई और उस पिमारी में ही वह काल के गाल में चली गई ब्राह्मणी

के मरजाने से ब्राह्मण देवता बड़े दुःखी हुए पहले तो घरवाली पर ही पुत्री के पालन पोषण का भार था अब सारा भार सोमदत्त परही आपड़ा एक दिन वह दुखित ब्राह्मण वन [जंगल] की ओर चल दिया तो वहा जंगल में वृक्ष के नीचे बैठे उसको एक मुनिराज से भेट होगई उनके उदास चेहरे को देखकर साधुजी बोले —प्यारे भाई तू इतना दुखित क्यों दीख रहा है? सोमदत्त ने अपने दुःख की सब गम कहानी गुरुदेव को आद्यो पान्त कह सुनाई गुरु बोले भाई—

दोहा— राजा राणा छत्र पति' हाथी के असवार। मरना सब को एक दिन, अपनी २ बार ॥१॥ जाया ते [illegible] सही, फुले सो कुमलाय। ऊगे सो [illegible] आथमे चिणे सोय ढय जाय ॥ २ ॥

भाई जो पैदा उत्पन्न होगा वह एक न एक दिन अवश्य मृत्यु के गाले में जावेगा चाहे कितना भी प्रयत्न करो किन्तु इस पापी काल को तो टाल है ही नही सबको इस का ग्रास बनना पड़ता है संसार मे हरएक रोग की औषधियां हैं किन्तु काल बली की तो कोई औषधी है ही नही

सवैया—दरद का इलाज कीजे वैद्य को बुलाय लीजे रोगी का इलाज कीजे दीजे पाणी दाल का राड़ का इलाज कीजे झगड़ा मिटाय दीजे राजा का इलाज कीजे दीजे लोभ मालका। भाई का इलाज कीजे मिठा वैन बोल लीजे दुर्जन का इलाज कीजे, दीजे ओट ढाल का कहे कवि

माधवदास कहाँ लग वखान करूं सब का इलाज है, पर एक इलाज नही काल का ॥ ३ ॥

दूसरे तुमने पहले जन्म मे कुछ ऐसे पाप कर रक्खे हैं जिसके कारन दरिद्रताने भी तेरे घर में डेरे जमा रक्खे हैं संसार में विना धन के ममुष्य दुखी रहता है, विना धन के मनुष्य कहीं भी जाओ बस उसकी कोई बात भी नहीं पूछता—

सवैया—दामही मे आठोंयाम, बुद्धि का प्रकाश होत दामही से सब ठोर होंत बड़ो नाम है दाम ही से भैय्या बन्धु भाय सब रजु होत, दाम ही मे वन हूं में होत सब काम है। दाम ही से सभा माही आदर को पावत है, दाम ही मों घर मॉही होत विराम है। कहे कवि हेम यह नीके के विचार दखो मेरे भाई बीसों बिश्वा दामही में राम है

प्यारे बन्धु पाप और दरिद्रता से छुटकारा पाने का उपाय यह है कि तुम इस लोक और पर लोक में सुख देने वाले धर्म को करो धर्मसे ही तुम्हारा बेडा पारहो जावेगा और तुम्हारे सब दुःख मिटजावें

श्लोक—यौनमं जीवितं चित्तं छाया लक्ष्मीश्च स्वामिता। चचलानि षडेतानि, ज्ञात्वा धर्म रतो भवेत् ॥ ४ ॥

भा०—यौवन जीवन चित छायालक्ष्मी स्वामी पना ये छऊ चंचल हैं कर सज्जन पुरुष का कर्तव्य है कि धर्म मे अपने चित

श्योक-धर्मोऽयं धन वल्लभेषु धनदः कामार्थिनाँ कामदः,
सौभाग्यार्थिषु तत्प्रदः किपरम् पुत्रार्थिनां पुत्रदः ।
राज्यार्थिष्वपि राज्यदः किमथवा नाना विकल्पैर्नृणाम्
तत्किम् यज्ञददाति वांछित फलं स्वर्गा पवर्गावधि ॥ ६ ॥

भा०—धर्म के प्रभाव से धन चाहने वालों को धन की प्राप्ती होती है काम पुरुषार्थ के चाहने वाले को काम पुरुषार्थ की प्राप्ती होती है सौभाग्य के अभिलाषियों को सौभग्यता की पुत्र के इच्छुकों को पुत्र की, तथा राज्य के चाहनेवालों को राज्य की प्राप्ती होती है, धर्मात्मा पुरुषों को जब कि धर्म के करने से स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ती हो जाती है तो और वस्तुओं का पाजाना कौनसी कठिन बात है गुरु देव के उपदेश को श्रवण कर सोमदत्त ने श्रावक के बारा व्रत धारण करलिये और नयतत्व का ज्ञान सीख लिया' अब सोमदत्त प्रति दिन सम्यक्त्व रत्न को उज्वल बनाने वाली धार्मिक कथा सुनने लगा। एक दिन नगर सेठ गुणपाल ने सोमदत्त को धर्म करते देख लिया सेठने उसको अपना स्वधर्मी भाई समझ कर अपने घर ले गया और भोजन जीमाकर रहने के लिये मकान दिया और खाने खरचने के लिये इतना धन दिता कि पडित खूब बैठा खावे और मौज उडावे। सामयिक सम्बर दया पोसे में अपने अमूल्य समय को बिताता हुआ अपनी पुत्री सोमा की पालना करता हुआ आनन्द से रहने लगा महा पुरुषों के ससर्ग से कौन मनुष्य गुणी और पूज्यनीय नही होता गुरु देव के उपदेश से सोमदत्त को धर्म का लाभ मिला गुण वान बना जिस मे सेठने उसको आश्रय दिय सच है कि धर्मात्मा पुरुषों की संगति से सब कोई महत्व को प्राप्त होते हैं गलियों मोरियों का गन्दे से गन्द पानी भी

जब नालों नालों नदियों द्वारा गगाजी में जाकर मिल जाता है तो उस जल को बड़े से बड़े आदमी भी मस्तक पर चढाने लगजाते हैं। सोमदत्त आपभी धर्मात्मा बन गया और अपनी पुत्री सोमा को भी धर्म के रग में रगदी एक दिन सोमदत्त ने अपनी आयु निकट आई जान कर बोला सेठ जी ? आपकी छत्र छाया में रहकर मैंने अपने जीवन को सुधारलिया अब मेरी परलोक यात्रा निकटही है इसलिये आप मेरे को अन्तिम समय तक धर्म का शरण देते रहना और मेरी पुत्री सोमा का विवाह किसी श्रावक व्रतधारी ब्राह्मण के साथ करना वैसे ब्राह्मण के साथ . . . . . .
सेठ बोला पण्डितजी? आप कोई चिन्ता नकरें मैं आपकी आज्ञा का पूरण रूप से पालन करूगा यह कह सेठ ने पण्डितजी को धर्म का शरण देना शुरुकिया पण्डितजी भी समाधी सहित बाल पण्डित मरण को प्राप्त हो स्वर्ग लोक को गया सोमदत्त के मरने के बाद सेठने सोमा का निज-पुत्री से भी अधिक स्नेह के साथ पालन पोषन किया जब सोमा वर योग्य हो गई तो सेठजी किसी श्रावक व्रत धारी ब्रह्मण के लड़के की तालास में रहने लगे क्यों कि श्रावक धर्म का धारी सद् गृहस्थ स्वर्ग और मोक्ष का अधिकारी होता है –

सवैया—जीव अजीव को जानत है पुनि बन्ध के भेद में सपूरण ज्ञाता। आश्रव पापको त्यागे सदा और पुन्य की रीत में विज्ञ कहाता। सम्बर निरजरा मोक्ष को धारत, धर्म के रंग में रंगा रहे दिन राता। कृष्ण कहे जिनराज के श्रावक ऐसे गुण अमरापद पाता॥ ७॥

उसही नगरी में एक महा धूर्त रुद्रदत्त नाम का ब्राह्मण पुत्र रहता था वह सातों कु व्यसनों का सेवन करने वाला था एक दिन किसी कार्य को जाती हुई सोमा को देख लई रुद्रदत्त ने अपने प्यारे इष्ट मित्रों से पूछा कि यह किं कन्या है उत्तर मिला कि यह पं० सोमदत्त की पुत्री है और सेठ गुणपाल के उपर इसका पालन पोषन का भार है रुद्रदत्त बोला बस भाइयों मै तो इसके साथ ही अपना विवाह करा ऊ गा रुद्रदत्त के मित्र ने कहा अरे तू तो बड़ा मूर्ख है जो बिना सिर पैर की बातें करता है मागणी के लिये तो एक नही अनेको दिग्गज ब्राह्मण भी आ चुके हैं किन्तु सेठ ने तो किसी की भी नही सुनी वह तो श्रावक व्रत धारी ब्राह्मण के साथ ही सोमा काबिवाह करेगा तू तो जुवेका खेलने वाला मास मद्यका खाने पीने वाला पराई स्त्री के साथ दुरा चरण का सेवन करने वाला वेश्या गामी है जो अव गुण न हों वह सब तेरे मे भरे पड़े हैं भला सोच विचार के तो देखले कि तेरे में मनुष्य पणे के कौन से गुण हैं कि जिन को देखकर गुणपाल सोमा को तेरे से ब्याह दे तू तो गुण धर्म और बुद्धि से भी हीन है धर्म बुद्धि और गुण ही न मनुष्य को तो मृग की उपमा भी नहीं दीजाती एक बोला भाई यह रुद्रदत तो मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति मनुष्य का शरीर पागयातो क्या हुआ यह तो मृग के समान अपने जीवन को बीता रहा है तब दूसरा मृग का पक्ष लेकर बोला भाइयो

श्लोक—स्वरे शीर्ष्यजने मंसं त्वक् च ब्रह्मचारिणो शृंग योगीश्वरं दधा, मृग स्त्रीषु लोचने ॥ ८ ॥

भा०—मृगकी नाभी सुंडी मे से सोने से भी अधिक मूल्य वाली कस्तूरी निकलती है पापात्मा मास भक्षी मृग का मास खाकर प्रसन्न चित रहते हैं

. मृग की मृग छाला पर बैठकर ब्रह्मचारी लोग भगवत् भक्ति में लौलीन हो जाते हैं योगीजन मृग के सींग को लेकर गली २ में बजाते फिरते रहते हैं सुशिला स्त्री को मृग के नेत्रों की उपमा दीजाती है—

सवैया—कहत कुरंग बैन खान हूं में कस्तुरी की, करत तिलक होत सुगध भारी है। लोचन की उपमा सो लागत हमारी शुभ, बाजत हैं सिंगी तब नाद होत प्यार है माँस ही सो काम आवे रहूं मैं अटवी बीच, खाल को सन्यासी योगी बिछावे जहारी हैं। और भीअनेक गुण मोय में गणाधिपति निगुणी को उपमा न लगत हमारी है ॥ ६ ॥

तेरे जैसे बुद्धि और गुणहीन मनुष्य को गऊमाता की उपमा भी नहीं दी जा सकती दूसरा बोला "मानुष्य रूपेण धेनुश्चरन्ति,, जैसे गाय जंगल में जाकर जंगल का घास फूस खाकर अपना पेट भर लेती है ठीक इसही प्रकार यह मूर्ख भी धर्म कर्म से रहित अपने पेट भरने के सिवाय और कुछ नहीं जानता। तीसरा बोला भाई ? गाय में तो बहुत गुण हैं किन्तु इस में तो एक भी गुण नहीं जरा गऊ माता के गुण तो सुनिये—

श्लोक—तृणमपि दुग्धं धवलं, छगणं गेह मंडनं।
रोगा प्रहारी मूत्रं, पुच्छंसुर कोटि संस्थानम् ॥ १० ॥

भा०—गऊ जंगल का हरा सूखा घास फुस खाकर मालिक को अमृत के समान उज्वल दूध देती है जिस दूध में से इन्द्रियों को पुष्ट करने वाला (ताकत का देने वाला) दही मक्खन और घृत निकलता है गऊ के

गोबर से घर लीप पोत के शुद्ध किया जाता है गौ मूत्र से शरीर के अनेक रोग मिटते हैं गो पुत्र (बैल) खेती बाड़ी के काम आते हैं और एक नही सेकड़ों मन बोझा ढोते हैं , कहा यह अधर्मी और कहा गौ माता जिसम एक नही अनेक गुण भरे पड़े हैं –

सवैया–सुरभी कहत तृण खाय के मैं पेट भरूं मालिक को दे खीर,अमृत जहारी है दधी लूणिघृत और होत है अनेक रस, पंचइन्द्रि पुष्ट होय खावे नर नारी है छाण हीते होत हेर ताहिते लीपे घर पुत्र मुझ खेती करे भार पाड़े भारी है। और भी अनेक गुण मोय में गणाधिप, निगुणी को.उपमा न लगत हमारी है ॥ ११ ॥

इस गुण धर्म बुद्धि हीन को तो बृत्त की भी उपमा नहीं दी जा सकती चौथा बोला–भाई यह तो मनुष्य रूपेण भवन्ति बृत्त: मनुष्य देह पाकर जंगल में उगनेवाले बृत्त के समान है पाचवा बोला भाई–तुमने बृत्त के गुण ही नही जाने जो तुमने झटपटही इसकी बृत्त के साथ तुलना की जरा वृत्त के गुण तो सुनिये–

श्लोक–छाया कुर्मो वयं लोके, फलं पुष्पाणि ददाम्यऽहं। पक्षिणां सर्वदाधारा, गृह द्वारं च होते ॥ १२ ॥

भा०– बृत्त गर्मी के सताये हुए को छाया देकर मार्ग की सब थकावट दूर कर देता है, अनेका सुमधुर मीठे रसदार फल फूल देता है, पत्तियों का जीवना धार होता है बड़े २ ऊचे महल महलायतों मे बृत्तों की लकड़िया

के मतीर और कढ़ियां लगाई जाते हैं, किन्तु इसमूर्ख का तो कोई भी अग किसी के भी प्रकार के काम नही आता । पाचवा बोला मनुष्य रूपण भवन्ति धुलिश्च पुंज' यह मिट्टी [धूल) के समान है छठा बोला भाई ? तुम मट्टी के गुण को नही जानते जो झट से इस अजानी अधर्मी को मिट्टी की उपमा दे रहे हो जरा मिट्ट के गुण तो सुनिये—

श्लोक—कारयामि शिशु क्रिड़ाँ, पंखना शंकरे मिवा ।
मतो जनो निरज पर्वो,लेखे चिप्त' फलं प्रदः ॥ १३ ॥

भा०— धुल में खेलकर बालक अपना मनोरजन करते हैं, मिट्टी से बडीर हवेलिया बनती हैं बगी पानट्टे पर लिखने के बाद धुल को गेर कर उनसे अक्षरों को सुखाते हैं और मिट्टीअनेक काम आती है किन्तु यह यह मूर्ख तो किसी धर्म कर्म के काम का है ही नही सातमा बोलउठा—अरे भाइयो मनुष्य रूपेण भवन्ति श्वानम् यहतो मनुष्य रूप मे एक तरह का कुत्ता है आठमाबोला—भाई तू कुत्ते के गुण को नहीं जानता जो तूने इस अजानी अधर्मी को कुत्ते की उपमा दे दी। जरा कुत्ते के गुण सुनो तो सही—

श्लोक—बह्वाशी स्वल्प संतुष्टः सु निद्रो लघु चेतनः ।
स्वामी भक्तश्चशूरश्च षडेते शुनो गुणाः ॥ १४ ॥

भा०—कुत्ता बहुत खाने वाला होने परभी चार अंगुल के टुकड़े को खाकर अपनापेट भरलेता है जोर की निद्रा आ रही हो जराने खुड़के को सुनकर फौरन जाग जाता है चोर को घर मे नही घुस ने देता मालिक यानी स्वामी का सच्चा सेवक एव परम भक्त होता है और शूरवीर ऐसा होता है कि मालिक के एक जरा से इशारेपर सिंह की छाती पर भी जा चढ़ता है

गोबर से घर लीप पोत के शुद्ध किया जाता है गौ मूत्र से शरीर के अनेक रोग मिटते हैं गो पुत्र (बैल) खेती बाड़ी के काम आते हैं और एक नहो सेकड़ों मन बोझा ढोते हैं, कहा यह अधर्मी और कहा गौ माता जिसमे एक नहीं अनेक गुण भरे पड़े हैं –

सवैया–सुरभी कहत तृण खाय के मैं पेट भरूं मालिक को देउं खीर,अमृत जहारी है दधी लूणिघृत और होत हैं अनेक रस, पंचइन्द्रि पुष्ट होय खावे नर नारी है छाण हीते होत हेर ताहिते लीपे घर पुत्र शुभ खेती करे भार पाड़े भारी है। और भी अनेक गुण मोय में गणाधिप, निगुणी को उपमा न लगत हमारी है ॥ ११ ॥

इस गुण धर्म बुद्धि हीन को तो वृक्ष की भी उपमा नहीं दी जा सकती चौथा बोला–भाई यह तो मनुष्य रूपेण भवन्ति वृक्षः मनुष्य देह पाकर जंगल में उगनेवाले वृक्ष के समान है पाचवा बोला भाई–तुमने वृक्ष के गुण ही नही जाने जो तुमने झटपटही इसकी वृक्ष के साथ तुलना की जरा वृक्ष के गुण तो सुनिये–

श्लोक–छाया कुर्मो वयं लोके, फलं पुष्पाणि ददाम्यऽहं।
पक्षिणा सर्वदाधारा, गृह द्वारं च हेतवे ॥ १२ ॥

भा०– वृक्ष गर्मी के सताये हुए को छाया देकर मार्ग की सब थकावट दूर कर देता है, अनेका सुमधुर मीठे रसदार फल फूल देता है, पक्षियों का जीवना_धार होता है बड़े २ ऊचे महल महलायतों में वृक्षों की लकडिया

के सतीर और कड़िया लगाई जात है, किन्तु इसमूर्ख का तो कोई भी अग किसी के भी उपकार के काम नही आता । पाचवा बोला मनुष्य रूपेण भवन्ति धुलिश्च पु जः यह मिट्टी [धूल) के समान है छठा बोला भाई ? तुम मट्टी के गुण को नही जानते जो झट से इस अज्ञानी अधर्मी को मिट्टी की उपमा दे रहे हो जरा मिट्ट के गुण तो सुनिये—

श्लोक—कारयामि शिशु क्रिड़ॉ, पंखना शंकरे मिवा ।
मतो जनो निरज पर्वो,लेखे त्विम फलं प्रदः ॥ १३ ॥

भा०— धुल में खेलकर बालक अपना मनोरजन करते हैं, मिट्टी से बडीर हबेलिया बनती हैं बही पानड़े पर लिखने के बाद धुल को गेर कर उनसे अक्षरों को सुखाते हैं और मिट्टीअनेक काम आती है किन्तु यह यह भूर्ख तो किसी धर्म कर्म के काम का है ही नही सातमा बोलउठा—अरे भाइयो मनुष्य रूपेण भवन्ति श्वानम् यहतो मनुष्य रूप में एक तरह का कुत्ता है आठमाबोला—भाई तू कुत्ते के गुण को नहीं जानता जो तूने इस अज्ञानी अधर्मी को कुत्ते की उपमा दे दी। जरा कुत्त के गुण सुनो तो सही—

श्लोक—बह्वाशी स्वल्प संतुष्टः सु निद्रो लघु चेतनः ।
स्वामी भक्तश्चशूरश्च षडेते शुनो गुणाः ॥ १४ ॥

भा०—कुत्ता बहुत खाने वाला होने परभी चार अगुल के टुकड़े को खाकर अपनापेट भरलेता है जोर की निद्रा आ रही हो जरासे खुड़के को सुनकर फौरन जाग जाता है चोर को घर में नही घुस ने देता मालिक यानी स्वामी का सच्चा सेवक एव परम भक्त होता है और शूरबीर ऐसा होता है कि मालिक के एक जरा से इसारेपर सिंह की छाती पर भी जा चढता है

इत्यादि और भी बहुत से गुण कुत्ते में भरे पड़े हैं-

सवैया-श्वानतो कहत भक्त स्वामी को हूं निशदिन निद्रा आवे अल्प मोय अधिक हुंश्यारी है। चारही अंगुल टूक रोटी खाय काढु दिन संतोष करूं मैं मन, चोर करूं जहारी है। उद्यमी हूं निश दिन, आलश्यन अंग मुझ पहूंच देखी काम करु अधिक लाचारी है। और भी अनेक गुण मोय मैं भरे पड़े निगुणी को उपमान लागत हमारी है

रुद्रदत्त बोला भाइयो तुमने तो मेरी पेट भर खूब निन्दा करली पर मूर्खो तुमको क्या मालूम है कि मेरे मे कितने गुण भरे पड़े हैं तुम मेरी बुद्धि का चमत्कार देखना कि मैं सोमा से ही विवाह करके ही दम लूगा यह कह रुद्रदत्त उसी समय धन कुमाने के लिये पर देश को चला गया और काशी देश बनारसी नगरी मे जाकर खूब धनोपार्जन किया और वहीं जिनचन्द्र गुरु के पास जाकर बनावटी श्रावक बन गया जैन धर्म की सब क्रिया कर्म सीख लिये अब रूद्रदत्त धन माल लेकर अपनी नगरी को आगया पास मे धन होने से सारी नगरी मे वह प्रसिद्ध हो गया उसके कुटुम्ब के सब लोग बाग हर समय उसके पास पडे रहने लगे संसार मे जिसके पास धनहो जाता है उसके सबदास बन जाते हैं इस ससार मे धन की इज्जत है मनुष्य की नही-

श्लोक-इहलोके हिधनिनां परोऽपि स्वजानायते।
स्वजनोऽपि दरिद्राणां सर्वदा दुर्जनायते ॥१६॥

भा०- इस ससार में धनियों के दूसरे जन भी आकर दास बन जाते हैं और दरिद्रों (कगालों) के अपने भी हों वह भी दुश्मन बन जाया करते हैं

श्लोक—यस्यार्थास्तस्य मित्राणि, यस्यार्थास्तस्य बाँधवाः यस्यार्थाः स पुमाॅ लोके, यस्यास्र्थाः सच पँडितः ॥१७॥

भा०-ससार मे धन वानों के ही मित्र भाई बन्धु हुआ करते हैं और धन वान ही पडित चतुर माने जाते हैं रूद्रदत्त प्रति दिन थानक में आकर सामायिक किया करता था एक दिन उसको थानक में बैठा हुआ सेठ गुणपाल मिल गया तो पूछने लगा कि भाई आप कहा के रहने वाले हो और कौन से गुरू से आपने धार्मिक क्रियायें सिखी है वह कूड कपट का भडार रूद्रदत्त बोला सेठ जी आपकी इसही नगरी का रहने वाला एक सोम शमा नाम का ब्राह्मण रहता था मैं उसका पुत्र और सोमिला क अग जात हूँ मैं अपने माता पिता का बड़ा प्यारा पुत्र था माता पिता की मृत्यु हो गई जिससे मेरा धर पर रहना कठिन होगया धर पर जी नही लगा इसलिये मैं घर बार को छोड कर परदेशमें निकल गया था बनारसी नगरी मे अठाई २ [आठ २ दिन के उपवास से पारणाक रने वाले ' श्री जिनचन्द्र, गुरू से मेरी भेंट होगई, उनके पासही मैंने जैनधर्म की शिक्षायें प्राप्त है और उनके पासही मैंने कुछ कालके लिये ब्रह्मचर्य ब्रत भी धारण कर लिया था वहा गुरू देवोंकी कृपासे मैंने खूब धन पैदा किया और अब मैं अपने घरको आगया हूँ त्रिकाल शुद्ध सामायिक करता हू। गुणपाल रुद्रदत्त के कपट को न समझ बोला भाई ब्रह्मचारीजी ? मेरे यहा एक ब्राह्मणकी एक बड़ी सुयोग्य कन्या है जिसका नाम सोमा देवी है मैं यह चाहताथा कि कोई जैनी पडित मिले और मैं उस कन्या का विवाह

उस से करदू सो अब आप बतलावें कि आप ब्याह करना चाहते हो य नहीं या सारी उम्र ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहते हो रूद्रदत्त बोला सेठजी मेरा विवाह कराने का विचार नही है क्यों कि म स्त्रियो को महा भयकर विष के समान समझता हूँ–

श्लोक— स्त्रियो हि मूलं निधनस्यपुंसः, स्त्रियो हि मूल व्यसनस्य पुंसः। स्त्रीं हि मूलं नरकस्य पुंसः, स्त्रियो हि मूलंकल्हस्य पुंसः ॥ १८ ॥

भा०–पुरुषों को स्त्रिया ही मृत्यु का द्वार दिखाती है व्यसनो मे फसाती है नरक मे पहूँचाती है स्त्री ही नाना प्रकार के क्लेश का कारण है, ऐसा कौनसा दुःख है जो पुरुषों को स्त्रियों से प्राप्ती न हो–

श्लोक–स्त्रियोहि निन्द्यतॉ लोके, स्त्रियः प्रीति विनाशिकाः पाप बीजं कले मुलं, धर्मस्य नाशिका स्त्रियः ॥ १९ ॥

भा०–स्त्रिया निन्दा पात्रहै प्रीति का नाश करने वाली पाप का बीज, कल्ह का मूल हैं यह सब धर्म कर्म को नष्ट करनेवाली है–

**श्लोक–विलीयते घृतं यद्व–दग्नेः ससर्गस्तथा।
नारी संसर्गतः पुंसोःधैर्य नश्यति सर्वथा ॥२०॥**

भा–जैसे अग्नि से संसर्ग से घृत नष्ट होजाता है ठीक उसही प्रकार स्त्री की सगति से पुरुष का धन धैर्य सब नष्ट हो जाता है जिसके गले में कालकूट विष भराहूआ है वह महादेवभी उस विषसे विचलित नहुये नही हुये किन्तु स्त्रियों के सामने तो उनको भी हार माननी पड़ी इसलिये मैंस्त्र

रूपी विष को ग्रहण नहीं करना चाहता बिबाह करने से ससार में रुलना पड़ता हैऐसे दु ख दायक बिबाह के जालमें मैं भला क्यों फंसु। गुणपाल कहने लगा में तुमको श्रावक समझकर आग्रह पूर्वक कहता हू कि तुम मेरी बातको मानलो और सोमा से बिबाह करवालो रुद्रदत्त बोला—सेठजी स्त्री के ससर्ग से मेरी सिद्धि अजन मन्त्र तन्त्र कला कौशल आदि सब नष्ट हो जायेंगे। निदान सेठ गुण पालने बडे आग्रह के साथ सोमा का विवाह बड़े महोच्छव पूर्बक रुद्र दत्त के साथ कर ही दिया, कन्या दान में दिल खोलकर माल दिया। अब रुद्रदत्त सोमा को लेकर घर पर आया और घर आते ही सब कर्म धर्म को खू टी पर टाग दूसरे दिन ही विबाह कगन पहने हुए अपने मित्र जुवारियों के पास गया और कहा देखो मैंने जो तुम्हारे सामने सोमा से विवाह करने की प्रतिज्ञा की थी वह पूरी करदी है अर्थात् अब मेंने सोमा से विवाह कर लिया है। सब जुवारी मित्रों ने मिलकर रुद्रदत्त की पेट भर प्रशसा की। यह वह बात हुई कि जैसे ऊट के व्याह मे गधा गीत गाने के लिये आया तो गीत द्वारा ऊट के रूप की सराहना की। गधे के गीत को सुनकर ऊट ने कहा देखो भाई यह गर्दभराज कितने सुन्दर सुहाबने गीतों से आकाश मण्डल को गु जा रहा है। जुवा खाने से चलकर वह अपनी पहली प्यारी बल्लभा, वसुमित्रा, वैश्या की पुत्री [कामलता] के पास पहुँचा। वह वैश्या कामी पुरुषों को वश करने में अति चतुर थी वह रुद्रदत्त कामान्ध बना हुआ प्रतिदिन कामलता वैश्या के घर आने जाने लगा और जो घर में धन था वह लुटाने लगा। गहना गू ठी भी ले जाकर देने लगा कहा तक कहिये कि खान पान भी वह सब वहीं करने लगा। रात दिन वेश्या के घर पर ही पड़ा रहने लगा—

श्लोक—जननी जनको भ्राता, तनय स्तनया स्वसा । न
सन्ति वल्लभास्तस्य, गणिका यस्य वल्लभा ।२१।

भा०—वेश्यागामी को माता पिता बहन भाई बन्धु स्त्री पुत्र पुत्री इतने प्यारे नहीं होते जितनी कि उनको वेश्या प्यारी होती है ।

श्लोक—लोभ युक्ता गुणैर्मुक्ता, रक्तं ऽसौ जीवहारिणी । त्याज्या
वेश्या बुधै र्निन्द्या, विष मिश्रं जलं तथा ॥२१॥

भा० विद्वानों द्वारा निन्दनीय लोभादि अनेक अवगुणों की खान ज्ञानादी गुण रहित खूनके चूसने वाली जीवन को नष्ट करने वाली बेश्या चतुर मनुष्य ऐसे छोड देता है जैसे जहर मिले हुए पानी को किन्तु जो कामान्ध हो जाते हैं उनसे वह नही छोडी जाती । सोमा को भी मालूम हो गया कि रुद्रदत्त सातों व्यसनो का सेवन करने वाला है सोमा मन में सोंचने लगी कि मेरे लिये ही इसने कपट से श्रावक की क्रिया सिखी थी यदि मेरे धर्म पिता सेठ गुणपाल को इस का कपट मालूम हो जाता तो वह मेरा विवाह इसके साथ न करते अब क्या होता है । सोमासती रुद्र दत्त के घर को छोडकर अपने पिता गुणपाल के घर पहुँची और माता पिता [गुणपाल और गुणवती] के सामने खूब फूट २ कर रोने लगी अब उस वेचारी के पास रोने के सिवाय और था भी क्या ? सेठ सेठानी ने धैर्य [तसल्ली] देकर पूछा पुत्री क्या बात है तू रोती क्यों है तेरे पर यह एक दम विपत्ति का पहाड़ कैसे टूट पडा और प्रथम दिन तेरे साथ उस रुद्र दत्त ने क्या वर्ताव किया ? सोमा ने रुद्रदत्त का सब समाचार कह सुनाया और साथ मे यह भी यह भी कहा कि पिता जी यह सब मेरे

कर्मों का फल है जो मैंने पूर्व जन्म में अशुभ कर्म कर रखे थे भला वह बिना फल दिये कैसे छूट सकते हैं। सेठ कहने लगा पुत्री ! अब तू धैर्य का ही आश्रय ले और समता से अपने दिन पूरे कर अब यह कलियुग निकट आया ही समझ कि जिसके कारण से रुद्रदत्त ने मेरे से इतना कपट किया। इस कलियुग में जो न हो जाय वही थोड़ा है कलियुग में क्या २ बातें होती हैं उनको सुन—

श्लोक—लक्ष्मीः लक्षण हीनेषु, कुलहीने सरस्वती। कुपात्रे रमते नारी, गिरौ वर्षति माधवः ॥२३॥

भा०-मूर्ख से लक्ष्मी प्रसन्न होती है और कुल हीन नीच जाति] से सरस्वती प्रसन्न रहती है। दुष्टों से स्त्रिया प्रेम करती हैं मेघराज खेती बाडी मे न वरस कर पहाड़ों में बरसता है।

श्लोक—सीदन्ति सन्तो विलसन्त्यसन्त पुत्रा म्रियन्ते जनकश्चिरायुः। परेषु मैत्री स्वजनेषु वैरं, पश्यन्तु लीलाः कलि कौतुकानि ॥२४॥

भा०—इस कलियुग में सज्जन तो दु.ख भोगते हैं और पापी सुख पाते हैं पिता चिरायु [बड़ी उम्र वाला] होता है और पुत्र पिता के सुखके आगे मर जाता है। घर वालों से द्वेष दूसरों से प्रेम करते हैं—

श्लोक—निर्वीर्या पृथ्वी निरौषधीरसानीचा महत्वं गता, भूपाला निज कर्म धर्म रहिता विप्रा कुमार्गेरता। भार्या भर्तृ विरोधिनी पर रता पुत्रा पितुर्द्वेषिणो,

६। कष्टं खलु वर्तते कलियुगे धन्यानरा. ये मृत: ॥२५॥

भा०—पृथ्वी बीज हीन हो गई औषधियों में गुण नहीं रहा, नीच नीचेकार्यों को करके बड़प्पन को पाते हैं। राजा लोग अपने कर्म धर्म से रहित हो गये, ब्राह्मण अपने ब्रह्म तेज के घमण्ड में आकर कुमार्गगामी हो गये, स्त्री पतिदेव से द्वेष करने वाली तथा पर पुरुषों से रमण करने वाली हो गई, पुत्र पिता से दुश्मनाई करने वाला हो गया, धन्य है उन महा पुरुषों को जिन्होंने इस कलियुग की लीला को न देखकर काल के गाल में सुख से जाकर सो गये।

श्लोक—शशीनी खलु कलङ्क कंटकं पद्मनाले, जलधि जल-मपेयं पंडिते निर्धनत्वं। दयित जन वियोगं दुर्भागत्वं स्वरूपे, धनपति कृपणत्वं रत्न दोषी कृतान्त: ॥२६॥

भा०—चन्द्रमा में कलङ्क, कमल नाल मे काटे, समुद्र का पानी खारा, पण्डितों में निर्धनता, इष्ट [प्यारे] जनका वियोग, सुन्दरता में दुर्भाग्य पना, धनाढ्यो में कृपनता, येउपरोक्त रत्न के समान गुण वाली वस्तु हैं किन्तु सब दूषण युक्त हे ये सब काल की ही लीला है। शुभ कार्यों मे महान् पुरुषों को अनेक कष्ट बाधायें उठानी पड़ती हैं। पुत्री तुम अपने धर्म कर्म मे सावधान रहना। गुणपाल के कथन को सुनकर सोमाबोली—पिता-जी मेरे मन में अब जरा भी दु ख नहीं रहा आपकी छत्र छाया में ही रहकर मैं अपना सुख से जीवन बिताऊगी। यह तो सदा से ही

जुआ आदि व्यशनों का सेवने वाला था चोर में सत्यता नीच में पवित्रता मद्य पीने वाले मे हृदय की पवित्रता नही होती किन्तु जुवारियों में तो इन तीनो बातों में से एक बात भी नही पाती न तो उन में सचाई .और न शुद्धता और न वह हृदय के पवित्र ही होते हैं दुष्ट मनुन्यों में यह कुलीन है यह गुणवान है ऐसा समझ कर एक दम विश्वास कर लेना उचित नही है

श्लोक—दुर्जन प्रिय वादीच, नै तद्विश्वास कारणम् ।
मधु तिष्ठति जिह्वाग्रे हृदि हाला हल विषम् ॥ २७ ॥

दुर्जन चाहे कितना ही मिठा बोले किन्तु उसका बिश्वास नही करना चाहिये दुर्जन मुख के मिठे और हृदय के वड़े दुष्ट होते हैं यानी उनके हृदय में जहर भरा हुआ है अग्नि चाहे मलया गिरी की ही क्यों न हो वह तो जलाकर ही छोडती है सेठ बोला सोमा ! यह मेरे अज्ञानता से जो कुछ हो गया तू इसको समता पूर्वक सहलेना अज्ञानता मे मनुष्य से क्या नहीं हो जाता पुत्री तू यह धन माल ले और इसको गरीबों को वाट दान पुन्य कर दान पुन्यके प्रभाव से तेरे को सद्‌गतिकी प्राप्ति होगी

श्लोक- रैवं प्राप्यते दानात्, नतु वित्तस्य संचयात् ।
स्थिति रूचैः पयोदानॉ, पयोधी नामधः स्थितिः ॥ २८ ॥

भा०—दान देने से मनुष्य गौरव को प्राप्त होता है धन के सचय करने से नहीं देख मेध कितने ऊ चे हैं और समुद्र कितना नीचे है समुद्र जल का संग्रह करने वाला हैं और मेघराज जल का दानी है इस-लिये समुद्र से मेघ की कहीं हजारों लाखों गुणी अधिक प्रतिष्ठा है इस लिये पुत्री तू अन्न और पानी आदिका दान कर-

श्लोक–तुरंग शत शहस्रं गो गजानॉच लक्षं, कनक रजत पात्रं मेदिनी सागरन्ता। सुर युवति समानं कोटी कन्या प्रदानं, नहि भवति समानं चान्न दानात्प्रधानम् ॥ २६ ॥

भा०–कोइ एक सैकडो हजारों घोडे हजारों लाखों गाय हाथी सोने चादी के पात्र और समूद्र के अन्ततक पृथ्वी दान देवें देवी जैसी सुन्दर क्रोडों कन्या प्रदान करे इतनाफल उनको नहीं मिलता जितना कि अन्न पानी के दान देने वाले को फल मिलता है इसलिये पुत्री तू दिल खोलकर दान पुन्य कर दाना देनेमें क्या फल प्राप्त होता है उसे भी सुन

श्लोक–दानेन भूतानि वसी भवन्ति, दानेन वैराण्यपि यान्ति नाशम्। परोऽपि बन्धुत्व मुपैति–र्दानै र्दानं हि व्यसनानि हन्ति ॥ ३ ॥

भा०–दान देने से देव दानव भूत आदि सब बस मे हो जाते हैं दान से दुश्मन भी बस मे हो जात हैं दान से दुर्जन सज्जन बन जाते हैं कहा तक कहिये दान देने से सब दु ख शकट टल जाते हैं। गुणपाल के कथन को सुनकर सोमाको बहुत कुछ शान्ति प्राप्त हुइई और सेठ जी से धन लेकर दान शाला बैठा दी प्रति दिन भूखों और प्यासों को अपने हाथसे भोजन खिलाने और पानी पिलाने लगी। सोमाके दानमान सन्मान की बच्चे २ भी प्रसन्सा करने लग गये सैंकड़ों हजारों कोसों तक सोमाके दा न की महिमा फैल गई कहाभी है कि–

श्लोक–योजने श्रुयते भेरी मेघो द्वादश योजने।

दातारो दान शब्देन, श्रूयन्ते सचरा चरे ॥ ३१ ॥

भा०—भेरी का शब्द यानी आवाज तो अधिक से अधिक एक योजन[चार कोस] तक ही सुनाई दे सकती है और मेघ का गर्जारव बारह योजन तक सुनाई दे सकता है किन्तु दातार महोदय का नामतो सब चराचरके कानों तक पहुँचता है अब रुद्रदत्त को मालूम हुआ कि सोमा तो घर बार को छोड़कर गुण पाल के घर को चली गई है और वहा दान शाला खोल कर अपना नाम कर रहीं है सोमा की शोभा को मिटने के लिये तथा यों कहिये कि ससार मैं अपना मुख उज्वल करनेके लिये वेश्या कामलता की दासी को सोमाके पास भेजी। दासी ने जाकर कहा सोमा ? रुद्रदत्तने तेरे को बुलाई है और कहा है कि अपने घर को सम्भाल ले और घर पर आ कर तेरे को यह काम करने पड़ेंगे क्या कि कामलता के और उसकी माताके पैर दबाने पड़ेंगे मेरे और उनके झूठे बर्तन भी माजने पड़ेंगे और मेरी तथा उन सब की भली और बुरी गालिया सहनी होंगी सोमा बोली रुद्रदत्त से कहदेना कि सोमा जब तेरे घर पर आवेगी जबही न ये काम करने पडेंगे न मैं तेरे घर आऊगी और न तेरे ये काम मुझे करने पडेगे मैं तो अपने पिता गुणपालके घरपर रहकर अपने मत शील सतोष से दिन पूरा करू गी कल्पवृक्ष के समान मैं इस घर को छोड कर रुद्रदत्त जैसे अधर्मी चंडाल के घर जाकर क्या करना है, मैं नहीं चाहती कि ऐसे चंडाल के मेरे को दर्शन हों। दासी ने जाकर रुद्रदत्त के सारे समाचार कह सुनाये। रुद्रदत्त सुनकर क्रोध में भर गया और जहाँ तहा बैठकर सेठ की और सोमा की बुराई करने लगा दूर्जन एव पापात्माओं का स्वभावही ऐसा होता है कि—

श्लोक—त्यक्त्वा मौक्तिक संहति करटिनो गृण्हन्ति काका:
पलं: त्यक्त्वा चन्दनमाश्रयन्ति• कुथितं योनि चतं मक्षिका
हित्वान्नं विविधं मनोहर रसं श्वानो मलं भुंजते,
यद्वन्नान्ति गुणं विहाय सततं दोषं तथा दुर्जना: ॥ ३२ ।

भा०—जैसे काग मोती को छोंडकर माम खाने दौडता है मक्खी घीसे हु
चन्दन के कटोरे को छोडर घाव [जखम] पर
जाकर बैठती है सुन्दर मनोहर भोजन को लात मार कर कुत्ता भि
[गन्दगी] खाता है ठीक इसही प्रकार दुष्ट भी सज्जनों के गुण न ग्रहण व
औगुण को ही गाते फिरते हैं जुं जु रुद्रदत्त सेठ की और सोमा की लोग
के सामने बुराई करे त्यों त्यों नगर वासी नर नारी सब उनकी प्रसंसा क
जैसे अगर आदि कोआग में गेर देने से खूब ही सुगन्ध फैलजाती है ठी
इस ही प्रकार उनके महत्व में जरा भी फरक नही आया दिन दुना र
चौगुणा की तरह उनका यश फैलने लगा सेठको और सोमा कों जब
मालूम हुआ तो सेट सेठानी कहने लगे पुत्री घबराना मत ये घर
सब तेरा है किसी बात की चिन्ता फिकर मत करना हम तेर सहायक
सेठ सेठानी और सोमाकी बड़ाई सुन २कर बान्दर की तरह मुख फेर
चले और लोगों के सामने कहता फिरे कि सोमा दूसरों के धन से अप
नाम करती है, भला दूसरे के धन से भी कुछ हुआ है। इस बात
खबर सोमा के पास भी पहुँची, कुछ परवाह न कर सोमा वैसे ही द...
पुण्य करती रही। एक दिन रुद्रदत्त के दिल में सुमति देवी ने आकर
बास किया और दौड़ा हुआ सेठ गुणपाल के पास आकर अपने अपराध
की क्षमा मागने लगा, सरल स्वभावी धर्मात्मा सेठने उसको क्षमा प्रदान
की फिर घर पर जा कर सोमा से मिला और उससे भी कृत अपराध की-

क्षमा मागी, भद्र प्रणाम से सोमा ने उसको खिमा लिया, अब रुद्रदत्त प्रति दिन सेठ के घर आने जाने लगा, सज्जन जो होते हैं वह दुष्टों की बातेंपर ध्यान न रख कर अपने सुन्दर स्वभाव में ही रमण किया करते हैं। एक दिन बुढी वसुमित्रा भी सोमा के घर जा निकली, सोमा ने भी उसको बड़े प्रेम के साथ अपने पास बैठाली, उसके (दिव्य प्रभाव श्याली)रूप को देखकर वसुमित्रा अपने दिलमें सोचने लगी कि अब तो रुद्रदत्त सोमा के पास हर रोज आने जाने लग गया है ऐसे रोजके आने जाने से इसको सोमा में मोह हो गया तो हमारा जीवन निर्वाह ही कठिन हो जायगा, इस लिये इस पापनी को किसी दाय उपाय से मार डालना ही उचित है, यह विचार कर वह अपने घर आई और अपनी पुत्री कामलता को उसके रूप का हाल कह सुनाया और अपना विचार भी कह दिया अब माता और पुत्री सोमा के मारने का उपाय ढूढने लगी, एक समय का जिकर है कि सोमा ने सारी नगरी का जीमणवार किया और सबको यथा योग्य वस्त्राभूषण पहना कर बिदा किये उधर वसुमित्रा और कामलता को भी बुलाई। वेश्या ने देखा कि अब मेरा दाव लग जायगा, उसी समय उसने सपेला से कहकर एक बड़ा भारी जहरीला काला साप जंगल से पकड़वा मगवाया और उसको घड़े में बन्द करउस घडे को साथ ले सोमा के घर पहुँची सोमाने भी उनका यथा शक्ति [अच्छा] सत्कार किया सच है कि—

श्लोक—निर्गुणेष्वपि सत्वेषु, दया कुरवन्ति साधवः ।
न हो संहरते जोत्स्नां, चन्द्रश्चण्डाल वेश्मनि ॥३३॥

भा०—सज्जन मनुष्य निर्गुणियों पर भी दया किया ही कर हैं जैसे कि चंडाल के घर पर भी चन्द्रमा तो अपना प्रकाश डालता ही है। सोमा ने

वसुमित्रा और कामलाता को भोजन जीमाकर बहुत बढिया बढिया वस्त्रा भूषण पहनाये, अब वह दोनों मा बेटी सोमा के पास बैटकर मिठी मिठी बातें बनाने लगी किन्तु सोमा उनके कपट को न समझ सकी और सरल स्वभाव से ही बातें करती रही। वसुमित्रा सोमा से बोली—मेरे जैसे कामलता पुत्री है ऐसे ही तू है मैं तेरे और इसमे कुछ अन्तर [फरक [नहीं समझती, मेरा कहना है कि आज से तुम दोनों धर्म बहन बन जाओ और ले मैं तेरे लिये कितना बढिया फूलों का हार लाई हूं तू इस फूलों के हार को गले मे पहन ले इस फूल माला के पहरने से तेरे सब दु'ख शकट टल जायेंगे और तेरे को किसी प्रकार का दु'ख नहीं रहेगा। सती सोमा कुटनी का कुछ भी कपट न समझ सकी फूल माला काढने के लिये झट घड़े में हाथ डाला—हाथ डालने की देरी थी कि सती सोमा के सत शील के प्रभाव से सर्प झट फूलों की माला बन गई और वह माला पहन के सन्मुख खडी हो गई। सती के शील की महिमा न्यारी है कहाभी है कि

श्लोक—बह्निस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायतेतत्क्षणात्। मेरुः स्वल्प शिलायते मृगपतिः सद्यः कुरंगायते।व्यालो-माल्य गुणायते विषरसः पीयूषं वर्षायते यस्यांगेऽखिल लोक बल्लभतमं शीलं समुन्मीलति ॥ ३४ ॥

भा०—शीलवान स्त्री पुरुष के लिये अग्नि पाणी सा, समुद्र एक छोटी नदी सी, मेरु पर्वत एक छोटा सा पत्थर का टुकड़ा सा, सिंह हिरण सा और सर्प फूलों की माला हो जाता है वह कौनसा कठिन कार्य है जो शीलवान के शील के आगे ठीक न हों जाय। फूलों की माला देखकर

वेश्या बडी सोच में पड़ गई कि मैंने तो इस घड़े में काला नाग रखा था और उसकी फूलमाला कैसे बन गई यह धर्मात्मा है, इसके शील के प्रभाव से ही यह विषधर फूलमालाके रूप में परणित हो गया और कोई बात नहीं है। अब वसुमित्रा और कामलता अपने घर को जाने लगी कि सोमा उनको पहुँचाने के लिये घर से बाहिर तक साथ आई और काम-लता से बोली—लो बहन जी यह फूलों का हार मैं अपने हाथ से तेरे को पहनाती हूँ, यह कहकर सोमा ने वह माला कामलता के गले में डाल दी माला का गले मे डालना था कि वैसा ही काला साप बन गया और कामलता को डस लिया, वेश्या एक दम मूर्छा खाकर जमीन पर पड़गई अपनी पुत्री का यह हाल देखकर बुढ़िया ने अपनी छाती कूटनी पिटनी शुरु करदी और खूब जोर से हल्ला गुल्ला मचाना शुरु किया। अब वह पापनी कुटनी लोकों में खड़ी होकर जोर जोरसे पुकारने लगी कि सोमा ने मेरी पुत्री को फूलमाला का नाम लेकर काला नाग गले मे डाल कर मार दी इस गुणपाल की लाडली ने मेरे को विश्वास देकर घर पर बुला इस काली ककाली ने मेरी पुत्री को मार डाली, इस पापनी ने सारे शहर को ठग लिया और भी वेश्या ने अनेक कलक वाली बातें कही। सोमा भी इस चरित्र को देख कर बडी आश्चर्य में पड़ी और अपने मनमें कहने लगी कि मैने पूर्व (पहले) जन्म में ऐसा क्या पाप किया था जो इस भव में मेरे उदय में आया। सेठ गुणपाल रुद्रदत्त ने भी सोमा के कलक का बहुत दुःख माना, वेश्या ने साप को पकड़वा कर घड़े में धाल मुह बन्द कर रोती पीटती दौडी हुई राजा के पास गई और कहा श्री महाराज गुणपाल की लाडली पुत्री सोमा ने मेरी पुत्री कामलता को मार डाली कामलता का मरना सुनकर राजा को बड़ा क्रोध आया और सिपाइयों के

वही सोमा को कचहेरी में बुलाई सोमा के साथ गुणपाल और रुद्र दत्त भी आया, राजा ने सोमा से पूछा कि तैंने गले में फूल माला डालकर कामलता को क्यों मार डाली। सोमा बोली—श्री महाराज मैंने इसको नहीं मारी मैं जैन धर्म के मानने वाली हूं, हमारा जैन धर्म जो है वह दयामय है, जो जीव हिंसा करेगा वह नरक में जाकर पड़ेगा और जो जीव रक्षा करेगा वह स्वर्ग और मोक्ष के सुख पावेगा। सुखाभिलाषी कभी जीव हिंसा ही नहीं किया करते। राजा कहने लगा—तो सोमा ?क्या फूल माला से भी कोई मरा है, यदि फूलमाला के पहरने से ही आदमी मरने लग जावेंगे तो भला फिर उनका जीना कैसे होगा, सोमा ने आदि से अन्त तक वेश्या का सारा चरित्र कह सुनाया, वसुमित्रा से न रहा गया वह भागी हुई सोमा के घर के बाहिर पड़ी हुई अपनी पुत्री को लाई और कहा देखो श्रीमहाराज सोमा ने इसको अपनी शोक समझ कर मारदी इस घड़े में वह साप है जिसने मेरी पुत्री को खा लई राजा की आज्ञा से सोमा ने सब लोगों के सामने घड़े में हाथ डाला और उस साप को खीच बाहर निकाला उसी समय वह फूलो की माला बन गया और वह हार अपने गलेमे पहन लिया राजा ने इस बात का बड़ा अचम्भा माना और वेश्या से कहा अब तू भी इसको हाथ मे पकड़। सोमा ने उस हार को गले से निकाल जमीन पर धर दिया, वेश्या जब उसको उठाने को चली तो वह फिर साप के रूप में हो गया और जोर २ से फुकार मारने लग गया, सोमा ने कई बार उस नाग को उठा २ कर अपने गले में डाला और वह फूल माला बनी हुई पाई। राजा बोला—बुढिया तू क्यों नही इस को पकड़ती, वेश्या बोली - अन्नदाता ये सोमा तो मन्त्र तन्त्र जादू जानती है और उस के द्वारा ही यह साप फूल की माला हो जाता है, मंत्र के

प्रभाव से तो सिंह भी बकरा हो जाया करता है राजा बोला तो तू भी कुछ अपना मन्त्र चला और मंत्र से सोमा को जीत। बुढिया वोली—मैं मन्त्र तन्त्र जादू वगैरह कुछ भी नहीं जानती यदि सोमा मेरी पुत्री को जीवित करदे तो मैं सोमा को निर्दोष और शुद्ध कह सकती हूँ। राजा वोला—सोमा तू कामलता को जीवित करके अपने इस कलंक को उतार सोमा बोली–श्रीमहाराज मेरा जिन धर्म दयामय है देखो मैं इसको धर्म की कृपा से कैसे सचेतन करती हूं, यह कह कर सोमा ने चौदह पूर्व का सार महा पंच प्रमेष्टीनोकार मंत्र को पढकर कामलता के शरीर के हाथ लगाया, हाथ लगाते ही कामलता का विष उसी समय उतर गया और वह उस मूर्छित अवस्था से जाग उठी और सोमा को देख कर थर २ कांपने लग गई।

राजा बुढिया से बोला—पापनी तैंने मेरे सामने आकर यह इतना वडा झूठ क्यों वोला, अब मैं तेरे को मृत्यु का दण्ड दूंगा और मरने के वाद तेरे को नर्कादि के दुःख न्यारे भोगने पड़ेंगे। राजा ने सिपाहियों को आज्ञा दी कि जल्दी ही इस पापनी को पकड़ो और इसको तलवार से मोत के घाट उतारो। राजा के हुक्म को सुनते ही सोमा हाथ जोड़ कर वोली अन्नदाता आप मेरे कहने से इसको अभय दान दो [इसके अपराध को क्षमा करो] सोमा के बहुत कहने पर बुढिया को अभयदान दिया, वसुमित्रा ने भी अपना अपराध स्वीकार किया राजा से और सोमा से अपने अपराध की क्षमा मांगी, धर्म के प्रभाव को देखकर नगर के लोगों ने तथा रुद्रदत्त वसुमित्रा और कामलता ने सोमा के चरणों में वार वार अपना मस्तक झुकाया, देवताओं ने पंच दिव्य प्रकट किये, स्वर्ग लोकमें

सोमा के सुयश का डङ्का बजा स्वयं देवराज 'इन्द्र' ने सोमा की महिमा गाई यह तो क्या बड़ी बात है धर्मात्मा जो भी चाहवे वही हो सकता है, धर्म के प्रभाव से प्रभावित होकर राजा सुभागी सेठ गुणपाल और नगरी के बहुत से धर्मात्मा पुरुष वन मे जाकर जिनचन्द्र गुरु के पास मुनिदीक्षा धारण करली और रानी भोगवती सेठानी गुणवती सती सोमा ने नगरी की बहुत स्त्रियों के साथ गुरनी श्रीमत के पास जाकर जैन साध्वी की दीक्षा धारण की, वसूमित्रा कामलता और रुद्रदत्त आदि ने श्रावक के व्रत धारण किये जैन धर्म की खूब ही महिमा फैली। चन्दन श्री की यह वार्ता राजा मत्री और चोर को बड़ी प्यारी लगी। चन्दन श्री इस कथा को सुना कर बोली स्वामीनाथ यह दृश्य मैंने प्रत्यक्ष अपने नेत्रों द्वारा देखा है इस को देख कर ही मेरे को दृढ सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ती हुई है अर्हदास बोला जो तुमने आखों से देखो मैं भी उसका श्रद्धान करता हूँ और उसे चाहता हूँ और उस परही रुची व प्रेम करता हूँ सेठ की अन्य स्त्रियों ने भी उपरोक्त प्रकार कहा किन्तु छोटी स्त्री कुन्दलता बोल उठी– तेरी ये सब बाते झूठी हैं बहन चन्दन श्री तू क्यों इनको बालकों वाली बातें सुना २ कर बहका रही है, दृढ समयक्त्व रत्न क्या यों प्राप्त हुआ करता है, जो ससार मे फसा रहे और फिर कहे कि मैं दृढ सम्यक्त्वी हू यह कितनी अजानता की बात है 'कथनी के शूरे घणे, थोथे बान्ने तीर। जिनके चोट प्रेम की उनके विरले शरीर।' राजा मत्री अपने अपने मन में कहने लगे कि देखो यह कैसी पापनी है कि चन्दन श्री की आँखें देखी हुई बात को भी झूठ बतला रही है, इसको प्रातः काल ही गधे पर चढा कर शहर से बाहिर निकलवा दूगा। चोर सोचने लगा

कि यह बडी पापनी है, पाप जो होते हैं वह दूसरे के गुण लिया नही करते और न दूसरे की बडाई को सुनकर खुश होते हैं। अर्हदास अपनी तीसरीस्त्री बिष्णु श्री से बोला—भद्रे तुम भी अपने दृढ सम्यक्त्व रत्न प्राप्त होने की कथा सुनाओ? विष्णुश्री बोली स्वामी नाथ जी सुनिये.

❀ ४ बिष्णु श्री का—कथा कहना ❀

भरत क्षेत्र के बच्छ देश में कौशाम्बी पुरी नाम की एक अति विख्यात नगरी हैं उस नगरी में ही मेरा जन्म हुआ था उस नगरी का 'अजीतजय' नाम का राजा था उसकी रानी का नाम 'सुप्रभा' था, राजा के मन्त्री का नाम 'सोमशर्मा' था और उसकी पत्नी का नाम 'सोमश्री' था मन्त्री को दान देने का बड़ा चाव था उसका विचार था कि हाथ से कुछ न कुछ अवश्य देते रहना चाहिये, हाथ का दिया अवश्य फल लायगा

सवैया—दीन को दीजिये होत दयामन, मीत को दीजिये प्रीत
बढावे। सेवक को दीजिये काम करे वहु, साहिब
को दीजिये आदर पावे। शत्रु को दीजिये वैर रहे
नहीं, भाट को दीजिये कीर्ति गावे। पात्र को
दीजिये मोक्ष के कारण, हाथ को दियो न अकार्थ
जावे। १।

किन्तु मन्त्री का दान अधिकतर कुपात्रों को ही प्राप्त होता था, सुपात्र का तो मिलना भी बहुत कठिन है हा यह जरूरी बात है कि जो कुपात्रों को दान देगा तो वह कभी न कभी सुपात्र को भी दान देवेगा

एक समय का जिकर है कि कोसम्बी नगरी के बाहिर सूखे हुये बाग में एक 'समाधिगुप्त, नाम के मुनिराज एक महिना का व्रत (उपवास) लेकर बैठ गये उन गुरुदेव के तपके प्रभाव से आम निम्बू जामन खजूर आदि के सूखे वृक्ष एक दम से हरे हो गये और उनमें फल फूल पत्ते निकल आये वृक्ष सब हरे हो गये बाग में कोयल पचम स्वर से बोलने लगी सूखी बावडियों में पानी भर आया कमल खिल उठे फुलों पर भवरे गु जारव करने लगे, जूही चम्पा चमेली मालती आदि के भी फूल खिल उठे। महात्माओं के तपोबल के आगे ऐसा कौनसा कार्य है जो कठिन हो। मुनियों में जो गुण शास्त्रों में बतलाये हैं वह सब गुण उन महात्मा में विद्यमान थे सन्त महात्मा के गुण—सत्यवक्ता हो धैर्यवान हो, पवित्र आचार विचार वाले हों, परम सतोषी हों, समता का भडार हों, इन्द्रियों का दमन करने वाला हो, विद्या शास्त्र मत्र यत्र तत्र आदि का जानने वाला हो। जब गुरु देव की महिने की तपस्या पूरी हो गई तो वह भिक्षा के लिये शहर को चल दिये, रास्ते में मत्री का घर आ गया तो वह आहार के लिये उसके घर में प्रवेश कर गये, दातार में श्रद्धा भक्ति अलोभ दया शक्ति क्षमा ज्ञान आदि का जो गुण हुआ करते हैं वे सब गुण मंत्री में थे। मंत्री गुरु को आता देख कर चित में बड़ा प्रसन्न हुआ और हाथ जोड़ चरणों में मस्तक झुका शुद्ध भावों से भोजन दान दिया आहार दान के प्रभाव से देवताओं ने मत्री के घर देव दुंदभी बजाई पचदिव्य प्रघट किये 'अहो दान अहो दान' आदि शब्दों द्वारा मत्री की प्रसंसा की इस दान की महिमा को देखकर मत्री विचारने लगा कि मैंने अपनी उमर में सोना चादी तिल हाथी रथ दास दासी भूमि घर कन्या कपीला गाय आदि नाना प्रकार का दान दिया, किन्तु ऐसी दान

की अतिसय तो कहीं भी देखने मे ही नहीं आई । गुरु भोजन लेकर बाग में चले आये और वहा एकान्त में बैठकर उस आहार को चुका लिया (खा पी लिया) अब मत्री भी बाग मे आया और हाथ जोड नमष्कार कर गुरु के सामने बैठ कर विनय सहित बोला–हे गुरु देव आप मेरे को बतलावें कि दान कितने प्रकार का है, गुरु बोले मत्री जी दान मुख्यत चार प्रकार का है–

श्लोक–अभया ऽऔषध ज्ञान, भेदतस्त चतुर्विधम्
दानं निगद्यते सद्भिः, प्राणिना मुपकारकम् ॥२॥

भा०—अभयदान, भोजन दान, औषध दान, विद्यादान । अभयदान देने वाला कही भी चला जाओ उसको कहीं भी किसी प्रकार का भय प्राप्त नहीं होता भोजन दान से उत्तमोत्तम सुख भोगों की प्राप्ती होती है ओषध दान से शरीर निरोग रहता है विद्या दान से मतिश्रुत तथा केवल ज्ञान तक प्राप्त हो जाता है प्यारे मत्री जहा तक हो सके दान सुपात्र को ही देना चाहिये । [पाराशर स्मृति मुरादाबाद वाले शिवलाल गणेशी लाल ने अपने लक्ष्मीनारायण प्रेस मे सन् १६०५ ई० के छपे प्रथम अध्याय श्लोक ६५ पृ० ६ मे लिखा है कि––

श्लोक–सुक्षेत्रे वापय द्बीजं, सुपात्रे निक्षिपेद्धनम् । सुक्षेत्रे च सुपात्रे च, ह्युप्तं तन्न विनश्यति ॥३॥

भा०—बीज क अच्छे खेत में बोवे और सुपात्र को दान देवे अच्छे खेत में बोया हुआ बीज और सुपात्र को दिया हुआ दान कभी निष्फल नहीं होता । कुपात्र जो खा पी कर पाप करे उसे कुपात्र कहते हैं कुपात्र को दान देना ऐसा व्यर्थ है जेस साप को दूध पिलाना]

श्लोक–सुपात्र दानाच्च भवेद्धनाढ्यो, धन प्रभावेण करोति पुण्यम् । पुण्य प्रभावात् सुरलोकवासी, पुनर्धनाढ्यः पुन रेव भोगो ॥४॥

भा०—सुपात्र को दान देने से व्यक्ति धनवान होता है धन होने से वह पुण्य करता है पुण्य के प्रभाव से स्वर्ग लोक के जाकर सुख भोगता है स्वर्ग के सुख भोगकर यनुष्य भव कों प्राप्त कर सर्व सुखों का भोक्ता बनता है ।

श्लोक–कुपात्रदानाच्च भवेद्दरिद्रो' दारिद्य दोषेण करोति पापम् । पाप प्रभावान्नरकं प्रयाति, पुनर्दरिद्र पुनरेव पापी ॥५॥

भा०—कुपात्र को दान देने से मनुष्य दरिद्री होता है दरिद्री होने से वह पाप करता है पाप करके नरक में जा पड़ता है नरक से निकल कर मनुष्य भवमें आकर दीरिद्री होता है दरिद्र वस हो पाप कर फिर नरकको जा दुःख भोगता है ।

मन्त्रि हाथ जोड़ कर बोला–हे गुरु देव जैसा दान का प्रमाव आज मैंने प्रत्येत्त आखों से देखा और फल प्राप्त किया क्या ऐसा दान का फल और भी किसी को मिला है । गुरु कहने लगे कि हा भाई 'बैनातट' नगरी के 'विश्वभूति- नाम के ब्राह्मण को दान का फल प्राप्त हुआ था उसकी कथा मैं तेरे को कहता हूं ।

दक्षिण दिशा में एक बैनातट न म की नगरी थी उस नगरी का राजा सोमाप्रभ था और उस की रानी का नाम सोमप्रभा था । वह राजा ब्राह्मण

देशों का परम भक्तथा एक दिन राजा ने अपने मन में विचार किया मैंने न्यायनीत से बहुत सा धन उपार्जन किया अब इस धन को दान पुन्य में लगाना चाहिये नही तो इसको नष्ट होते देर नहीं लगे गी यह विचार कर राजा ने "बहु सुवर्ण,, नाम का यज्ञ रचवाया यज्ञ के आदि में बीच में और अन्त में ब्राह्मणो को खूब ही दिल खोल कर दान दिया यज्ञशाला के पासही एक विश्वभूति नाम के ब्राह्मण का घर था, वह ब्राह्मण देवता अपने नियम धर्म में बड़ा पक्का तथा बड़ा सतोषी था और दान देने में वह बडी श्रद्धा रखता, उसकी पत्नी का नाम "सती" था वह पतिव्रता दिगुणो से युक्त थी) पडित प्रति दिन स्वय जंगल में जाकर जब गेहूँ चने आदि के दाने चुग कर-लावे और उनको भूनकर उसके चार लड्डु बनावे। एक लड्डु अग्नि देव की भेट करे दूसरा आप खावे और तीसरा अपनी घरवाली को देवे चौथा अतिथि को देवे। थोड़ासा दान देनाभी अच्छा है दान यह न विचारेकी जब मेरे पास मन चाहा धन हो जायगा तबही मैं कुछ दान पुण्य करू । थोड़ेसे धन को क्या दान पुन्य में लगाऊ मनकी इच्छा नुसार तो किसी को धन मिला ही नहीं करता दान पुन्य करना विश्वभूति का नित्य का काम था एक दिन विश्वभूति के घर 'पिहिताश्रव,, नाम के मुनि भिक्षा के लिये आगये, गुरु को आते देख पंडित जी सात आठ पग सामने सेवा में गया और हाथ जोड़ चरणों में पड़ा उनको बड़े भाव भक्ति पूर्वक घर लाकर अतिथि के निमित्त का जो लड्डु, था वह बहराया दिया और अपने-खानेका भी दे दिया और फिर अपनी घरवालीकी तर्फ देखने लगा सती साध्वी ब्राह्मणीने भी भक्ति पूर्वक झट खड़ी हो अपने खाने का लड्डु महात्मा ज. को दे दिया इससे ब्राह्मण देवता बड़े प्रसन्न हुये। आहार दानसे देवताओंने आकाश

मार्ग से रतनों तथा फुलों की वृष्टी ी सुगन्वित पवन चलाई देव दुन्दभी बजाई, जय हो विश्वभूति ब्राह्मण की ऐमे जय २ का। शब्दों से आकाश मण्डल को गुजा दिया मुनि दान से ब्राह्मणने सन्सार परत किया और पुन्य का बन्धन किया देवताओं ने जो आकाश मार्ग से रत्न वर्षाये थे उन मे-से कई रत्न पासवाले यज्ञ मण्डप में जा पड़े यह देखकर ब्राह्मण राजा से कहने लगे श्री महाराज ये देखिये-यह आपके यज्ञ के प्रभावा से खिचे हुये देवता आ रहे हैं वही आपके यज्ञ मण्डप पर रत्न वर्षा रहे हैं यह आपके यज्ञ का ही फल है यह सुनकर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और ब्राह्मणो से बोला-तुम इन रतनों कों उठाकर मेरे पास लाओं राजा की आज्ञा कों सिरों धार्य कर के जोंही पण्डित लोग रतनो कं उठाने लगे कि रत्न उन्हों को आग के अङ्गारेसे भी अधिक गर्म मालूम हुये हाथ जल जानेके भयसे वह उनका न उठा सके पास में खड़े हुये एक विद्वान ब्राह्मण देवता ने राजा से कहा श्री महाराज यह आपके यज्ञ का फलनहीं है किन्तु यह है विश्वमूति ने जो निग्रन्थ महात्मा कों दान दिया उसका फल यह सुनकर हलु कर्मी राजा सोमप्रभने दिल मे विचारा कि विश्वभूति तो बडा ही गरीब ब्राह्मण है इसने कैसे आहार दाम दिया जैसे बन्ध्या के पुत्रहोना असम्भव है ठीक इसही प्रकार ऐसी गरीबी हालत में दानका देना भी कठिन है अब राजा विश्वभूति के पाम गया औ हाथ जोड़कर बोला पण्डित जी मुनिदान का जों फल आपको मिला है उसका आधा फल कृपा कर मेरे कों देदों विश्वभूत बोला-श्री महाराज आप मेरे को इस के बदले मे क्या दोगे राजा बोला मै आपको अपने बहु सुवर्ण यज्ञ का आधा फल औ खाने खरचनेको बहुत सा धन दूगा यह सुनकर पण्डितजी कहने लगा स्वर्ग और मोक्ष का देने वाला जो दान

है भला मैं उसका फल आपको कैसे दे सकता हूँ और भला आप विचार करें कि क्या कभी ऐसे देने से किसी को कुछ फल मिला है जो हाथ से दानपुन्य करेगा वही उस दानपुन्य के फल को पावेगा अभय दान आहार दान औषध दान विद्या दान इन चारों दान दान का फल किसी ने बेचा नहीं है और न कोई अब बेच सकता है और न कोई भविष्य काल में बेचेगा ही। पडित देव का यह कोरा सा उत्तर सुनकर राजा वहा से चलकर जगल में पिहिताश्रव गुरु के पास जा हाथ जोड़ सामने बैठकर बोला हे गुरुदेव–आप मेरे को चारों प्रकार के दान का महात्म्य सुनाने की कृपा करें। गुरु बोले–हे राजन् सब दानों में अभयदान ही सब से चढ़ बढ़ के है जो मरते हुए जीव को बचादे अथवा भयभीत को निर्भय करदे तो वह हमेशा के लिये निर्भय हो जाता है जिसका सब प्राणियों की रक्षा में चित है या मरतेहुए जीवों को जो बचाता है अथवा भयभीत का भय मिटाता है उसका तो कहना ही क्या है। दया लाकर जो जीवों को अभयदान देता है वह सब तरह के भयों से छूट जाता है अभयदान देने वाला दूसरे जन्म में निर्भय होता है। इस संसार में अपनी बड़ाई के लिये तथा स्वर्ग के लिये लोग अनेक प्रकार के दान करते हैं किन्तु जीवों की रक्षा करने वाले तो कोई बिरले ही होते हैं बड़े बड़े यज्ञों का फल तो समय पाकर क्षय भी हो जाता है किन्तु अभयदान का फल तो कभी क्षय होता ही नहीं। जो मनुष्य समर्थ होकर भी मरते हुये जीव की रक्षा नहीं करता वह नरक का अधिकारी हो जाता है जो मनुष्य अपने शरीर को जीव रक्षा और परोपकार में नही लगाता उसका शरीर पालन पोषण करना व्यर्थ है। अभयदान पर मिहरथ राजा की सिगारदेवी सौभाग्य मजरी निपुलादेवी और अनुपमदेवी की कथा समजना

मेघरथ राजा ने कबूतर की रक्षा के लिये अपने प्राणों तक की कुछ परवाह न की, जिसका फल यह हुआ कि वह वहा तीर्थ कर गोत्र उपार्जन कर छब्बीसवे देवलोक मे जाकर देवता हुआ और देवायु भोग कर 'हथिनापुर में विश्वसेन राजा की इपरानी अचलादेवी की कुक्षी मे आकर अवतार लिया गर्भ मे आते ही देश भर मे जो मृगी का रोग फैल रहा था वह एक दम से मिट गया जन्म होते ही ससार भर में शान्ति का राज्य छा गया शान्ती कर्ता होने से भगवान का नाम शान्ति कु वर रखा गया वह शान्ति कु वर मडलिक चक्रवर्ती के पद को भोग कर दीक्षाले केवल ज्ञान प्राप्त कर तीर्थंकर पद दीपाकर अन्त में मोक्ष मे जा विराजमान हुए। दूसरा अन्नदान है जिसने आहार दान दिया समझो कि उसने सब कुछ दिया। गृहस्थीं का कर्तव्य है कि वह स्वय श्रद्धा भक्ति पूर्वक अपने हाथ से दान करे जिसको दान देवे दातार उसके कुशलता के समाचार पूछे, जाने समय दूर तक पहुँचाने के लिये जावे। एक महा प्रतापी 'रन्तिदेव' नाम का राजा था, वह ब-ा दयालु और धर्मात्मा था, उनने अपना धन माल राज्यपाट सब गरीबों को बाट दिया यहा तक कि वह अपने परिवार को साथ ले जगल मे चला गया। जगल में भी वह स्वय भूखा रहकर जो कुछ मिलता वह भूखों को बाट दिया करता था। कहते हैं कि रन्तिदेव को अडतालीस दिन तक भोजन तो कहा पीने को पानी तक नहीं मिला भूख प्यास मे पीड़ित हो राजा बलहीन होगया मारे भूख के उसका शरर र कापने लग गया, उन्नचास (४९) वें दिन प्रात' काल ही राजा को भोजन मिला, अड़तालीस दिन के व्रत के कारण राजा परिवार सहित दुर्बल हो गया था रोटी की कीमत भूखा मनुष्य ही जान सकताहै, जिसके सामने मेवा मिठाइयों के आगे से आगे ढेर लगेरहते हो

उन्हें बिचारे गरीबों के भूखे पेट की ज्वाला का क्या पता। कभी वह सेठ साहूकार राजा महाराजा भूखा रहकर देखें तब उनको मालूम हो सकता है। राजा रन्तिदेव परिवार सहित जीमने के लिये बैठना ही चाहता था कि इतने में एक भूखा आ गया उसको देखकर राजा ने उसको भोजन में से खिला दिया और बाकी बचे हुये अन्न को खाने लगे तो दूसरा भूखा आ गया आदर और भाव भक्ति से उसको भी भोजन खिला दिया अब राजा और उसका परिवार भूखा रह गया बस पास में प्यास मिटाने के लिये जरा सा पानी बच गया था इतने में एक प्यासा आ गया और बोला मारे प्यास के मेरे प्राण निकलने को तैयार हो रहे हैं कृपा कर मेरे को जल पिलावें। राजा ने अपनी और अपने परिवार के दु:ख की कुछ परवाह न की दया भाव ला वह जल भी उस प्यासे को पिला दिया जिसके पास एक क्रोड रुपया हो यदि वह एक क्रोड में से एक लाख का दान करदे तो कोई कठिन बात नहीं है क्योंकि निन्याणवें (९९) लाख तो फिर भी उसके पास बचे रहेंगे, कठिन काम तो भूखे का है जो भूखे को अन्नजल मिले वही आगे से आगे भूखे को बांट दे। रन्तिदेव के इस कठिन त्याग को देख कर देवताओं ने आकाश मार्ग से फूल बरसाये पंच दिव्य प्रकट किये जय २ शब्दो मे राजा के त्याग और दान की प्रसंसा की और उसके सब दु:ख मेट दिये।

तीसरा औषध दान है, औषध दान से शरीर निरोग रहता है। कहा भी है कि 'पहला सुख निरोगी काया' रोगियों को औषध न मिलने से रोगी का शरीर नष्ट हो जाता है, शरीर नष्ट होने से ज्ञान नहीं रहता ज्ञान न रहने से मुक्ति भी नहीं मिलती, चतुर पुरुषों का कर्तव्य है कि औषधी दान द्वारा अपने जन्म को सफल बनावें। रेवती सेठानी ने

भगवान श्रीमहावीरदेव को औषध दान दिया था जिसमे उमने तीर्थंकर गोत्र काउपार्जन किया। चौथा विद्यादन है—विद्या आप पढे और दूसरे को पढावे भगवान की पवित्र वाणी का घर २ मे प्रचार करे विद्यादान मे मोक्ष के अविचल सुखों की प्राती होती है भय से तथा प्रत्युपकार की इच्छामे दान नही देना चाहिये नाचने गाने वालो तथा हसी दिल्लगी करने वालेभाड आदि को जो देते है वह दान नही कहलाता और भी दान दो प्रकार का सुपात्र दान दूसरा अणुकम्पा दान भवगत भक्ति म जो अपना समय वितावे एसे धर्मात्मा को जो दिया जावे वह सुपात्र दान कहलाता है, अाने पागुले अपाहिज को जो दिया जावे वह अनुकम्पा दान कहा जात है।

स गुरु के उपदेश को श्रवण कर राजा ने मुनि श्री जी के पास श्रावक के बारा व्रत धारण कर लिये और चारों प्रकार का दान खूब दिल खोल कर दिया कुछ वर्षो के बाद राजा इस आसार संसार को त्याग के संयम धारण कर उग्र (घोर] तपकर अन्त में केवल प्राप्त कर मोक्ष को गया।

मत्री सोम शर्मा ने गुरु के मुख से वहु सुवर्ण यज,, की कथा को सुनकर श्रावक के बाराव्रत धारण कर लिये और जाते समय गुरु के सामने यह प्रतिज्ञा भी करली कि मैं आज से लोहे का कोई भी शस्त्र अपने पास नहीं रखूगा मेरा तो रक्षक वही जिनेन्द्र देव होगा जोकि सव का रक्षक है। यह कह मंत्री घर पर आ काष्ठ की तलवार बनवा म्यान में रख राज दरवार में आने जाने लगा। ऐसे रहते हुए मत्री जी को वर्षो के वर्ष बीत गये किन्तु राजा को इस बात का पता न लग सका कि मत्री के पास काष्ठ की तलवार है। एक दिन मन्त्रि के किसी दुश्मन को इस

चान का पता लग गया और वह दुष्ट अपना दाव देखने लगा कहा भी है कि—

दोहा–ज्योतिषी भूले अंक में, राजा भूले न्याव ।
चोर चुगल भूले नहीं, देखे अपना दाव ॥ ३ ॥

दुष्टों का स्वभाव ही कुछ ऐसा होता है कि वह अपना बुरा करके भी दूसरों के सुख में विघ्न डाला ही करते हैं जैसे कि मक्खी ग्रास में पड़कर चाहे अपने प्राण भले ही खो बैठे किन्तु खाने वाले को तो उल्टी (वमन करा) कर ही छोड़ती है ।

श्लोक–यथा परोपकारेषु, नित्यं जागर्ति सज्जनः ।
तथा परापकारेषु, जागर्ति सततं खलः ॥ ७ ॥

भा०–सज्जन पुरुषों का चित जैसे परोपकार में लगा रहता है ठीक इसके वीपरित दुर्जन का चित भी दूसरों की बुराई में ही लगा रहता है ।

श्लोक–न विना परवादेन, रमते दुर्जनो जनः ।
काकः सर्व रसान् भुंक्ते, विनाऽमेध्यं न तृप्यति ॥ ८ ॥

भा०–काग को चाहे कितनी बढ़िया से बढ़िया रस वाली स्वादिष्ट खाद्य वस्तु खिलाई जावे किन्तु जब तक वह गन्दगी में जाकर चूंच न मारले तब तक उसका चित प्रसन्न ही नहीं होता ठीक इसी प्रकार जबतक दुर्जन दूसरों की चुगली न खाले तब तक उसको चैन ही नहीं पड़ती । एक दिन समय देखकर चुगलखोर ने राजा के आगे मंत्री जी की चुगली खाई और कहा–श्रीमहाराज आपका मन्त्री सोम शर्मा अपने पास काष्ठ की तलवार रखता है, यदि काम पड़ जाय तो वह संग्राम (युद्ध) में दुश्मनों को कैसे मारेगा मालूम होता है कि मन्त्री आपका हितैषी नहीं है हितैषी होता तो

वह काष्ठ की तलवार ही अपने पास क्यों रखता। आप तो उसका विश्वास करते हो और वह वक्त पर आपको धोखा देगा इस बात को सुनकर राजा को क्रोध हो आया समय देख राजा ने मन्त्री को, शुभटों को और राज पुत्रों को दरबार में बुलवाया। मन्त्री राज पुत्रों तथा शुभटों के सामने अपनी म्यान में से तलवार निकाल कर दिखाई सबने एक स्वर से राज की तलवार की प्रसंसा की अब राजा ने एक तरफ से सब राज पुत्रों और शुभटों की तलवार देखनी शुरू करदी सबने अपनी २ तलवार दिखलादी, तलवारों देखकर राजा अति प्रसन्न हुआ और सब को यथा योग्य इनाम दिया। अब राजा ने मन्त्री से कहा मन्त्री जी आप भी अपनी तलवार मेरे को दिखलाओ, मैं भी देखूं कि आपकी तलवार कितनीं बढ़िया है। राजा की बात को सुनते ही मंत्री जान गया कि किसी मेरे दुश्मन ने राजा से मेरी काष्ठ की तलवार की बात कहदी हैं यदि सबके सामने राजा मेरी काष्ठ की तलवार देख लेगा तो न मालूम सबके सामने मेरे को क्या कहेगा यह सोचकर मंत्री अपने देव गुरु धर्म का स्मरण कर अपने दिल में कहने लगा कि यदि मेरे दिल में देव गुरु धर्म की पक्की श्रद्धान होतो यह काष्ठ की तलवार इसी समय लोहे की बन जावे यह कह झट से उसने म्यान में से काष्ठ की तलवार खैंची—वह सूर्य के समान तेज वाली हो गई अथवा यों कहिये कि बिजली की तरह चमकती हुई लोह मयी दिखाई दी। मन्त्री की तलवार को देख कर सब आश्चर्य में पड़ गये। कचहेरी में बैठे हुये चुगल खोर पर राजा की दृष्टि पड़ी और बोला—अरे दुष्ट तू तो कहता था मंत्री के पास काष्ठ की तलवार हैं। मेरे सामने भी तैंने इतनी बड़ी भारी झूठ बोली, चुगलखोर देखता का देखता रह गया। मन्त्री हाथ जोड़कर बोला—श्री महाराज —सज्जन पुरुष

राजा को सब देवों का अंश मानते हैं इस लिये धर्मात्मा एवं गुणी मनुष्य का कर्तव्य है कि राजा को सर्व देव मय समझ कर राजा के सामने झूठ न बोले। इस प्यारे बन्धु ने जो आप से मेरी काष्ठ की तलवार की बात कही थी इस का भी एक कारण था, इस लिये आप इस पर क्रोध न करें जो भी कुछ इसने कहा वह सत्य ही कहा था। राजा बोला तो मन्त्री जी तुम्हारी काष्ठ की तलवार थी तो यह ऐसी बढ़िया लोहे की तलवार कैसे बनगई। मन्त्री ने आद्योपान्त अपनी सब राम कहानी राजा को कह सुनाई और कहा श्री महाराज—लोहे के शस्त्र रखनेका है र क लूमनकेबनेरर।। का शस्त्र जीव का घात करने वाला है। धर्म रूपी शस्त्र जीवों का रक्षक है, देव गुरु धर्म का मेरे को दृढ विश्वास था जिसकी अपार कृपा से ही यह काष्ठ की तलवार लोहे की बन गई। यह सुनकर राजा और दरबार के सब लोगों ने मंत्री जी के पग पुजे, देवताओं ने स्वर्गलोक से आकर पंच दिव्य प्रकट किये देव दुन्द भी बजाई जय जय कार किया।

इस धर्म की अपूर्व महिमा को नगर वासियों ने भी देखी, राजा जैनधर्म के इस अपूर्व चमत्कार को देखकर लोगों के सामने कहने लगा जैनधर्म के सिवाय आज तक अन्य धर्म में कोई ऐसा अपूर्व चमत्का देखने में न आया सर्वोत्कृष्ट धर्म है तो संसार में एक जैन धर्म ही है। जिस जैन धर्म के प्रभाव से काष्ठ की तलवार भी लोहे की हो गई, मैं भी क्यों न इस सच्चे धर्म की शरणलु सय चरेहे जमामयलेर त्तह य। कि विषय भोगों से मन फेर अपने पुत्र शत्रुंजय को राज्य का भार सभलादि दिया मन्त्रि ने अपनेपुत्र "देवशर्मा" को मन्त्री पद दे दिया, अब राजा और मन्त्रि जैन मुनि की दिक्षा लेने के लिये गुरु के पास आये, और बहुत से स्त्री पुरुषोंके साथ दीक्षा धारन करली। राजा की रानी सुप्रभा

वह काष्ठ की तलवार ही अपने पास क्यों रखता। आप तो उसका विश्वास करते हो और वह वक्त पर आपको धोखा देगा इस बात को सुनकर राजा को क्रोध हो आया समय देख राजा ने मत्री को, शुभटों को और राज पुत्रों को दरबार में बुलवाया। मंत्री राज पुत्रों तथा शुभटों के सामने अपनी म्यान में से तलवार निकाल कर दिखाई सबने एक स्वर से राज की तलवार की प्रससा की अब राजा ने एक तरफ से सब राज पुत्रों और शुभटों की तलवार देखनी शुरू करदी सबने अपनी २ तलवार दिखलादी, तलवारों देखकर राजा अति प्रसन्न हुआ और सब को यथा योग्य इनाम दिया। अब राजा ने मत्री से कहा मत्री जी आप भी अपनी तलवार मेरे को दिखलाओ, मैं भी देखूं कि आपकी तलवार कितनी बढ़िया है। राजा की बात को सुनते ही मंत्री जान गया कि किसी मेरे दुश्मन ने राजा से मेरी काष्ठ की तलवार की बात कहदी हैं यदि सबके सामने राजा मेरी काष्ठ की तलवार देख लेगा तो न मालूम सबके सामने मेरे को क्या कहेगा यह सोचकर मत्री अपने देव गुरु धर्म का स्मरण कर अपने दिल में कहने लगा कि यदि मेरे दिल में देव गुरु धर्म की पक्की श्रद्धान होतो यह काष्ठ की तलवार इसी समय लोहे की बन जावे यह कह झट से उसने म्यान में से काष्ठ की तलवार खेंची-वह सूर्य के समान तेज वाली हो गई अथवा यों कहिये कि बिजली की तरह चमकती हुइ लोह मयी दिखाई दी। मत्री की तलवार को देख कर सब आश्चर्य में पड़ गये। कचहेरी में बैठे हुये चुगल खोर पर राजा की दृष्टि पड़ी और बोला-अरे दुष्ट तू तो कहता था मंत्री के पास काष्ठ की तलवार हैं। सामने भी तैने इतनी बड़ी भारी झूठ बोली, चुगलखोर देखता का ता रह गया। मत्री हाथ जोड़कर बोला-श्री महाराज -सज्जन पुरुष

राजा को सब देवों का अंश मानते हैं इस लिये धर्मात्मा एवं गुणी मनुष्य का कर्तव्य है कि राजा को सर्व देव मय समझ कर राजा के सामने झूठ न बोले। इस प्यारे बन्धु ने जो आप से मेरी काष्ठ की तलवार की बात कही थी इस का भी एक कारण था, इस लिये आप इस पर क्रोध न करें जो भी कुछ इसने कहा वह सत्य ही कहा था। राजा बोला तो मन्त्री जी तुम्हारी काष्ठ की तलवार थी तो यह ऐसी चमकती हुई लोहे की तलवार कैसे बनगई। मन्त्री ने आद्योपान्त अपनी सब राम कहानी राजा को कह सुनाई और कहा श्री महाराज—लोहे के शस्त्र रखने का है कि लुटेरों का ही काम है। .. का शस्त्र जीव का घात करने वाला है। धर्म रूपी शस्त्र जीवों का रक्षक है, देव गुरु धर्म का मेरे को दृढ विश्वास था जिसकी अपार कृपा से ही यह काष्ठ की तलवार लोहे की बन गई। यह सुनकर राजा और दरबार के सब लोगों ने मंत्री जी के पग पुजे, देवताओं ने स्वर्गलोक से आकर पंच दिव्य प्रकट किये देव दुन्द भी बजाई जय जय कार किया।

इस धर्म की अपूर्व महिमा को नगर वासियों ने भी देखी, राजा जैनधर्म के इस अपूर्व चमत्कार को देखकर लोगों के सामने कहने लगा जैनधर्म के सिवाय आज तक अन्य धर्म में कोई ऐसा अपूर्व चमत्कार देखने में न आया सर्वोत्कृष्ट धर्म है तो संसार में एक जैन धर्म ही है। जिस जैन धर्म के प्रभाव से काष्ठ की तलवार भी लोहे की हो गई, मैं भी क्यों न इस सच्चे धर्म की शरण लूं सब चरेरे जमामयलेर चाहिये। फिर विषय भोगों से मन फेर अपने पुत्र शत्रुंजय को राज्य का भार सम्भला दिया मन्त्रि ने अपने पुत्र "देवशर्मा" को मन्त्री पद दे दिया, अब राजा और मन्त्रि जैन मुनि की दिक्षा लेने के लिये गुरु के पास आये, और बहुत से स्त्री पुरुषों के साथ दीक्षा धारन करली। राजा की रानी सुप्रभा

यह काठ की तलवार ही अपने पास क्यों रखता। आप तो उसका इतबार करते हो और वह वक्त पर आपको धोखा देगा इस बात को सुनकर राजा को क्रोध हो आया समय देख राजा ने मंत्री को, शुभटों को और राज पुत्रों को दरबार में बुलवाया। मंत्री राज पुत्रों तथा शुभटों के सामने अपनी म्यान में से तलवार निकाल कर दिखाई सबने एक स्वर में मंत्री की तलवार की प्रशंसा की अब राजा ने एक तरफ से सब राज पुत्रों और शुभटों की तलवार देखनी शुरू करदी सबने अपनी २ तलवार दिखलादी, तलवारें देखकर राजा अति प्रसन्न हुआ और सब को यथा योग्य इनाम दिया। अब राजा ने मंत्री से कहा मंत्री जी आप भी अपनी तलवार मेरे को दिखलाओ, मैं भी देखूं कि आपकी तलवार कितनी अच्छी है। राजा की बात को सुनते ही मंत्री जान गया कि किसी मेरे दुश्मन ने राजा से मेरी काठ की तलवार की बात कहदी है यदि सबके सामने राजा मेरी काठ की तलवार देख लेगा तो न मालूम सबके सामने मेरे को क्या कहेगा यह सोचकर मंत्री अपने देव गुरु धर्म का स्मरण कर अपने दिल में कहने लगा कि यदि मेरे दिल में देव गुरु धर्म की सच्ची श्रद्धान होतो यह काठ की तलवार इसी समय लोहे की बन जाओ यह कह झट से उसने म्यान में से काठ की तलवार खींची—वह गर्म के मान तेज वाली हो गई अगर यों कहिये कि बिजली की तरह चमकती

राजा को सब देवों का अश मानते हैं इस लिये धर्मात्मा एव गुणी मनुष्य का कर्तव्य है कि राजा को सर्व देव मय समझ कर राजा के सामने झूठ न बोले। इस प्यारे बन्धु ने जो आप से मेरी काष्ठ की तलवार की बात कही थी इस का भी एक कारण था, इस लिये आप इस पर क्रोध न करे जो भी कुछ इसने कहा वह सत्य ही कहा था। राजा बोला तो मन्त्री जी तुम्हारी काष्ठ की तलवार थी तो यह ऐसी बढिया लोहे की तलवार कैसे बनगई। मंत्री ने आद्योपान्त अपनी सब राम कहानी राजा को कह सुनाई और कहा श्री महाराज—लोहे के शस्त्र रखनेकाहे र क लूमनकेवनेरर।. का शस्त्र जीव का घात करने वाल है। धर्म रूपी शस्त्र जीवों का रक्षक है, देव गुरु धर्म का मेरे को दृढ विश्वास था जिसकी अपार कृपा से ही यह काष्ठ की तलवार लोहे की बन गई। यह सुनकर राजा और दरबार के सब लोगों ने मंत्री जी के पग पुजे, देवताओं ने स्वर्गलोक से आकर पच दिव्य प्रकट किये देव दुन्द भी बजाई जय जय कार किया।

इस धर्म की अपूर्व महिमा को नगर वासियों ने भी देखी, राजा जैनधर्म के इस अपूर्व चमत्कार को देखकर लोगों के सामने कहने लगा जैनधर्म के सिवाय आज तक अन्य धर्म में कोई ऐसा अपूर्व चमत्का देखने में न आया सर्वोत्कृष्ट धर्म है तो ससार में एक जैन धर्म हीं है। जिस जैन धर्म के प्रभाव से काष्ठ की तलवार भीं लोहे की हो गई, मैं भी क्यों न इस सच्चे धर्म की शरणा सय चरेहे जमोमयलेर चह य। कि विषय भोगों से मन फेर अपने पुत्र शत्रुंजय को राज्य का भार सभलादि दिया मन्त्रि ने अपनेपुत्र " देवशर्मा " को मन्त्री पद दे दिया, अब राजा और मन्त्रि जैन मुनि की शिक्षा लेने के लिये गुरु के पास आये, और बहुत से स्त्री पुरुषोंके साथ दीक्षा धारन करली। राजा की राणी सुप्रभा

मंत्री की स्त्री सोमश्री और शहरकी बहुतसी स्त्रियोंने "श्रीमती' आर्या के पास दीक्षा लेली बहुतसे शहर के नर नारियोंने श्रावकके व्रतधारण किये

विष्णुश्री अर्हदास मे कहने लगी सेठ जी यह धर्म का प्रभाव मैंने

देखा है इस से ही मरे को दृढ सम्यक्त्व रतन की प्राप्ती हुई सेठ अर्हदास बोला—प्रिये जो तूने आखों मे देखा है, म भी उसका श्रद्धान करता हू उसे चाहता हूँ ओर उस मे रुचि करता हू जिन धर्म की महिमा ही ऐसी है। सेठ की अन्य स्त्रियों ने भी विष्णुश्री की कही हुई बात की सराहना की किन्तु छोटी स्त्री कुन्दलता बोली—जो तैंने कहा सा सब झूठ है, ऐसी झूठी बात को सची बना के सुनाने मे न मालूम तेरे को शर्म क्यों नहीं आती मैंतरी इस बातका न श्रद्धान करती हू, और न म चहाती हूँ और न मेरेको तेरी इनबातो म रुचिहै। राजा मन्त्रि विचारने लगे कि देखो यह कैसी दुष्टा नारि है, विष्णुश्री की प्रत्यक्ष आखों देखी हुई बात को भी यह झूठ बतला रही है बस प्रातः काल होते ही इसको गधे पर चढवाकर शहर से बाहर निकलवा दूगा। चोर सोचने लगा कि यह सत्य है कि ऊची जाती का होकर भी दुष्ट अपने स्वभाव को नहींछोडता यदि अग्नि चन्दनकी लकडी की भी हो तो वह अवश्य जलावैगी जो जिसका स्वभाव होता है वह भला कैसे बदल सकता है कहा भी है कि—

श्लोक—काकस्य गात्रं यदि कांचनस्य, माणिक्य रत्नं यदि चंचु देशे। एकैक पक्षे ग्रथितं मणिनाॅ, तथापि काकोनतु राज हंसः॥ ९॥

भा०—यदि कोई सज्जन मनुष्य काग के शरीर कों सोने का बना देवे चूच में मोती और पाखों मे मणियाजड़ देवे तो भी काग जो है वह काग ही रहेगा वह कभी राज हंस बनही नहीं सकता ऐसेही इस कुन्द

लना ने भले ही उत्तम घर में जन्म भीले लिया और ब्याही भी यह अच्छे घर में आई किन्तु पूर्व कर्म के उदय से इसको अच्छी बात भी बुरी लगती है अर्हदास नाग श्री से बोला—भद्रे अब तुम भी अपने दृढ सम्यक्त्व रत्न प्राप्ती की कथा सुनाओं—नाग श्री बोली स्वामीनाथ जी सुनिये—

❀ ५ नाग श्री का...कथा कहना ❀

काशी देश में एक बनारसी नाम की अति प्रख्यात नगरी है उस नगरी में ही मेरा जन्म हुआ था बनारसी नगरी में एक चन्द्र वसीय, "जितारी" नाम का राजा था उसकी रानी का नाम" कनक चित्रा था रानी के उदर से उत्पन्न हुई एक पुत्री थी जिसका नाम मु डिका देवी था मु डिका को एक बडी भारी आदत पड़गईथी कि वह हर रोज मिट्टी खाया करती थी मिट्टी खाने ने उसके शरीर को रोगने घेर लिया, रोग से वह हर समय पीडित रहने लगी।

राजा के मत्री का नाम सुदर्शना था और उसकी धर्म पत्नी का नाम सुदर्शना था। एक दिन राज पुत्री मु डिका के पुन्योदय से वृषभश्री नाम की जैन साध्वी बनारसीनगरी में पधारी नगरी के नर नारि सब गुरनी के दर्शनों व उपदेश सुनने को आये और मु डिका भी अपनी माता जी के साथ गुरनी के पास आई गुरनी के महा प्रभाव शाली उपदेशा मृत को सुनकर बहुत से नर नारियों ने श्रावक के व्रत धारण कर लिये मु डिका के ऊपर ता गुरनी के उपदेश का और भी गहरा असर पड़ा और उसने भी हाथ जोड़कर श्राविका के व्रत ले लिये और उसने गुरनी जी के कहने से मिट्टी का खाना भी छोड दिया जो गुरनी से उसने व्रत लिये थे उनका निर्दोष (अति चार रहित) पालन करने लगी। उन

अतिचार रहित व्रतों के प्रभाव से मुंडिका के शरीरका सब रोग जातारहा और वह निरोग हो गई एक दिन वह गुरनी के पास आकर कहने लगी कि श्री गुरनी जी महाराज जिस दिन से मैं जैन धर्म के व्रत करने लगी हूँ बस तब से ही मैं तो आनन्द में हूँ और मेरी देही का रोग भी सब चला गया है गुरनी जी बोली बाई जो शुद्ध सम्यक्त्व रत्न का पालन करती है उसको स्वर्ग के सुख प्राप्त होते हैं चक्रवर्ती बलदेव वासुदेव आदि की ऋद्धि मिलती है और कहा तक कहिये वह केवल ज्ञान प्राप्त कर मोक्ष तक पालेता है तो इस मामूली से रोग के मिटने की तो बात ही क्या है—

मुन्डिका घर आई—जब वह वर योग्य हुई तो जितारी राजा ने उसके विवाह केलिये स्वम्बरमडप रचावाया और बड़े राजा महाराजा तथा उनके पुत्रों को बुलाया किन्तु मुन्डिका के एक भी वर पसन्द नहीं आया अर्थात् उसने किसी को नहीं वरा और स्वयम्बर मण्डप से अपने घर को चली आई और बाहिर से आये हुये भी सब अपने २ स्थान को चले गये। उस समय तुण्डा देश के चक्रकोट नाम के नगर में 'भगदत्त' नाम का राजा राज्य कर रहा था। उसकी रानी का नाम 'लक्ष्मी मती' था उसके मंत्री का नाम 'सुबुद्धि' था उसकी घर वाली का नाम 'गुणवती' था। राजा भगदत्त रूप लावण्य (चतुराई) आदि गुणों में भर पूर था, दान देने में वह कुबेर के समान था, किन्तु था वह जातिहीन था एक दिन भगदत्त ने मुण्डिका के रूप लावण्य की प्रशंसा सुनी, और विचारकिया कि मैं अपना विवाह इस से ही कराऊंगा, उसी समय राजाने जितारी के पास दूत भेज दिया और दूत ने जा भगदत्त का सब संदेशा जितारी को कह सुनाया। उत्तर में राजा जितारी [illegible] दूत अच्छे

अच्छे कुल के राजा व राजकुवारों को ही मैं अपनी पुत्री न दे सका तो भला उस जातिहीन भगदत्त को कैसे दे सकता हू। इस नीच जाति वाले भगदत्त को छोटा सा राज्य प्राप्त होने पर इतना घमण्ड हो गया कि वह अब मेरी पुत्री के लेने की भी इच्छा करने लग गया अच्छे कुल के जो होते हैं वह दूत द्वारा ऐसे भद्दे समाचार नहीं कहलाया करते नीति शास्त्र में ठीक ही कहा है कि—

श्लोक—दिव्यं आम्र रसं पित्वा, गर्वं नो याति कोकिलः।
पित्वा कर्दम पानीयं, भेको टर टरायते ॥ १ ॥

भा०—कोयल बसन्तऋतु में आम्रकी मंजरी (आम के रस को) पी कर भी अहंकार नहीं करती किन्तु वह तुच्छ स्वभाव वाला मिंडक कीचड़ वाले गन्दे पानी को पीकर टर्र टर्र पुकारता ही रहता है। अये दूत तेरा राजा भी मिंडक की तरह ही है। दूत बोला—राजन् आप देखने में तो बड़े अच्छे मालूम होते हो किन्तु बातों से मालूम होता है कि आप बुद्धि हीन हैं। जिस भगदत्त के बड़े २ राजामहाराजा आकर चरण पूजते हैं आप ने उनको नीच कैसे बतला दिया, सज्जन वही होता है जो जन्म को न देखकर गुणों को देखता है, देखिये पद्म कमल कीच से उत्पन्न होता है तो क्या वह आदरनीय नहीं होता, इस लिये आप मेरा कहा मानो और अपनी पुत्री हमारे राजा को व्याह दो। जितारी बोला—यदि भगदत्त युद्ध में सन्मुख आवे तो मैं उसको रणांगण [युद्ध भूमि] में सब मनोवाञ्छित दूंगा।

दूतने जाकर भगदत्त से सब समाचार कह सुनाये, सुनते ही राजा क्रोध में भर गया और मंत्री को बुला कर सब बातें कहीं और पूछा

अपने को अब इसके लिये क्या करना चाहिये। मन्त्री बोला—श्री महा-
राज सब से पहिले आप अपनी सैन्य को संभालो' सैनकों को खूब इनाम
दो जिस से इनाम पाये हुये शुभट युद्ध स्थल में दिल खोल कर लड़ेंगे
और फिर युद्ध में आपकी जीत होगी। राजा बोला—मन्त्री तुमने जो कहा
वह मेरे हित के लिये कहा।

मन्त्री के कथनानुसार राजा ने सब शुभटों को इनाम दिया अब
राजा ने युद्ध के लिये तैयारी कर महल में रानी लक्ष्मीवती के पास आया
और युद्ध के लिये चढाई का समाचार कहा—रानी बोली स्वामी नाथ
आप क्यों व्यर्थ हठ कर रहे हो, जहा दोनों पक्ष वालों की सामानता होती है
वहां विवाह और मित्रादि की बातें हुआ करती हैं। जबकि आपकी और
जितारी की सामानता नहीं है तो फिर आप क्यों विवाह के लिये इतने
चट पटा रहे हो, आप मेरा कहा मानो और युद्ध के विचार को छोड़ो।
भगदत्त बोला—अरी भोली तू इन बातों को नहीं समझती। कोई साधारण
मनुष्य तो कहता तो मैं उसका कोई ख्याल नहीं करता किन्तु
जितारी को अपने बल का बड़ा घमण्ड है, उसने अभीमान में आकर ही
मेरे को युद्ध स्थल में बुलाया है। यदि अब मैं चुप होकर बैठ जाऊ गा
तो मेरे सेवा में रहने वाले राजा लोग मेरे को नीची निगाह से देखेंगे।
ससार में शूर वीरों का जीना ही सार्थक है, झूठा अन्न खाकर तो काग
कुत्ते भी जीते रहते हैं, ऐसे कायर होकर जीने में कुछ लाभ नहीं। यह
कह राजा मन्त्री और सेना को साथ ले जितारी राजा पर चढ खड़ा हुआ

राजा के प्रयाण करते समय रानी ने कहा—प्रभू आपका मार्ग में
कल्याण हो।

भगदत्त को मार्ग में अनेक शुभ सकुन हुए। उधर बनारस

नगरी के जितारी राजा को किसी खबरदार ने खबर दी कि श्रीमहाराज भगदत्त सेना लेकर आप के ऊपर चढ कर आ रहा है।

आप उसको जीतने का उपाय कीजिये, ये सुनकर राजा बोला—अरे है कौन वह भगदत्त जो मेरे ऊपर चढाई कर सके। सिंह पर हिरणों ने राहु केतु पर चन्द्रमा तथा सूर्य ने घोड़े पर गधे ने, बिलाव पर मुस्सों ने गरुड पर सर्पों ने कुत्तों पर बिल्ली ने, काल पर प्राणियों ने और सेना पर कौओंने कभी जय पाई है, यह बात न पहले कभी हुई न और कभी होने की न यह बात देखने तथा सुनने में आई यदि भगदत्त मेरे ऊपर चढ—कर भी आजावे तो क्या बात है। जब तक सूर्योदय न हो तब तक ही अन्धकार अपने पग जमाये खड़ा रहता है किन्तु सूर्योदय होते ही जैसे अन्धेरे का खोज नहीं पाता ठीक इसही प्रकार जब मैं खड़ा होऊगा तब भगदत्त भागता ही नजर आयेगा।

यह तो बात कह ही रहा था कि इतने मे खबर लगती है कि भगदत्त ने काशी देश को घेर लिया है। ये सुनते ही जितारी सेना लेकर चढ खड़ा हुआ मार्ग में अनेक कु सकुन हुए, ये अप सकुन क्या हुए मानों यह सूचना दे रहे थे कि राजा तुम युद्ध स्थल में मत जाओ नहीं तो हार कर आओगे। सुदर्शन मत्री बोला—श्रीमहाराज आपको जो यह कुसकुन हो रहे हैं इनका भी तो कुछ विचार करना चाहिये। मेरे ख्याल से तो भगदत्त के साथ 'मुण्डिका' बाई का विवाह कर देना ही अच्छा है, ऐसे करने से आप सब सुख पूर्वक जीवन बीता सकेंगे, आप व्यर्थ के झगड़े में पड़कर क्या लोगे ! पुण्य हीन राजा बोला—मत्री जी घबराता क्यों है ? मेरी तलवार की चोट को सहने वाला कौन है। जैसे वज्र के प्रहार को सिर में सहना हाथों से समुद्र को तीरकर पार होना, आग की सय्या पर सुख की नीन्द सोना, हर एक ग्रास मे जहर को खाना कठिन है ठीक

इसही प्रकार मेरी तलवार की चोट को सहना है।

मंत्री बोला—अन्नदाता भगदत्त के पास सेना बहुत बडी है और सैनिक बड़े शूरवीर एव पूरे साहसीक हैं, भगदत्त के पास युद्ध की सामग्री भी काफी है, आप इन सब बातों को भी खूब अच्छी तरह से सोच विचार लेना।

राजा बोला—मंत्री तुमने कहा सो ठीक है किन्तु सिद्धि और जय तो प्राक्रम से ही मिला करत है केवल अधिक सामग्री से नहीं। यह कह जितारी अपनी सेना ले अपने देश की हद पर जा डेरे डाल दिये। इधर भगदत्त का मत्री बोला—श्रीमहाराज एक बार मेरे कहने से आप अपना दूत जितारी के पास भेजिये। यह युद्ध का नियम होता है कि—पहले दूत को भेजा जावे, दूत जाकर राजा को समझावे, यदि वह दूत का कहा न मानेगा तो फिर वही करना जो आप विचार कर आये हो।

मत्री की सलाह को मानकर भगदत्त ने 'दिवाकर' नाम के दूत को बुलाया, वह दूत बात कहने में बडा चतुर था बात को याद रखने वाला, बोलने में बड़ा हुशयार था, दूसरों के अभिप्राय को समझने वाला वीर धीर महा साहासीक सत्यवादी था, भगदत्त ने दूत को सारी बातें समझा दी। अब दूत जितारी के पास गया और हाथ जोड़ कर बोला—श्रीमहाराज आप अपनी पुत्री मुण्डिका का विवाह हमारे राजेश्वर भगदत्त के साथ कर के सुख से राज्य करें। यदि आप मेरी इस बात को न मानोगे तो आप के लिये अच्छा न होगा, इस बात के न मानने से आपका और आपके राज्य का सत्यानाश हो जायगा। अनुचित कार्य का प्रारभ करना, सज्जनों से विरोध करना, बलवानों से वैर करना, स्त्रियों का विश्वास करना, ये चारों मृत्युके द्वार हैं। इस लिये बलवान भगदत्त के साथ आपको युद्ध करना उचित नहीं है, राजन्

ऐसा काम करो जिस से आप भी आनन्द से जीवन बिता सको और ससार में आप की कीर्ती भी जैसे की तैसी बनी रहे।

दूत के बचन सुनकर राजा को बडा क्रोध आया और बोला-अरे दूत क्यों घणी बक २ कर रहा है, तेरे राजा के बल को मैं युद्ध स्थल मे देखू गा, जो न होना हो वह भला ही क्यों न हो जावे किन्तु मैं अपनी पुत्री भगदत्त को न दू गा, महा पुरुष जिस बात की प्रतिज्ञा कर लेते हैं फिर उसको वह छोडा नही करते, उनका सर्वस्व नाश भी क्यों न हो जाए। बचन में बन्ध के हरिश्चन्द्र राजा ने चाण्डाल के घर जा कर पानी भरा, बचन में बन्धके भगवान श्रीरामचन्द्र ने बन में जाकर बास किया, मैं चन्द्रवन्सी होकर भला क्यों अपनी प्रतिज्ञा भङ्ग करू। सुदर्शन मत्री बोला-श्रीमहाराज क्यों न इस बकबादी दूत को मरवा दिया जावे। राजा बोला-मत्री जी! दूत का मारना उचित नहीं। दूत के मारने से राजा और मत्री दोनों नरक के अधिकारी हो जाते हैं। राजा की आज्ञा से सिपाहियों ने दूत का काला मुख कर धक्का देकर सेना से बाहिर निकलवा दिया।

दूत भगदत्त के पास आया-राजा बोला अरे दूत यह तेरा काला मुख किसने किया। दूत बोला-अन्नदाता- ये काला मुख मेरा नहीं किया ये काला मु ह आपका ही जितारी ने किया है, जितारी अपने बाहुबल के सामने किसी को कुछ समझता ही नहीं और वह आप के साथ युद्ध के लिये तैयार है। दूत के कथन को सुनकर भगदत्त ने एक दम लड़ाई का बाजा बजवा दिया, दोनों राजाओं की सेना रणागण में आ डटी आज्ञा पाते ही हाथी से हाथी घोड़े से घोड़ा, रथ से से रथ, पैदल से पैदल भिड़ गये और आपस मे मार काट होने लगी अन्त में भगदत्त की सेना ने जितारी की सेना को भगाय ही दी। सेना को भागती देखकर

सुदर्शन मंत्री बोला कि महाराज देखिये आपकी सेना के पैर उखड़ गये हैं सेना भाग चली है इसलिये आपको भी चाहिये कि इस नगरी को त्याग दें। जितारी बोला मंत्री क्या बकता है, आप रण में मर जावेंगे तो कुछ परवाह की बात नहीं मंत्री मरने से मैं डर कर भाग जाऊं तो यों हुआ ही करती है। राजा के निश्चय को देख कर मंत्री बोला राजन व्यर्थ के मरने से क्या लाभ है। यदि मनुष्य जीवित रहे तो एक नहीं सैकड़ों लाभ उठा सकता है मंत्री के कथन से जितारी के दिल में कमजोरी पैदा हो गई जिसको ढील ढाल देख कर भगदत्त बोला अरे जितारी देखता क्या है अब तेरा काल आ पहुंचा है ठहर ठहर जाता कहां, ये कह कर भागते हुए जितारी का पीछा करने लगा तो मंत्री बोला—श्री महाराज भागते हुए शत्रु का पीछा नहीं किया करते। और बलवान हैं, जो बलवान होते हैं वह भागे के पीछे नहीं भागा करते। यदि भागने वाले फेर कर आल-म्बन कर मरना निश्चय कर पीछा करने वाले पर वार करदे जिससे एक ऐसे बड़े भारी अनर्थ होजाने की संभावना हो जाती है। मंत्री का कहा मान कर भगदत्त ठहर गया। भगदत्त ने सेना को आज्ञा दी कि जाओ नगरी को लूट लो हुक्म होते ही लुटेरे नगरी में प्रवेश कर गये, राजा कर्मचारी न रहने से नगरी में एक दम भगदड़ मच गई, सेठ साहूकार अपना धन माल लेकर भागने लगे। उधर रानी मुंडिका को भी मालूम हो गया कि पिता जी हार गये हैं जिसके लिये भगदत्त ने इतना घोर संग्राम किया अब भला वह मेरे से जबरदस्ती विवाह करेगा और अपने महलों में ले जावेगा और मैं उसको नापसन्द कर चुकी हूं, अब मेरे को भी चाहिये कि मैं अपने सतीत्वकी रक्षा करूं उसने अपने सतीत्वकी रक्षा के लिये अनेक उपाय किये और सोचे, किन्तु वह सब निष्फल रहे। अब उसके पास एक ही उपाय शेष रहा वह क्या कि कूप (कुवे) में कूदने का। मुंडिका सागारी संथारा कर मन में पंच परमेष्ठी महा मंत्र का ध्यान कर पास वाले कुवे में जा कूदी।

मुंडिका के सम्यक्त्व रत्न के तथा शील के सहायक देवताओं ने कुए का पानी सुखा दिया और कुवे की जगह महल खड़ा कर दिया

उस महलों के बीचों बीच एक सिंहासन रचकर उस पर सती को बैठा दी।

अब मुण्डिका देवी सिंहासन पर बैठी हुई ऐसे सोभा पाने लगी जैसे कि अग्निकुण्ड का पानी करने के पश्चात् सीता सती सिंहासन पर बैठी सोभा पाती थी। देवों ने देव दुन्द भी बजाई पंच दिव्य प्रकट किये धन्य सती मोटी सती ऐसे शब्दों द्वारा आकाश को गुञ्जा दिया और कहा—सती जी ? आप घबराना मत, हम भगदत्त का इन्तजाम करदेंगे अब भगदत्त के सैनिक लूट खसोट मिचाते हुये राजमहल की तरफ आने लगे तो देवताओं ने सब सैनिकों के पग स्थम्भन कर दिये उनके पग स्थम्भरूप हो गये। सैनिकों के पग स्थम्भन की तथा मुण्डिका के सत्य शील महिमा सिपाहियों द्वारा सुनकर बड़ा आश्चर्य पाया और भामा हुआ वहा देखने के लिये आया सती के सत्य की महिमा को देख कर भगदत्त का सब गर्व जाता रहा और हाथ जोड़कर विनय पूर्वक सती के चरणों में पड़ गया और कहा सती जी आज से तू मेरी धर्म बहन और मैं तुम्हारा धर्म भाई। यह जो मैंने किया सब अज्ञान वस किया, मेरे अपराध को क्षमा कर, यह कह बार २ सती जी के चरणों में पड़ा। इधर देवताओं ने सैनिकों के पग खोल दिये।

भगदत्त ने धर्म को बीच में कर (सौगन्ध खा कर) जितारी राजा को बुलाया और उसके पैरों में पड उस से भी क्षमा मागी। सती मुण्डिका देवी बोली—प्यारे भगदत्त भाई जिस काम वासना के वस होकर तुमने इतना घोर संग्राम किया और जीवों के प्राण लिये वह काम भोग जो हैं सो वह मधु [सहद] से लिपटी हुई तलवार के समान हैं, जैसे शहद से लिपटी हुई तलवार को कोई अज्ञानी चाटने लगे तो सहत उस को भला ही मिठा लगे किन्तु जिह्वा कटने से उसको घोर महा वेदना का

अनुभव करना पड़ेगा ऐसे ही यह विषय भोग भोगने मे तो आनन्द दायक दिखते हैं किन्तु भोगने के पश्चात् ये भोग चौरासी लाख योनी के महा दुःख दिखाते हैं।

गाथा—सल्लं कामा विसं कामा कामा आसी विसो वमा।
कामेय पत्थेमाणा, अकामा जन्ति दुग्गई ॥१॥उ० अ० ६
गा० ५३

भा० अये राजन् ये काम भोग शल्य अर्थात् काटे और भाले की अणी के समान दुःख दायक हैं, ये काम भोग विष [जहर जो एक बार गलवे के लगते ही प्राण हरन कर लेता है] के समान है, ये काम भोग दृष्टि विष सर्प के समान हैं जो इन काम भोगों की इच्छा करेगा या बाल मृत्यु को प्राप्त होगा वह दुर्गति में जा कर पड़ेगा।

गाथा—जहा किंपाग फलाणं, परिणामो न सुन्दरो।
एवं भुत्ताण भोगाणं, परिणामो न सुन्दरो ॥२॥
उ० अ० १६ गा० १७

भा० किंपाक नाम के वृक्ष के फल खाने में बड़े स्वादिष्ट होते हैं, सूंघने में मधुर सुगन्ध वाले होते हैं किन्तु वह फल खाते ही [गले के नीचे उतरते ही] प्राण हरण कर लेते हैं यही हाल इन काम भोगों का है ये भोग भोगने मे बडे सुहावने लगते हैं और भोगने के पश्चात् यह दुःख सागरमे डुबाकिया लगाते हैं

गाथा—देव दाणव गन्धव्वा, जक्ख रक्खस किन्नरा। बम्भयारि नमंसन्ति, दुक्करँ जे करेन्तिते ॥३॥ उ० अ०१६ गा० १७

भा० अयि राजन् जिन महा पुरुषों ने इन दुःख दायक विषय भोगों को

त्याग दिया है और नोरतम ब्रह्मचर्य का पालन किया अथवा ससार सागर से पार उतारने वाले ब्रह्मचर्य व्रतको जो धारण करता है वह ससार सागर से पार हो जाता है [मोक्ष को पहुँच जाता है] ऐसे ब्रह्मचर्य व्रत के धारण को देवदान व मान व सब नमस्कार करते हैं।

मुण्डिका सती के उपदेश को सुनकर और उस धर्म के चमत्कार को देख कर भगदत्त को वैराग्य हो आया और लोगों के सामने कहने लगा जैन धर्म से ही जीवों का हित हो सकता है। ससार में कर्म रूपी बन को जलाने वाली अग्नि के समान है तो एक जैन धर्म है, यही सब जीवोंका सच्चा हितैषी है। अपनी पुत्री मुण्डिका के इस अपूर्व चमत्कारको देख कर राजा जितारी को भी वैराग्य हो आया। राजा जितारी और भगदत्त दोनों अपने २ पुत्र को राज्य दे मत्री सुदर्शन और सुबुद्धि के साथ सतगुरु 'सत्य सागर' के पास बडे महोच्छव पूर्वक दीक्षा धारण कर ली। दोनों राजाओं की रानियों ने और दोनो मत्रियो की स्त्रियों ने मुण्डिका सती के साथ 'जिनमती' जैन साध्वी के पास साध्वी पने की दीक्षा ली, शहर के बहुत से नर नारियों ने सजम धारन किया और कितनेक स्त्री पुरुषों ने श्रावक के व्रत लिये बड़ा भारी धर्म का उद्योत हुआ।

नागश्री अर्हदास से बोली–स्वामीनाथ यह धर्म का चमत्कार मैंने आखों मे देखा है, इस धर्म के चमत्कार को देखकर ह मेरे को सम्यक्त्व रत्न मे दृढ रुचि हुई। अर्हदास बोला–मैं भी तेरी बात का श्रद्धान करता हूँ, तैने जो कहा वह सत्य है, मैं भी उस में रुचि करता हूँ।

सेठ की अन्य स्त्रियों ने भी ऐसे ही कहा किन्तु कुन्दलता तो पहिले की तरह ही बोल उठी कि बहन नागश्री जो तैने कहा वह सब झूठ है, मैं तेरी बात को नहीं मानती। कुन्दलता के झूठे हठ को देख कर राजा

और मंत्री को बडा गुस्सा आया और वह सोचने लगे कि कब दिन निकले और कब मिथ्यावादीनी को गधे पर चढ़वा कर शहर से निकलवाऊ। चोर विचारने लगा—जैसे उल्लू को सूर्य का प्रकाश अच्छा नहीं लगता ठीक इस ही प्रकार इस का भी धर्म की बात अच्छी नहीं लगती यह स्त्री बड़े नीच स्वभाव की है।

अब सेठ अर्हदास पद्मलता से कहने लगा—भद्रे तुम भी अपने दृढ सम्यक्त्व रत्न के प्राप्ती की कथा सुनाओ तब पद्मलता हाथ जोड़कर बोली स्वामीनाथ जी सुनिये।

❀ ६ पद्मलता का—कथा कहना ❀

अङ्ग देश में चंपा नाम की एक अति प्रख्यात नगरी है उस नगरी में ही मेरा जन्म हुआ था। चम्पा नगरी का 'धात्री बाहन' नाम का राजा था उस राजा की रानी का नाम 'पद्मावती देवी' था राजा के पुत्र का नाम 'नय विक्रम' था। उसी नगरी में एक 'ऋषभदास' नाम का सेठ रहता था वह श्रावक सर्व गुण युक्त था सेठ गृहस्थ के षट कर्म का नित्य प्रतिपालन किया करता था।

श्लोक— **देव जाप गुरु भक्तिः, स्वाध्यायः संयमस्तपः।**
दानश्चैव गृहस्थानां, पट् कर्माणि दिने दिने ॥१॥

भा०—ईश्वर के नाम का स्मरण करना (भगवान के नामकी माला फेरना) १ गुरु महाराज की सेवा भक्ति करना २ शास्त्र का स्वाध्याय करना ३ एक व्रत से लेकर बारा व्रत तक का पालन करना, ४ बारा प्रकार के तप में से कोई सा तप ग्रहण करना, ५ दान देना, ६ सेठ ऋषभ दास की धर्म पत्नी का नाम 'पद्मावती' था सेठानी के अङ्ग से उत्पन्न हुई एक पुत्री थी जिसका नाम 'पद्मश्री' था वह रूप लावण्य आदि गुण

युक्त थी। उस नगरी ने एक बोध मत का मानने वाला 'बुद्धदास' नाम का सेठ रहता था उसकी घर वाल का नाम 'बुद्धदासी' था और पुत्र का नाम 'बुद्धसिंह' था। एक दिन सेठ की पुत्री पद्मश्री उपाश्रय में गुरु दर्शन के लिये जा रही थी कि रास्ते मे बुद्धसिंह ने उसके चन्द्रमा समान प्रकाश युक्त मुख को तथा शरीर की सुन्दरता को देख कर कामाध हो गया अपने मित्र से बोला—यह कन्या किस की है ? मित्र ने सब बातें बतला दी। अब बुद्धसिंह अपने घर पर आकर उदास हो खाट पर पड़ गया। पुत्र को चिंतित देख माता बोली—पुत्र? आज भोजन क्यों नहीं जीमता और पानी क्यों नहीं पीता उदास हुआ क्यों पड़ा है, जो तेरे को चिन्ता हो वह कह। कामी को लाज शर्म तो होती ही नहीं, वह लज्जा को तिलांजली दे बोला—माता जी ? यदि तू मेरे को जीवित देखना चाहती है तोऋषभदास सेठ की पुत्री पद्मश्री से मेरा विवाह करवादे नही तो मैं मर जाऊंगा। माता ने पुत्र का कथन अपने पतिदेव से कह दिया

बुद्धदास आकर बुद्धसिंह से बोला—देख पुत्र ? सेठ ऋषभदास जैन धर्म का मानने वाला है, जैन धर्म में मास का खाना और शराब का पीना बहुत बुरा माना गया है और अपन सब मास खाते और शराब पीते हैं वह तो अपने को चण्डाल से भी अधिक बुरा समझता है तो भला अपनी कन्या इस घर में कैसे दे सकता है। प्यारे पुत्र ? मनुष्य को उस ही वस्तु की आशा करनी चाहिये जो मिल सके। पुत्र? तू अपने हठ को छोड़। और चलके भोजन जीमले। पुत्र बोला—पिता जी सो बातों की एक बात है, यदि आप मेरे को जीवित देखना चाहते हैं तो मेरा विवाह पद्मश्री के साथ करादें। माता पिता सोचने लगे कि अहो कामदेव की बड़ी विचित्र माया है, जिस के वस हो पुत्र इतना निर्ल वन गया, यदि हम कुछ उपाय न करेंगे तो यह अवश्य मर

और हम बिना पुत्र के हो जायेंगे ।

ये सोच कर सेठ बोला—पुत्र! धैर्य धारण कर तेरा काम धीरे २ बना दूंगा क्योंकि धीरे २ पानी डालने से ही पृथ्वी भिजा करती है (तर हो जाती है) अब आप और बेटे दोनों यशोधर गुरु के पास जा कपट से जैनी बन गये। बुद्धदास और बुद्धसिंह को जैनी हुआ देख कर ऋषभदास का चित बड़ा प्रसन्न हुआ और बोला—प्यारे बन्धुओ तुम ने बहुत ही अच्छा किया जो मिथ्यात्व पन को छोड दिया और सत्य सनातन जैन धर्म मे चित लगा लिया धीरे २ बुध्ददास का और ऋषभदास का आपस में अत्यधिक स्नेह हो गया अब वह दोनों आपस में मित्र बन गये किन्तु ऋषभदास, उस कपटी के कपट को कुछ भी न समझ सका और एक दिन अपने यहा भोजन जीमने को कह आया नीति शास्त्र में बतलाया है कि—

श्लोक—ददाति प्रतिगृह्णाति, गुह्य माख्याति पृच्छति ।
भुंक्ते भोजयते चैव, षड् विधं प्रीति लक्षणम् ॥ २ ॥

भा०—देना लेना गुप्त बाते कहना और सुनना खाना और खिलाना यह मित्रता के लक्षण हैं। बुद्धदास जीमने के लिए आया थाल मे भोजन परोसा गया सारा काम हो गया पर बुद्धदास थाल पर जीमने के लिये नहीं बैठा। ऋषभदास बोला—भाई जीमता क्यों नहीं । बुद्धदास बोला मेरा आप से एक काम है जब तक आप मेरे कार्य की स्वकृति न दोगे तब तक मैं आपके यहा भोजन नही जीमूंगा। ऋषभदास बोल—भाई जो कहेगा मैं वहीं करूंगा तू भोजन जीमले। बुध्ददास बोला—आप अपनी पद्मश्री की सगाई मेरे पुत्र बुध्दसिंह से कर दो ये दोनो एक धर्म के मानने वाले हैं। और जोड़ी भी इनकी ठीक है ऋषभदस बोला—बन्धु ?

इस छोटी सी बात के लिये इतना आग्रह ? इसके लिये आप कोई चिन्ता न करें, मैं आपके कथन को स्वीकार करता हूँ। सेठ के कहने से बुध्ददास ने भोजन जीम लिया और ऋषभदास ने अपनी पुत्री की सगाई करदी कुछ दिनों के बाद शुभ मुहूर्त में पद्मश्री का विवाह बुध्दसिंह के साथ कर दिया अब बहुत कुछ माल ताल लेकर पद्मश्री सासरे आगई।

पद्मश्री के घर आते ही बुध्द दास और बुध्दसिंह ने एक दम जैन धर्म का मानना छोड़ दिया और वह ऐसे होगये कि जाने कभी जैनधर्म की शरण में ही न गये हों। पद्मश्री को मालूम होगया कि इन्होंने पतितोध्दारक जैनधर्म को छोड दिया है तो अपने दिल में बड़ा भारी दुख माना अब एक दिन वह अपने पिता के पास गई और सब हाल सुनाया सुनकर सेठने दिल मे बहुत दुख माना और बोल–पुत्री –मैं उन कपटियों के कपट को कुछ भी न जान सका धोखे में आकर मेरे से यह काम हो गया। तू अपने धारण किये व्रतो का सम्यक् प्रकार से पालन करती रहना जन्म तो बार २ भी मिल सकता है किन्तु धर्म का बार २ प्राप्त होना महा कठिन है तरे पति और सुसरे ने जैन धर्म छोड दिया यह उन्होंने अच्छा नही किया नीच कभी अच्छा काम ही नहींकिया करते

पद्मश्री बोली–पिता जी ? आप मेरी तरफ का कोई ख्याल मत करें मैं अपने ग्रहण किये व्रतों को न छोडूंगी। पद्मश्री सासरे आगई एक दिन का जिकर है कि बुध्ददास के गुरु "पद्मसिंह" अपने परिवारके साथ बुध्ददास के घर पर आये और पद्मश्री से बोले–पुत्री ? वस्त्रो मे श्वेत वस्त्र ऋतुओं में बसन्त ऋतु रसों मे लवण (नमक) श्रेष्ठ है ऐसे ही सब धर्मों में बुध्द भगवान का धर्म ही श्रेष्ठ है इसलिये तू मेरा कहा मान और बोध धर्मको स्वीकारकर पद्मश्री बोली–महात्मन् संसार मे जन्म मरण के दुखों से छुडाने वाला पतित पावन तो एक जैनधर्म ही है बोध धर्म नही

इसलिये में जैन धर्म को नही छोड सकती ज ग्रहण किये हुए व्रतों को छोड़ देत है वह भाग्य हीन होता है। पद्मश्री के इस करारे उत्तर को सुन कर पद्मसिंह उदास हो अपने स्थान को चला गया।

पद्मश्री के माता पिता (ऋषभदास और पद्मावती) ने अपना आयु निकट आया जान सथारा कर भगवान की भक्ति मे लीन हो काल के समय काल कर स्वर्ग लोक को चले गये माता पिता के काल प्राप्त होने के समाचार सुन कर पद्मश्री ने अपने दिल मे बहुत दुःख माना किन्तु अन्त में ज्ञान बल से संतोष का ही आश्रय लिया। सुसरा बुध्ददास आकर बोला-पुत्री दुःख मत मान क्यों कि काल बड़ा बली है जिसका जन्म हुआ है उसको एक न एक दिन अवश्य मरना पडेगा।

दोहा—राजा राणा छत्र पति, हाथी के असवार।
मरना सबको एक दिन अपनी २ बार ॥ २ ॥
दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती वरिया जीवको, कोई न राखनहार ॥३॥
जाया ते मरसी सही फूले सो कुमलाय।
उगे सो ही आथमें, चिणे सोय ढयजाय ॥४॥

पुत्री सबको दया आती है किन्तु काल तो ऐसा महा निर्दयी है कि जिसका कुछ कहना ही नहीं।

पुत्री ? तेरे माता पिता दोनों मरकर जगल में हिरण हिरणी हो गये, इस बात का मेरे को बड़ा दुःख है। सुसरे की बात को सुनकर पद्मश्री बोलीं—आपको यह कैसे मालूम हो गया।

सुसरा बोला—मेरा गुरु पद्मसिंह भूत भविष्य वर्तमान अर्थात् तीनों काल की बात को जानने वाले है उन्होंने ही अपने ज्ञान द्वारा देखकर यह

बतलाया कि जैनधर्म के मानने से ऋषभदास और उसकी घरवाली नीच गति [पशु योनी-हिरण हिरणी को प्राप्त हुए हैं। पुत्री यदि तू कुछ] अपना भला चाहती है तो जैन धर्म को छोड़ बोध धर्म की शरण ले।

अपने माता पिता की बुराई और जैन धर्म के त्यागने की बात को सुनकर पद्मश्री को बड़ा क्रोध आया किन्तु इस बात का बदला लेने के लिये वह क्रोध को पी गई और विचारने लगी कि क्या ऐसे मिथ्या वादियों के कहने से कुछ हो सकता है। इस बात का बदला लेने के लिये बोली आपके गुरु त्रिकालज्ञ हैं तो मैं उनसे अवश्य बोध धर्म स्वीकार करूंगी। आप मेरी तरफ से अपने साधु सब को निमन्त्रण कर आओ मैं सब महात्माओं को भोजन जीमाकर फिर समस्त कुटुम्ब के सामने बोध धर्म धारण करूंगी। पद्मश्री की इस चाल को बुद्धदास न समझ सका इस लिये खुशी होता हुआ पद्मसिंह गुरु को निमन्त्रित कर आया और आकर पद्मश्री से बोला कि कल को मेरे गुरु तेरे यहां जीमने के लिये आवेंगे। अब दूसरे दिन पद्मश्री ने नाना प्रकार का माल मसालेदार भोजन तैयार किया। भोजन के समय पद्मसिंह अपनी शिष्य मण्डली सहित पद्मश्री के घर आया, पद्मश्री ने उनके पग धोये चरण पूजे बैठने के लिये सबको अलग २ आसन दिये। सेठ और उसका पुत्र तथा समस्त कुटुम्ब सन्तों की सेवा में लग गया।

पद्मश्री ने दासी को आज्ञा दी कि जितने भी यह महात्मा आ रहे हैं इनके बायें पैरों की पगरखी (जुती) उठा ला और सरोता तथा कैंची आदि से उनको खूब बारीक कतर ले। आज्ञा की देरी थी कि दासी गई और पगरखी उठा लाई और उनको खू. बारीक कतर लिया बूर सा बना लिया। पद्मश्री ने उसको लेकर देही में डाल रायता बना लिया और उसमें बढ़िया से बढ़िया मसाले डाल दिये मसालों के डालने से रायता और भी अधिक बढ़िया बन गया।

पद्मश्री ने बोध महात्माओं को भोजन जिमाया नाना प्रकार की मिठाई खिलाई उपर से सब को एक २ प्याली उस रायते की भी पिलाई।

भोजन जीमकर तों महात्मा लोग खुश हुये ही थे किन्तु उस रायते को पी कर तो और भी अधिक प्रसन्न चित हुए किन्तु उनको यह मालूम न हो सका कि इस रायते में तुम्हारी ही जुतिया पड़ी हैं। जीम झूठ कर सब खड़े हो गये कुरला किया फल दिया और हाथ जोड़ कर पद्मश्री बोली भगवन् प्रातःकाल ही मैं आपके डेरे में आकर आपके पास बोध धर्म स्वीकार करूंगी, सबने कहा बहुत ठीक है। बोंध धम और बोंध गुरु ही ससार सागर से पार उतारने वाले हैं और सब पाखण्ड हैं हमारा धर्म ही सच्चा है। यह कह कर जब वह चलके जूतों के पास आये तो क्या देखते हैं कि हर एक जोड़ी का [बाये पग का] जुत्तानहीं है उसी समय उन्हों ने नोकर चाकरों को बुला कर कहा बड़े आश्चर्य की बात है कि ऐसी खुली जगह से हमारे जुत्ते जाते रहे, बतलाओ हमारे जूते कौन ले गया। सबने उत्तर दिया कि हम तों आपके जीमने के तमाशे मे लीन थे, हमें मालूम नही कि आप के जुत्ते कौन ले गया। कोरा सा उत्तर मिलने पर महात्मालोगो ने कोलाहल करना शुरु किया, उनके कोलाहल को सुनकर पद्मश्री आकर बोली– गुरु देव आप तों तीनों काल की बात को जानने वाले हो तो क्यों नही आप अपने ज्ञान द्वारा देख लेते कि हमारे जुत्ते कौन ले गया। महात्मा बोले–अरी भोली बाई? हम ऐसे ज्ञानी नहीं हैं जो जुत्तों की बात को बता सकें। पद्मश्री बोली–गुरु जी फिर आप त्रिकालज्ञ ही कैसे हुये। आप तो कहते हैं कि हम त्रिकालज्ञ है– भला जिसको छोटी २ बातों का भी ज्ञान न हो वह सर्वज्ञ होने का दावा कैसे कर सकता है और आपने बिना ज्ञान के ही यह कैसे कह दिया था कि सेठ ऋषभ दास और सेठानी पद्मावती मर कर जङ्गल में हिरन हिरनी हो रहे हैं। हा यह बात तो मैं बतला सकती हू कि आप के जो जुत्ते हैं वह आप लोगों के उदर (पेट) में हैं। महात्मा बोले कि क्या जुत्तें हमारे पेट में हैं? पद्मश्री बोली जी हा जुत्ते आपके पेट में ही हैं। यदि विश्वास न हो तो मैं अभी दिखला देती हूँ यह कह एक महात्मा को वमन होने की गोली खिला दी गोली खाते ही महात्मा को वमन हो गया

अब वह बारीक टुकडे को जो पेट मे जा कर फूल गये थे वह धुलवाकर दिखा दिये। अब सब महात्मा मुंह मे हाथ डाल २ कर उलटी (वमन) करने लगे और बडे भारी शर्मिन्दे हुये और गुस्से मे भरकर बोले—अरे पापी बुद्धदास तैनेही अपनी पुत्र वधुको बहकाकर इतना बडा भारी अयोग्य कार्य करवा दिया। गुरुओं के इस महा अपमान को देख कर बुद्धदास गुस्से में भर कर पद्मश्री से बोला—अरी पापिनी ! तू हमारे घर योग्य नही बस इसी समय तू हमारे घर से निकल जा। यह कह कर बुद्धदास ने बुद्धसिंह का और पद्मश्री का सब गहना गूठी माल ताल खोस धक्का दे घर से निकाल दिये पद्मश्री का घर छूट गया गहना जेवर वस्त्राभूषण जाना रहा पर सती ने कुछ परवाह न की धर्म पर दृढ रही, कहा भी है कि—

श्लोक—निन्दन्तु नीति निपुणा यदिवा स्तुवन्तु, लक्ष्मीः समा विशतु गच्छतु वा यथेष्टम्। अद्यैव वा मरण वस्तु युगान्तरे वा, न्याय्यात्पथः प्रविचलंति पदं न धीराः ॥५॥

भा०—धर्यात्माओं का विचार रहता है कि हमारी चाहे कोई बडाई करे या बुराई, लक्ष्मी आवे या चली जावे, चाहे आज ही मृत्यु आजावे या कोटी वर्षो तक जीऊं किन्तु धर्म को न छोडूं। प्यारे बन्धुओं ! धर्मात्माओं पर चाहे कितने ही कष्ट आकर पड़े किन्तु वह धर्म से एक चरण भी पीछे नहीं धरते। शहर से वाहिर निकलते ही पद्मश्री अपने पतीदेव से बोली कि नाथ आप और कहीं न चलकर सीधे मेरे पिता के घर चलिये मेरे भाई आपको वहुत कुछ माल ताल देगें वहा आपको किसी बात की कमी न रहेगी। बुद्धसिंह बोला—प्रिय परदेश में जाना भीख मागकर खाना अच्छा है किन्तु निर्धनावस्था में सासरे जाना और सासरे वालों से पैसा लेना किसी तरह भी अच्छा नहीं।

अब पति पत्नी दोनों परदेश जाने के लिये तैय्यार हो गये शहर के थोडी ही दूर पर वन में दो सेठों का पडाव पड़ा हुआ था साथ समझ

कर वह सेठों के डेरे में जाकर ठहर गये। दोनों सेठ पद्मश्री के महा दिव्य रूप को देख कर मोहित हो गये। उन दोनों ने अलग २ अपने २ दिलमें विचार किया कि यह एकके ही जा सकती है दोनों के नहीं। एक सेठ ने विचार किया कि इस को भोजन मे विष (जहर) मिलाकर दिखा दूं बस यह मर जायगा, दूसरे ने भी यही विचार किया अब दोनों सेठों ने पृथक् २ [अलग] भोजन बनवा जहर मिलाकर धर लिया वह दोनों अपनी २ चतुराई में रहे आपस में उसका भोजन उसने जीम लिया और उसका उसने। भोजन जीम २ कर वह लेट गये सोने की देर थी कि एक दम से जहर चढ गया और वे बेहोश हो गये। उन दोनों के बचे खुचे अन्न को बुद्धसिंह खाने को तैयार हुआ तो पद्मश्री बोली स्वामीनाथ अनजाने से प्रेम करना उनके भोजन को जीमना ठीक नहीं होता। और दूसरे अब रात्रि भी हो चली है इस लिये आप मेरा कहा मानो और रात्रि को भोजन मत खाओ धर्म शास्त्र मे लिखा है कि–

श्लोक–मेधाॅ पिपीलिका हन्ति, यूका कुर्याज्ज लोदरम् ।
कुरुते मक्षिका वान्तिं, कुष्ट रोगं च कोलिकः ॥६॥
कंटकं दारु खंडंच, स्वर भंगाव जायते ।
इत्यादयो दृष्ट दोषाः सर्वेषां निशि भोजने ०७॥

भा०–रात्रि के समय जो भोजन खाया जाता है उस समय अंधेरे में कुछ भी न दिखने के कारण निम्न चीजें भोजन में पड़ जावे और वह खाने मे आ जावे तो निम्न प्रकार कष्ट दायक हो जाती हैं। भोजन में कीडी खाई जावे तो शरीर में खून उभर आता है जिस से सारे शरीर में खुजली हो जाती है पित्ती निकल जाती है बुद्धि मन्द हो जाती है, जू खाई जाने से जलोदर रोग पैदा हो जाता है मकड़ी खाने में आजावे तो कुष्ट,[कोढ] पैदा हो जाता है, मक्खी खाई जावे तो उल्टी [वमन] हो जाता है, भोजन मे काटा त्रिण बाल खाया जावे तो स्वर भङ्ग हो जाता है गला

बैंठ जाता हैं शब्दोच्चारण ठीक नहीं हो सकता है, ये रात्रि में भोजन जीमने वाले को कष्ट उठाने पड़ते हैं इस लिये चतुर पुरुषों के लिये बतलाया है कि वह रात्रि में भोजन न जीमें। रात्रि में भोजन न जीमने से जीवात्मा को किस फलकी प्राप्ती होती है–

श्लोक–ये रात्रौ सर्वदाऽऽहारं, वर्जयन्ति सु मेधसः।
तेषां पक्षोपवासस्य, फलं मासेन जायते ॥८॥

भा०–जो चतुर धर्मात्मा पुरुष एक महिना तक रात्रि को भोजन न जीमें तो समझो कि उसके पंदरा दिन तपस्या में ही व्यतीत हुये, जो सारी उमर रात्रि को भोजन न जीमें उसकी आधी आयु तप में ही बीतती है। पद्मश्री ने बुध्दसिंह को बहुत कुछ समझाया किन्तु होणी तो उसके सिर पर गरज ही रही थी फिर भला वह पद्मश्री की बात को क्यों मानने लगा –

दोहा–होणा हार हृदय बसे, बिसर जाय सब बुध।
जो होणी सो होत है, वैसी उपजे बुध ॥ ६ ॥

बुध्दसिंह ने वह उनका बचा खुचा अन्न रात्रि में ही खा लिया और खाते ही बेहोश (अचेत) होकर गिर पड़ा अपने पति की यह दशा (हालत) देखकर पद्मश्री बडी व्याकुल हुई और रो रो कर बड़ी मुश्किल से रात्रि व्यतीत की प्रात काल हुआ शहर वालों ने पद्मश्री को रुदन करती और बुध्दसिंह को मरा देख कर भागे हुये बुध्ददास के पास आये और कहा सेठ जी तेरा पुत्र वन में मरा पड़ा है। यह सुनकर बुध्द दास से न रहा गया और वह दौड़ा हुआ वन में पहुँचा, उसके साथ में नगर के नर नारी राज्य कर्म चारी (सिपाही आदि] भी वन में पहूँचे।

दोनों सेठों और बुद्धसिंह को मरा देख कर बुद्धदास बोला—अरी डाकन् तैने मेरे पुत्र को और इन दोनों सेठों को खालिया मेरे को मालूम नहीं था कि तू ऐसी पिशाचिनी निकलेगी कि मेरे पुत्र को भी खा जायगी तो मैं अपने पुत्र को तेरे साथ क्यों भेजता मेरे पुत्र के प्रेम का तैंने यह फल दिया यह कह सेठ सेठानी और कुटुम्ब परिवार सब रोने धोने लगे। राज्य पुरुषों ने पद्मश्री को चारों तरफ से घेर्ली—जैसे की साँपन को मारने वाले हाथ में लाठी लेकर सापन को चारो तरफ से घेर-लेते है। राजा को मालूम हुआ तो वह भी मन्त्री को साथ लेकर शहर के बाहिर आया और शहर के समस्त नर नारी भी आये और पद्मश्री की बार २ निन्द करने लगे। बोध गुरु पद्मसिंह भी अपना मन्त्र लेकर वहां आ गया और वह भी पद्मश्री की बुराई करने लगा।

बुद्धदास को जब होश आया तो वह पद्मश्री से बोला—अरी पापनी बैठी २ क्या देखती है अब इसको जीवित क्या नहीं करती। यह कह पुत्र को उठा उसकी गोद मे मे गेर दिया और कहा क्या तो अब इसकों जीवित करदे नहीं तो जिस चित्ता में इसको रखा जावेगा उस में ही तेरे को भी रखकर भस्म कर देवेगे यानी तेरे को भी इसके साथ पर लोक यात्रा करनी पड़ेगी। जो जैन धर्म के प्रेमी थे उन्होंने सेठ का कथन सुनकर बहुत दुःख माना। पद्मश्री ने अपने दिल में विचारा कि—यह मेरे कौन से जन्म के पाप उदय हो आये जिसके कारण मेरे इतना बड़ा कलंक लगा कलंक लगने का और मरने का तो मेरे को डर नहीं हैं किन्तु लोग बाग कहने लग जावेगे कि जो धर्मात्मा होते हैं वह ऐसे ही हो हैं धर्म की हीलना होगी इसलिये मेरे को चाहिये मैं अपने इस कलक को मेटूं यह सोच कर हाथ जोड़ पंच परमेष्ठी महा मन्त्र का ध्यान कर उच्च

भोगता है, जन्म समय तो और भी महा घोर दुःख पाता है बलावस्था मे मल मुत्र में लिपटा पड़ा रहता है, माता के दूध को पीकर बालास्वथा बीताई युवास्वथा में माता पिता स्त्री पुत्रादि का वियोग देखा बुढापे की अवस्थ मे इन्द्रियों की शक्ति हीन होने मे दुःख पाता है, इस नाशमान ससार में धर्म के विना कोई सुखिया नही इसलिये अव तो मेरे को भी धर्मका शरण लेनी ही उचित है। मने जो कुछ धर्मोंमें सार देखा है तो एक जैनधर्म मे ही देखा है इस लिये इस पतित पावन जैनधर्म को स्वीकार करना चाहिये। यह विचार कर राजा अपने पुत्र नयविक्रम को राज्य द मत्री और वहुत से शहर वालो के साथ सत गुरु "श्री यशोधरजी" के पास जाके दीक्षा धारण करली पद्मश्री और राजा की रानी पद्मावती देवी तथा शहर की वहुत सी स्त्रियों "सरस्वती" गुरनी के पास जाकर जैन साध्वी की दीक्षा धारण की वुध्ददास और वुध्दसिह ने और उसके परिवार ने श्रावक के व्रत धारण किये धर्म का वडा उद्योत हुआ चारों तरफ जैन धर्म की महिमा फैलती चली गई।

पद्मलता सेठ अर्हदास से बोली—नाथ ये धर्म का चमत्कार मैंने अपनी आखों से प्रत्यक्ष देखा है इस लिये मेरे को दृढ सम्यक्त्व रत्न की प्राप्ती हुई यह सुनकर सेठ बोला—भामिनी जो तुमने नेत्रों से देखा मैं उसका श्रद्धान करता हूँ उसे चाहता हूँ और उसपर प्रेम करता हू। अन्य स्त्रियों ने भी ऐसे ही कहा किन्तु छोटी स्त्री कुन्दलता बोली—बहन क्यों झूठ मूठ की बातें बनाकर इन को बहकाने लग रही है झूठी बातों में क्या धरा है? राजा मन्त्रि मन मे कहने लगे देखो यह कैसी दुष्टा है जो पद्मलता की आखे देखी बातों को—भी झूटी बतला रही है। इस को गधे पर चढवाकर शहर से निकलवा दूगा। चोर सोचने लगा कि दुष्ट दूसरों की अच्छी बात को भी नहीं माना करते। ससारमें सब की औषधी है किन्तु मूर्ख के स्वभाव को पलटने की तो कहीं और किसी के पास भी औषधी नहीं हैं।

सवैया—पावक कुज्जल वृन्द निवारन, सूरज ताप को छत्र कियो है। व्याधी कुं वैद्य तुरङ्गको चाबुक, चौपग वृषभको दण्ड दियो है। हस्ति महा मद कुं कियो अंकुश, भूत पिशाच कुं मंत्र कियो है। औषध है सब को सुखकर, स्वभाव को औषध नाहि कियो है ॥११॥

अर्हद्दास 'कनकलता'से बोले—भद्रे तुम भी अपने सम्यक्त्व रत्नमें दृढ होने वाली बात कहो कि तुमको दृढ सम्यक्त्व रत्न की कैसे प्राप्ती हुई, कनक लता बोली—प्राणदेव जी सुनिये—

❀ कनकलता का कथा कहना ❀

मालव देशमें एक उज्जयिनी नाम की नगरी है, उस नगरी में ही मेरा जन्म हुआ था। उस नगरी में सिंह के समान महा प्राक्रमी न्याय शील दयालु धर्म प्रायण आदि अनेक गुणों युक्त 'नरपाल' नाम का राजा था, उसकी रानी का नाम 'मदनवेगा' था राजा के मन्त्रीका नाम 'चन्द्रप्रभ' था मन्त्री की घर वाली का नाम 'सोमादेवी' था उस ही नगरी में 'समुद्रदत्त' नाम का नगर सेठ था उसकी स्त्री का नाम 'सागर दत्ता' था-सेठानीके उदरसे एक पुत्र और एक पुत्रीका जन्म हुआ। पुत्र का नाम 'उमयकुमार' और पुत्री का नाम 'जिनदत्ता' रखा बडी होने पर जिनदत्ता का विवाह कौसम्बी के जिनदत्त सेठ से हो गया, उसके सत्य शील की महिमा दूर २ तक फैल गई। उमयकुमार कुलाचार को छोड कर सातों व्यसनो के सेवने में लग गया। माता पिता ने एकान्त में बेठा कर उसको बहुत कुछ समझाया बुझाया किन्तु उसने उनकी एक न मानी

जुवा खेलना, मास खाना, शराब पीना, वेश्या के जाना, चोर करना, शिकार खेलना, पर स्त्रियों मे रमन करना, यह उसका प्रति दिन का काम हो गया किन्तु चोरी करने में तो वह अति निपुण हो गया। एक दिन चोरी करते हुए को पहरेदार [सिपाहियों] ने पकड़ लिया और सेठ के पास लाये। दयाकर सेठ ने पुत्र को छुड़वा दिया। ऐसे चोरी करन सैंकड़ों बार सिपाहियों ने उभयकुमार को सेठ के कहने मे छोड़ा थानेदार और सिपाही सोचने लगे कि– देखो जिनदत्ता और उभय दोनों एक ही उदर से पैदा हुये बहन भाई हैं। जिनदत्ता तो कितनी भली साध्वी है और यह कितना दुष्ट है। थानेदार और सिपाहियों ने उसको बार बार मनाह किया किन्तु वह न माना और चोरी करता ही रहा। एक दिन थानेदार ने उसको बड़ी चोरी करते हुए पकड लिया और राजा के पास ले गया और कहा–श्रीमहाराज ! यह नगर सेठ समुद्रदत्त का नालायक लड़का है, यह हजारों बार चोरी कर चुका है मनह करने पर भी नहीं मानता यह बड़ा पक्का चोर है। अब यह आपके सामने है जैसा उचित समझें वैसा करें।

राजा ने कहा–इस में सेठ का एक भी गुण नहीं, है तब क्यों न इस को धक्का देकर नगरी से निकलवा दू। सिपाहियों के हाथ सेठ को बुलाया और कहा–सेठ जी ! आपने इस दुष्ट को घर में क्यों रख रक्खा है ? आप क्यों नहीं इसको घर में से निकल देते, यदि अब आप इस को घर से न निकालोगे तो आप की इज्जत में बट्टा लग जावेगा। दुष्ट के संसर्ग से सज्जन भी कलकंकित हो जाते हैं, इस लिये आप खूब सोच विचार लो और इस दुष्ट को शीघ्र ही घर से निकाल दो। अब सेठ उभय को साथ ले कर घर आया और सेठानी से राजा का हुक्म कह सुनाया

और साथ मे यह भी कहा कि यदि अब इसको घर में से न निकालेंगे तो राजा की आज्ञा भङ्ग होगी और शहर के लोगों से विरोध हो जावेगा, बहुतो से विरोध का होना अच्छा नही हुआ करता इसने चोरी करके शहर के लोगों को बहुत तङ्ग कर रखा है। माता कहने लगी कि मैं कैसी निरभागनी हूँ जो मेरी कुक्षी मे ऐसे कुपात्र पुत्र उत्पन्न हुआ ऐसे पुत्र के तो मैं बिना पुत्र के ही रहना अच्छा समझती हू। कुपात्र मे कुल के लाञ्छन लगता है कुपुत्र से कुलोद्धार की आशा करना व्यर्थ है। इसनों की तो आशा ही नहीं करनी चाहिये।

सवैया—ओछे की प्रीत, कपूत की आशा। बैरी में वास पर हत्थ ठ।प र, वेश्या के साथ रमें सार पाशा। दुष्ट पडोसी चले ठग संगत, मूर्ख मित्र अजान से हाँसा। दास ना—रायण एम कहे भाई, एति ही बात से होत विनासा ॥१॥

सेठानी की सम्मति से सेट ने उभयकुमार को धक्का देकर घर से निकाल दिया। अब वह घर से निकाले जानेपर अपनी बहन जिनदत्ता के यहा जाने के लिये तैय्यार हो गया। शहर से चलने ही उसको कौसम्बी के जाने वाला साथ मिल गया और वह उनके साथ कौसम्बी पहुँच गया। इसके वहा पहुँचने से पहले ही घर से निकाले जाने की खबर बहन को लग चुकी थी—कहा भी है कि 'नेकी नौ कोस और बद सौ कोस' बुराई वाली बातों के फैलते क्या देर लगती है। उत्तम विद्या, नई बात, बदनामी, किस्तूरी की सुगन्ध ये सब बातें पानी मे डाली हुई तेल की बून्द की तरह सब जगह फैल जाती है। सामने घर पर आते हुये भाई को देखकर बहन बोली—ऐसे कुल कलंकित भाई की मेरे को आवश्यकता नहीं यह कह धक्का दिलाकर घर से निकलवा दिया। जिनदत्ता के यहा से निकाले जाने पर वह जङ्गल की तरफ चल दिया

और विचारने लगा कि—मेरे दुराचरण की बुराई तो मेरे आने से पहिले ही यहा पहुॅच गई है कहा भी है कि—भागय हीन कहीं भी चला जावे उसको कहीं भी सुख नहीं मिलता और दुःख तो उसके लिये आगे से आगे तैयार खडा रहता है। एक मल्लाह ने एक मछली को पकड़ा तो वह बड़े जोर से उछल कर उसके हाथ से निकल गई और बिछे हुये जाल मे जा गिरी वहा से भी ज्यों त्यों करके निकली तो आगे बुगला बैठा था उसने उसको अपने पेट मे धरली। जब भाग्य ही साथ देना छोड दे तो फिर सुख कहा। मै बहन के घर आया तो बहन ने भ मेरे को निकाल दिया अब कहा जाऊ और क्या करू माता पिता और बहन के घर से निकाले जाने पर उसय की अकल टिकाने आई चोरी चपारी करना सब भूल गया और उदास हो इधर उधर फिरने लगा। जङ्गल मे ध्यानस्थ बैठे हुए श्रुतसागर' गुरु को हाथ जोड़ नमस्कार कर सामने बठ गया। वह गुरु बड़े त्यागी और वैरागी थे ज्ञान ध्यान मे लीन थे वह ऐसे नहीं थे कि सयम ले लिया और उसका कुछ भी पालन नहीं किया, गृहस्थियो के बाल बच्चे खिलाना डागर ढोर बकरी आदि चराना, बरात में जाना और वहा लोगों की भली बुरी गाली सहना जङ्गल में हल चलाना और बाबा का बाबा कहाना। ऐसे बाबा जी (योगी) बनने से कुछ भी कार्य सिद्ध नहीं हुआ करता।

सवैया—जोग लियो जग देखन को, अब जोग की रीत सके नहीं पाली। किसी के खिलावे छोकरा छोकरो, कोई के चरावत ढोररु छाली। जान बारात में संग जावे भ्रात सगे न में खात है गाली। कहे गुरु ज्ञानो सुनो भाई साधो, वह बाबा का बाबा बने, अरु हाली को हाल ॥२॥

श्रुतसागर गुरु ने ध्यान खोलकर उमय से कहा—भद्र देख तू व्यसनों मे पड़ा तो तेरे को तेरे माता पिता ने घर से निकाल दिया और बहन ने भी तेरे को आश्रय नहीं दिया अब तो तू इन कुव्यसनों को छोड़ और सुखी बन ।

सप्त व्यसन-निषेध

जुवा श्लोक—न श्रियस्तत्र तिष्ठन्ति, द्युतं यत्र प्रवर्तते । न वृक्ष जातस्तत्र, विद्यन्ते यत्र पावकः ॥३॥

भा०—जुवा खेलने वाले के पास न तो लक्ष्मी ही रहती है और न ससार में उसकी बड़ाई ही होती है जहा अग्नि होगी भला वहा वृक्ष फल फूल आम आदि कैसे रह सकता है ।

सवैया जुवे रमें नरजेह धर्मतणो आणो छेह, हाट औरशाल गहना दवे मेलरे । लोग मुख देवे धूल, नारी दुःख धरे पूर, घर हूं थी करे दूर, फिरेछे इकलोरे । गहना तलग ताय, गाल राड़ करे ताय, मरे विष फांसी खाय, बधे दुःख बेलरे । सुघड़ सुजान श्याम, मन में विचार आन, बार २ समझाऊं तोय, जुवा मत खेलरे ॥४॥

श्लोक—नास्ति द्यूत समं पापं, नास्ति द्यूत समो रिपुः । पाँडवाः प्रौढ पुण्याश्च, प्राप्ताः दुःखं तु द्यूतः॥५॥

भा०—जुवा खेलने के समान कोई पाप नहीं और न जुवे के समान इस जीव का कोई शत्रु है, पाडवों जैसे भाग्य शालियों को भी इस पापी जुवे

ने दुःख सागर मे डाल दिये थे और की तो बात ही क्या है।

श्लोक–द्यूतं हि सर्वथा त्याज्यम्, प्राज्ञै बुद्धि विशालिभिः
नर्कं प्राप्ते द्यूताद्, द्यूतात् तिर्तचता भवेत् ॥६॥

भा०–बुद्धिमान चतुर मनुष्य को जुवा न खेलना चाहिये, जुवे से सर्वथा प्रेम हटा लेना चाहिये नहीं तो नेगे को नरक तीयच गति के दु.ख उठाने पड़े गे।

मांस–श्लोक–न पलं जायते वृक्षात्, न भूम्याँ नैव पर्वते
जन्तुना घाततो नूनं, पलं भवति निश्चितम् ॥७॥

भा० मास वृक्षो के नहीं लगता और न माम पृथ्वी पहाड पर्वतों में ही उपन्न होता है, मास जीव के मारने से ही मिलता है।

श्लोक–न कृत्वा प्राणिनां हिंसा, मॉस मुत्पद्यते क्वचित्।
न च प्राणि वधः स्वर्ग स्तस्मान्मॉसं विवर्जयेत् ॥८॥

भा०–जीव हिंसा के बिना माम नहीं बनता, जीव हिंसा से स्वर्ग और मोक्ष भी नहीं मिलता इस लिये मोक्षाभिलाषियो को चाहिये कि मांस का खाना छोड दे, मास खाने वाले रोगी और बलहीन होते हैं।

सवैया–हिरण सुसा ने गाय, जीव बहु जगमाय, तेहनी विनासे काय मास केरे काजरे। दया हीण पूरा दुष्ट, खाय खाय हुआ पुष्ट, नार की में जावे दुष्ट, करीने अकाजरे। भूमि जाने तप भाड़, रोवे घणा बाग पाड़, आये जमांतणी धाड़, गाजे जेम गजरे। कानी २ लेवे रोक, घालत गले में ठोक, मास खाया महा दोष, मांस दूर तजरे ॥९॥

श्लोक–मॉसाशिनो नास्तिदयाऽसुभाजॉ, दयां विना नास्ति जनस्य पुण्यम् । पुण्यं विना याति दुरन्त दुःखं, संसार कान्तार मलभ्य पारम् ॥१०॥

भा०—मास खाने वाले को दया नही होती, दया के विना पुण्य नही होता और न पुण्य के विना ससार के दुखों का अन्त ही आता है विना दुःख [कर्म] मिटे स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ती भी नहीं होती जो दूसरे का मास खाकर अपना मास बढाना चाहता है उससे अधिक और नीच कौन हो सकता है यह एक बड़ी विचारनीय बात है ।

श्लोक–पच्यते पावके पापैः, प ल्यते तिलवत् खलैः । दह्यते दहने रौद्रे, नरके घोर वेदने ॥११॥

भा०—मास खाने वाले जो पापी नरक मे जाकर पडते हैं उनको यमराज कोल्हू में डालकर तिल सरसों की तरह पीलते हैं और अग्नि मे डाल कर पकाते हैं सज्जन मनुष्यों का कर्तव्य है कि वह दोनो लोको को बिगाड ने वाला जो माँस है उसका खाना छोड दे ।

श्लोक-मद्यं हि सर्वथानिंद्यं, त्याज्यं वै बुद्धि शालिभिः । मद्य दोषेण ये येहि, प्राप्ताः दुःखं नरा भुवि ॥१२॥

भा०—बुद्धिमान चतुर मनुष्य का कर्तव्य है कि मद्य [शराब] न पीवे जो मध्य पीते हैं वह दुःखी होते हैं

श्लोक–अयुक्तं बहु भाषन्ते । यत्र कुत्रापि शेरते । नग्ना विक्षिप्य गात्राणि, बालका इव मद्यपाः १३॥

भा०—मद्य पीने वाले बकवाद बहुत करने लग जाते हैं गली बाजार कुरडी गन्दा नाला आदि हैं जहा तहा गिर पडते हैं औरसो जाते हैं, जैसे

बालक वस्त्रहीन होते हैं ऐसे वह भी लज्जा न रहने से वस्त्रहीन हो जाते हैं

श्लोकः विवेक संयमो ज्ञानं, सत्यं शौचं दया क्षमा। मद्यात्। प्रलीयते सर्वं, तृणा नि वन्हि कणादिव ॥१४॥

भा०—जैसे अग्नि का पतगा घास के समुह को भस्म करदेता है ठीक इस ही प्रकार मद्य भी विवेक इन्द्रियों का सयम, ज्ञान, सत्य, शौच [पवित्रता] दया, क्षमा आदि श्रेष्ठ गुणों को नाश कर देता है। मद्यपी ईश्वरोपासना माता पिता गुरु गुरनी आदि की सेवा भी नहीं कर सकता मद्य पीने से बुद्धि नष्ट हो जाती है बुद्धि न रहने से मद्य पी न तो धर्म कर सकता है और न दान दे सकता है और न भगवान की भक्ति म अपने दिल को लगा सकता है मद्य पीने वाले का चित्त भ्रम हो जाने से वह माता का स्त्री [घरवाली] और स्त्री को माता कहने लग जाता है मद्य पीने वाले सत्य बोलना तो जानता ही नहीं हैं वह तो केवल एक र ना ही जानता हैं और जो जीमे आता है वही बोलता रहता है। मद्यपी कर जो पाप न करने हों वह पापकर्म करके नरक मे जा पडते हैं।

सवैया—दारु पिया जावे बुद्ध, रहे नहीं कांय शुद्ध, करे अति कलह युद्ध, भुंडादी से नूर रे। त्रिया बहन तणी ताय, ठीक नही पड़े काय, बोले मुख भुंडो वाय, वाजत वेशूररे। यादव कुंवार जान, दारु तणा किया पान, दिया दुःख असमान, देवता क्रूर रे। पासे अति बुरो दुःख, लोक मिले नही रुख, दारु पिया महा दुःख, दारु दूर तजरे ।१५।

श्लोक—ख्यातं भारतमंडले यदुकुलं श्रेष्ठं विशाल परं—साक्षात् देवपि निर्मिता वसुमती भूषा पुरी द्वारिका। एतद् युग्म

विनाशनं च युगज्जातं ज्ञणात्सर्वथा–उन्मूलं मदिरानु दोप जननी सर्वस्व संहारिणी ॥१६॥

भा०–भारतवर्ष में सब कुलों में श्रेष्ठ यादव कुल जिस में छप्पन [५६] कोड़ यादव, पृथ्वी का भूषण रूप देवताओं की बनाई हुई साक्षात् इन्द्र पुरी के समान द्वारका नगरी [यादव कुल और द्वारकानगरी] येदोनों मद्य पीने वालो के कारण से एक दम नष्ट हुये। मद्य सर्व दोषों की खान और कुल विध्वस करने वाली है जो मद्य पीवेंगे वह मर के नरक में जावेंगे मोक्ष और स्वर्ग के सुख चाहने वालो को चाहिये कि मद्य पीना छोड़ दें।

वेश्या– लोक–तपोव्रतं यशोविद्या–कुलीनत्वंदमो वयः। छिद्यन्ते वेश्या सद्यः कुठारेण लता यथा।१७।

भा०–जैसे कुहाड़े के मारते ही वृक्ष की टहनी [डाल] वेल आदि कट जाती है ठीक इस ही प्रकार वेश्या भी तप व्रत यश विद्या कुल दमन व्यय [आयु] को शीघ्रातीशीघ्र नष्ट कर देती हैं। वेश्या कामी पुरुष के तन धन योवन को कामाग्नि में डाल कर भस्म कर देती है।

जननी जनको भ्राता–तनय तनयास्वसा। न संति–वल्लभास्तस्य–गणिका यस्य वल्लभाः।१८।

भा०–जिस कामी [व्यभचारी] को वेश्या प्यारी है उसको माता पिता भाई बन्धु यार असनाव पुत्र पुत्री बहन आदि सब बुरे लगते हैं कामी पुरुष घर वालों से दुश्मनाई रखता और वेश्या से प्रेम जोडता है वेश्या की भावना हर समय बुरी रहती है, दया का तो वह नाम भी नहीं जानती।

वेस्या सर्वं धनापहरा सुख हरा धर्मस्य विध्वंसिनी ज्ञात्वैवं चतुरैर्विवेक सहितैः त्याज्यातु वेस्या सदा। स

निषेवितं बुधनुतं जैनं दया संयुक्तम्—यो धर्मं कुरुते कला। गुण निधिः सोऽत्रीः वन्द्यो नृणाम् ॥१६॥

भा०—वेश्या धन धान्य आदि तथा सर्व सुख के हरनेवाली और धर्म कर्म को विध्वंस करने वाली है। सर्वज्ञ देव के वचन जिन को प्यारे हैं और जो दयावान चतुर पुरुष होते हैं वह वेश्या को ऐसे छोड़ देते हैं जैसे मनुष्य मशाण भूमि में पड़े हुए घड़े को। जिन्होंने वेश्या से दिल हटाया है वही सकल गुणों की खान महा पुरुष वन्दनीय होते हैं। मोक्ष के इच्छुकों को चाहिये वेश्या से प्रेम को हटालें।

सवैया—वेश्या है धूतार नार, सज सोलहसिंगार, पर घर मांडे प्यार पैसा तणी यार रे। कामी अन्यनर जेह, तिनसु लम्पट होय, नरभव देवे खोय, मूर्ख गवाँर रे। लोक में अपयश थाय, मरी ने दुर्गत जाय, तातार्थंभ करीनहि, चपेटें छोंतिवार रे। उछल आकाशजाये त्रिशूल में पिरोवेताहि, मान मान मेरी बात, तजो वेश्या नार रे ॥ २० ॥

जब तक पास में पैसा रहेगा, मिट्ठी बात बनायेगी।
कंगालों को अल्प समय में, जुत्ते मार भगावेगी।

शिकार श्लोक—वसन्त्यरण्येषु चरन्ति दूर्वाः पीबन्ति तोयान्य परिग्रहाणि नराणां, तथापि वध्या हरिणां, को लोक माराधयितुं समर्थ ॥ २१ ॥

भा०—जगत में रहकर घास फूस के खाने वाले और जंगल के सुन्दर पानी को ही पीकर अपने आप में सतुष्ट रहने वाले हिरण सुसा आदि पशुओं के मारने वाले अज्ञानियों का कैसे उद्धार होगा। अर्थात् वह पापात्मा तो घोरातिघोर नरक में जाके पड़ेगे। उनके उद्धार का कोई ठिकाना नहीं है।

सवैया—अहेड़ा करी अतीव, हणा र हैं स्थूलजीव, नारकी की देन नीव, तुच्छ सुख हेतरे। जाडा पाप करी जोर, जान पड़े अंध घोर, करे अति हेला सोर, दयाहीण तेथरे हाथे हथियार झाल, यमदूत आवेलार, लोचन करी लाल मार बहु देतरे। हाय जाये आक् वाक्' आहेड़े का फल चाख, मान २ मेरा वाक्य, चेत भाई चेतरे ॥ २२ ॥

वैरिणोऽपि हि मुच्यन्ते—प्राणान्ते तृण भक्षणात्।
तृणाहारा सदैवैते-हन्यन्ते पशवः कथम् ॥२३॥

भा०—प्राणों का ग्राहक बना हुआ दुश्मन तलवार लेकर मारने के लिये आ रहा है उसके सामने अपराधी मुख मे तृण लेके खडा हो जावे तो वह उसको जीवित अभ दान देकर चलता बनता है और मृग शुशा आदि पशु जीव तों हर समय मुख मे घास (तृण)रखते हैं फिरभी मालूम नहींकि पापात्मा ऐसे भद्र जीवोंको भी कैसे मार देते हैं। जो निरापरावी जीवों को मारते हैं वह घोराती घोर नरक मे जा कर पडते हैं वहा उनको क्षण मात्र भी सुख नहीं मिलता। मोक्ष चाहने वालों को उचित है, कि शिकार का खेलना छोडदें।

चोरी—प्रच्छनंवा प्रकाशंवा—निशायामथवा दिनम्। स्यात् पर द्रव्य हरणं—स्तेयं तत्प्रकीर्तितम् ।२४।

भा०— गुप्त रूप से अथवा प्रकट रूप से दिन में वा रात्रि में जो दूसरे के द्रव्य (धनमाल) को हरण करते हैं वह चोर कहाते हैं।

मणिमुक्ता प्रवालानि—हृत्वालोभेन मानव। विविधानि च रत्नानि—यमद्वारेषु जायते ॥२५॥

भा०—चोर लोभ के वस हो नाना प्रकार के मणि माणिक मोती लाल प्रवाल स्त्री पशु आदि की चोरी कर अन्तमें नरक में जाय यमरान

के पाहुने बनते हैं और वहा घोर वेदना को भोगते हैं ।

श्लोक–कातराणां यथा धैर्य, वन्ध्यानां संतति र्यथा ।
न विश्वा स्तथा लोके, नृणामदत्त हारिणाम् ॥२६॥

भा०–डरपोक (कमजोर दिल वाले) को धैर्य नहीं होता, वन्ध्या स्त्री के सन्तान नहीं होती ठीक इस ही प्रकार चोरी करने वाले का कोई विश्वास नहीं करता है, जहा भी कहीं जावे चोर वहीं धक्के खाताहै और निरादर का पात्र बनता है ।

श्लोक—धनहानि राजदंडं, कीर्ति नाशं तथैव च ।
चौर्य कर्म प्रसादेन, प्राप्यन्ते दुःख कोटयः ॥२७॥

भा०–चोर को राज्य दण्ड भुगतना पड़ता है, और धन का नाश होता है, ससार से उसकी कीर्ति (बडाई) उठ जाती है और चोर को नाना प्रकार के दुःख उठाने पडते हैं ।

सवैया–चौमासे की रात जोर, दगाकरीपात जोर, गामांपुर ठोर ठोर, फिरता अकेला रे, द्रोह करी लावे दाम, करे अति भुण्डा काम, पाप उदय होय, ताम प्रहत भूपालरे मार देवे भरपूर, कान नाकरे दूर, आमा सामा फेरे रूर चोहटे बीचालरे । माठीगत जावे मर, साता नहीं तिल भर चोरी पर हर नर, चौरी है चंडाल रे ॥२८॥

श्लोक–शूलिका रोहणं केचि–च्छिर श्छेदं तथापरे ।
नाशिका कर्णछेदादि, केचिद्वै चतुर गताम् ॥२९॥

भा०–चोरी करनेवाले किसी चोर को तो शूली दी जाती है, किसी का तलवार से मस्तक काटा जाता है, किसी का कान नाक काटा जाता है और किसी २ को यह चारों सजाये भोगनी पडती हैं चोरी कर्म के प्रभाव

से जाके नरक में उत्पन्न होता है और वहा यमोंद्वारा नाना प्रकार के दु ख भोगता है। किसी कारण से वह पापात्मा मनुष्य जन्म को भी प्राप्त करलेता है तो दुरभागी [भाग्यहीन] होता है नोकर दास बनता है महा दरिद्री होता है इस लिये धर्मात्मा मोक्षाभिलाषियों को चाहिये कि चोरी करना छोड़ दें किसी की बिना दी हुई वस्तु न लें।

परस्त्री त्याग श्लोक—पर स्त्री ही पर त्याज्या, परलोक विनाशिनी।
द्रव्य हानि करीज्ञेया, कीर्ति देस विनाशिका ॥३०॥

भा०—पर स्त्री धन और देह का नाश करने वाली है कीर्ति को नष्ट करने वाली है दोनों लोकों को बिगाड़ने वाली है इस लिये प्यारे बन्धुओ पर स्त्री से बचो और अपने सत्य शील में दृढ रहो

श्लोक—पारपूर्णेऽपि तटाके, काक' कुम्भोदक पीवति।
अनुकूलेऽपि कलत्रे, नीचः परदार लम्पटो भवति ॥३१॥

भा०—पर स्त्री लम्पट महा नीच पुरुष अपनी धर्म पत्नी को छोड कर पराई स्त्रियों के पीछे हडखाये कुत्ते की तरह फिरते ही रहते हैं, जैसे काग मानसरोवर को छोड कर घडे के पानी में ही जाके चूंचडबोता है।

श्लोक—वासरेण क्षुधा नास्ति, निद्रा नास्ति च शरवरी।
स कामस्य हि पुरुषस्य, हृदय वसति कामिनी ॥३२॥

भा० पर स्त्री लम्पट कामी पुरुषों को न दिन में भूख लगती है और न रात्रि को नीन्द ही आती है। हर समय उनका चित विकल बना रहता है।

सवैया—पर नारी सङ्ग जाय, शका नहीं आने काय, प्रसिद्ध होवे लोक में राजा दण्ड देवे रे। सुत तणी सुने बात, लाजे घणा माय तात, दु'ख घरे दिन रात, होवे भण्ड भड रे। सदा रहे मुरझाय, मरीने कु गत जाय जम दोला फेरे आय, करे खड खड रे। मुख करे हाय हाय, कारी लागे नहीं काय, विषय दुःख दाय, विषय दूर छड रे ॥३३॥

दोहा—कूप पड मरना भला, पिना भला विष पान।
अनेक दुःख की आपदा, नहीं व्यभिचार समान ॥३४॥

दोहा—नाम बिगाड़े बाप का, कुल मे धरे कलंक।
टले कभी नहीं टलता, ये लाछन नो अङ्क।३५।
मनुष्यों में उज्वल मुखे, बोल सके नहीं बोल।
व्यभिचारी का जगत में, तृण तुल्य है मोल।३६।

श्लो—दिवा पश्यति नो लूकः, काको नक्त न यश्पति।
अपूर्वः कोऽपि कामाधो, दिवानक्त न पश्यति।३७।

भा०—उल्लू को दिन में और काग को रात्रि में नहीं दिखता किन्तु कामी तो रात्रि दिन दोनों का ही अन्धा होता है कामी को भली बुरी किसी भी बात का ज्ञान नहीं होता।

श्लोक—लिङ्गच्छेद खरा रोप, कुलाल कुसुमार्चनम्।
जन निन्दा मभोगत्व, लभते पार दारिकः।३८।

भा०—कामी पुरुष की इन्द्रि का छेदन किया जाता है मस्तक पर नाच चोटी रख टूटी फूटी जुतितों का सुहावना हार गले में पहना आगे फूटा ढोल बजा देश निकाला कर देते हैं या शूली और फासीकी हवा खिलाते हैं कामी का तन धन कुल सब क्षय हो जाता है।

श्लोक—सन्तोषः स्वेषु-दारेषु, पर दारा परा मुखः।
प्रथयन्ति गृहस्थाना, चतुर्थ तदणु व्रतम्।३६।

भा०—मोक्षाभिलाषी का कर्तव्य है कि वह अपनी धर्म पत्नी में ही सतोष रख पर स्त्री का त्यागन करदे पर स्त्री को माता बहन पुत्री की दृष्टि से देखे। एक २ व्यशन के वस पड़कर प्राणी कितना दुःख उठाता है और जोसातों के वस मे पड जाते हैं तो उनके दुःख का तोकहना ही क्या है सद्गति इच्छुक सज्जनों को चाहिये कि सातों व्यसनों को छोड़ भगवत् भक्ति मे चित लगावे जिस से कि सद्गति की प्राप्ती होवे गुरुके अमृतमय उपदेश को सुनकर उमयकुवर ने खड़ा हो सातों व्यसनों का त्यागन कर दिया और श्रावक के व्रत धारण कर लिये पक्का जैनी बन गया और जान समय गुरु के सामने यह भी प्रतिज्ञा कर ली कि जिस फल फूल को मैं न जानता हूँ अर्थात् अजात फल फूल को मैं नही खाऊंगा।

उमयकुंवर सम्यक्त्वरत्त का धारक बन गया अब उमयकु वर सत गुरु के सगर्स से धर्मात्मा बन गया, गुणवानों की सगति मे बैठने से गुन हीन भी गुणवान हो जाया करता हैं। तेल फुलेल अत्तर की थोड़ी सुगध से भी मकान सुगन्धित हो जाया करता है। गुरु की सेवा में रहकर सामायिक सम्बर प्रतिक्रमण ब्रत पोषा करने लग गया, जिनदत्ता ने सुना कि कि उमय व्यसनों को छोड़ अब धर्म में लग गया है और सदाचारी बन गया है अपने मन मे कहने लगी कि पीछे भी मेघ बर जावे तब भी खेती पैदा हो ही जाया करती है अथवा यों कहिये कि सुबह का भूला भटका भी साज को घर आ जावे तो समझदार लाग उसको भूला नहीं कहा करते ऐसे ही मेरा भाई भी अब सुधर गया तो अच्छा ही हुआ अव भी कुछ नहीं बिगडा ये सब गुरु देव का ही प्रताप हैं गुरुदेव की कृपा से बकचूल और दढ प्रहारी जैसा चोर परदेशी राजा जैसा नास्तिक मति घोर हिंसा का करने वाला सयति राजा श्रेणिक राजा जैसा मिथ्याति पाप छोड़ धर्म में लग गये।

श्लोक—तारणाय मनुष्याणा, सहारे परि वर्तताम्। नास्ति तीर्थं गुरु समं बन्धच्छेद कर द्विजः ।४०।

भा०—इस परिवर्तन शील ससार में ससार समुद्र से पार उतारने बाले कर्मो का बन्धन काटने वाले सब तीर्थो से उत्तम तीर्थ गुरु ही होते हैं

श्लोक—स्थल जाचोदकात् सर्व, वाह्य मल प्रणश्यति। जन्मान्तर कृतान् पापान्, गुरु तीर्थं प्रणाशयेत्। ससारे तारणायैव, जगम तीर्थ मुत्तम ।४१।

भा०—पृथ्वी पर पडे हुए जल में नहाने से तो शरीर के मल की ही शुद्धि होती है किन्तु गुरु सेवा से जन्म जन्मातर के पाप मल नष्ट होते हैं गुरु रूपी जगम तीर्थ ऐसा है कि जो गुरु की तन मन से सेवा करेगा वह ससार सागर से पार हो जाता हैं। बहन जिनदत्ता भाई उमयकु वार के पास गई और शुभाशिर्वाद दे बडे प्रेम के साथ अपने घर ले आई भोजन जीमाया और पहरने को सुन्दर वस्त्र दिये और व्यापार के लिये धन माल

दिया, अब कुंवर सचाई के साथ व्यापार करने लगा। उसकी सच्चाई देख २ कर शहर वाले सब उस की प्रससा करने लग गये। एक दिन उज्जयिनी के व्यापारी कौशाम्बी आये और वहा उमय की बडाई सुनकर उसके पास आये कुंवर ने उन सबका यथोचित सत्कार किया। उमय को सदाचारी देखकर वह सब प्रसन्न हुए और आपस में कहने लगे कि यह नगर सेठ सनुद्रदत्त का पुत्र जैन गुरु की कृपा से ही सुधरा है धर्म मे ही ऐमी विलक्षण शक्ति होती है कि वह पतितों को भी पावन (पवित्र) कर देता है, जैसे चन्द्रमा के बिना रात्रि की, सूर्य के बिना दिन की, पति के बिना स्त्री की, बिजली के बिना घटा की, कमल के बिना सरोवर की, शोभा नही ठीक इस ही प्रकार धर्मके बिना भी जीवात्मा की कोई शोभा नहीं। वह सब उमयकुंवर से बोले—आज हम तुमको देखकर बहुत खुश हुये जो तुम व्यसनों को छोड़कर धर्मात्मा बन बये हो ये काम तुमने बहुत अच्छा किया ऐसे करने से तुम्हारी और तुम्हारे कुल की बडाई है।

व्यापारियों ने सेठ समुद्रदत्त के पास खबर भेज दी कि अब आप का पुत्र व्यसनों को छोड़ धर्मात्मा बन गया है और यहा व्यापारियों में उसने खूब नाम पा रखा है। माता पिता अपने पुत्र के यह पवित्र समाचार सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। सुपुत्रके सुन्दर समाचार को सुनदर भला किसको प्रसन्नता नहीं होती पुत्र घर का एक दीपक होता है पुत्र के बिना सब घर बार सूना माना गया है। सेठने अपने जमाई जिनदत्त को चिट्ठी लिखी कि कृपा कर आप उमय को समझा बुझा कर यहा भेज दो। हमारा पुत्र के बिना चित बडा व्याकुल हो रहा है। वह चिठ्ठी जिनदत्त और जिनदत्ता ने बाचकर उमय को दिखला दी। माता पिता की चिठ्ठी बाचकर उमय का चित्त बड़ा प्रसन्न हुआ और बोला—मैं तो अभी अपने घर को जाऊंगा और माता पिताकी सेवा मे अपना शेष समय बिताऊंगा। श्लोक—नास्ति मातृ समो नाथो, नास्ति मातृ समा गति। नास्ति मातृ समः स्नेहो, नास्ति मातृ सम सुखम् ।४२। पिता गुरुः पिता देवः, पिता धर्म सनातनः। तुष्टे पितरी पुत्राणा, तुष्टः स्युः सर्व देवता ।४३। सर्व तीर्थ

मयी माना, सर्व देव मय पिता। मातरं पितरं तस्मात्, सर्व यत्नेन पूजयेत् ।४४।

भा०-जिसने माता पिता की सेवा करली कि बस समझो कि उसने सब कुछ कर लिया माता पिता की सेवा कोई भाग्यशाली पुत्र ही किया करते हैं, हर एक से तो माता पिता की सेवा हो भी नहीं सकती है। कुंवर बहन बहनोई की आज्ञा ले माल के गड्डे भर उज्जैन जाने के लिये तैयार हो गया। बहनोई ने उसको बहुत कुछ माल दिया, उज्जैन जाने के लिये व्यापारी भी उसके पास आ गये अब वह उन सबों को साथ ले घर को चल दिया बहन बहनोई दूर तक पहुँचाने के लिये गये। मार्ग में कुंवार के दिल मे माता पिता के दर्शनों की बड़ी भारी इच्छा हो गई और मन में कहने लगा कि यदि मेरे पाख होती तो बस अब ही क्षण भर में उड़ कर माता पिता के दर्शन कर लेता। ये विचार कर साथ वालों से कहा तो उनमे जो अधिक चलने वाले थे वह बोले-लो भाई हम साथ को छोड कर तुम्हारे साथ चलते हैं और ये साथी सब पीछे आते रहेंगे। अब उमयकुंवर शीघ्रगति से चलने वालों को साथ ले चल दिया मार्ग में एक बड़ा भारी वन आया उस भयङ्कर बन में परवेश करते ही रास्ता भूल गये दिन छिप गया सारी रात्रि बन में रहकर बिताई प्रातःकाल होते ही कुंवर को और उसके साथियों को बड़े जोर की भूख लगी। अब उमय के साथी बन के फल फूल तोड़ने के लिये आगे बन मे बढे तो क्या देखते हैं किएक बृक्षके बड़े सुन्दर सुहावने मनमोहक सुगन्धदार फल लग रहें हैं उन्होंने उन फलों को तोड़ा और झोला भर २ उमय के पास लाये और बोले आप इन फलों को खाओ।

उमय बोला-इन फलों का क्या नाम है? साथियों ने उत्तर दिया कि नाम तो हम इन फलों का नहीं जानते और आप को भी इन फलों के नाम को पूछने की आवश्यकता क्या है? इनमे जो आप को कड़वा और निःसार [रस रहित] मालूम होवे तो उसको मत खाना और जो मिठे रस वाले स्वादिष्ट हों उनको खा लेना जिस से भूख मिट जावे

उमर ने कहा—भाइयो जो तुमने कहा सो ठीक हैं किन्तु मैंने तो ऐसे अनजाने [अनजान] फल को खाने का नियम ले रखा है मैं तो इन फलो को नहीं खाऊगा। कुवर के सब साथियों ने उन फलों को बडे प्रम के साथ खाया वह किंपाक [जहर] फल थे जहर फल देखने मे बडे सुहावने सुन्दर मालूम होते हैं सूघने मे बडी मीठी सुहावनी सुगन्ध वाले और खाने में बडे स्वादिष्ट लगते हैं किन्तु गले के नीचे उतरते ही वह प्राण हरण कर लेते हैं ! उमर के मित्रों ने वह फल खाये फल खाते ही जहर चढ गया और मुह मे झाग आ गये, वे बेहोश होकर भूमि पर गिर पडे यह दृश्य देख कर उमर को बडा दु:ख हुआ और सोचने लगा कि भला यह कौन जानता था कि यह जहर फल हैं और इन के खाने से मर जायेंगे अब यह कैसे जीवित हों वह तो इस विचार मे बैठा ही था कि उस की परीक्षा के लिये वनदेवी स्त्री का रूप बना सामने आकर खडी हो गई और बोली भाई जी ? यह जो सामने कल्प वृक्ष खडा है तैने इसके फल क्यों नहीं खाये । क्यों भूख की महा वेदना को सहन करने लग रहा है तेरे साथियों ने जो फल खाये थे वह जहर फल थे और यह अमृत फल हैं यह अमृत फल किसी भाग्यशाली को ही प्राप्त होते हैं हर एक को नहीं इनका एक बार के खाने से शरीर के सब रोग दूर हो जाते हैं और जो इनको कोई बार खाले तो बस समझो कि वह अमर हो जाता है कोई किसी प्रकार का दुःख उस के पास फटकने नहीं पाता इन फलों का खाने वाला चराचर सब वस्तुओं का जानने वाला बडा ज्ञानी होता है मै कितनी बहुत बुढिया थी और वृद्धावस्था के कारण मैं महा दुःख पा रही थी क्या कहूं इंद्र महाराज मेरे लिये यह कल्प वृक्ष यहां रख गया है इसके फल खाकर मैं जवान हो गई हूँ । इस लिये भाई तू मेरा कहा

नही खाऊगा, कल मरता चाहे आज ही मरजाऊ, मरने का मेरे को डर नहीं, किन्तु अपने लिये हुए नियमको प्राणोंके लिये नहीं तोड़ूगा। उमय कुवर की दृढ प्रतिज्ञा और धैर्यता को देखकर वनदेवी बडी प्रसन्न हुई और बोली—उमय ? तुम बड़े धर्मात्मा हो निमय के बड़े पक्के हो, मैं तुम्हारी दृढ प्रतिज्ञा से अति प्रसन्न हूँ। भाई ? मैं इस बन की देवी हू—जो मागना हो मागो ? मैं वही दूगी। उमय बोला— बहन जी यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो इन अचेत पड़े हुए सारे साथियों को सचेत करदे और उज्जैन का रास्ता बतलादे। तथास्तु कह देवी ने सबको सचेत कर दिये साथी सब खडे हो गये और बोले—भाई उमय आप बडे उपकारी हो आज आपकी कृपा से ही हमें पुनः जीवन प्राप्त हुआ [जीवित हो गये हैं] हमने आपके लिये हुए नियम का प्रभाव आखों से देख लिया है।

उमय कुमर साथियों को ले वहा से चल दिया, देवी रास्ता-बतलाने के लिये दूर तक साथ आई और रास्ता बतलाके वापिस अपने स्थान को चली गई। अब उमय साथियों के साथ उज्जयिनी के निकट आयातो नगर रक्षक देवता का आसन कम्पायमान हुआ और अवधि ज्ञान द्वारा देखा कि उमय कुंवर अपने घर आने लग रहा और समस्त नगरी में उसकी बुराई की डुंडी पिटरही है और यह प्रजा की निगाह (दृष्टी)से गिरा हुआ है जब तक इसका अपयश दूर न हो तब तक इसका नगरी मे प्रवेश होना ठीक नहीं है। इसलिये इसके फैले अपयश को मैं ही दूर करूगा।

देवता ने शहर के बाहिर एक बहुत बढिया सुन्दर मडप बनाया उसके बीच एक रत्न जडित सिंहासण बनाया औरआते हुए उमयकुवर से मिला और उसके पैरों में पडा हाथ जोड प्रेक्षक मडप में ले गया और सिंहासन पर बैटा देव दुदभी बजाई पच दिव्य प्रकट किये चरण पूजे फूलों की वारिस की। देव दुदभी के शब्द को सुनकर राजा मंत्री सेट सेठानी और नगरी के समस्त नर नारी भागे हुये जगल की तरफ आये कि देखे कि यह देव दुदभी किसके ऊपर बज रही है, पास में आ

कर उमयकु वर को देखा तो वड़ा आश्चर्य पाये । देवता को पग पूजते देखकर राजा मन्त्रि भी उमय कु वर के चरणों मे पड गये । नगर के बड़े २ ऊच्च पदाधिकारी सेठ सहूकार अमीर गरीब सब कुमर के चरणों में पड़े । उमय के माता पिता ने भी इस अपूर्व रचनाको देखा और वह बडे प्रसन्न हुय । उमय सिंहासण से खड़ा हुआ और अपने माता पिता क चरणों में पड़ नमस्कार किया, माता पिता ने शुभाशिर्वाद दिया। नगरी के लोग कहने लगे कि–देखो उमय ने गुरु के कहने से कुव्यसन छोड दिये और गुरु की शिक्षा हृदय मे रख धर्म मे लग गया ' धर्म के प्रसाद से इसकी देवता भी सेवा करने लग गये, सत्य है कि उत्तम पुरुषों की सगति मे बुरा मनुष्य भी उत्तम बनजाता है, फूलों में गुथा हुआ तागा भी राजा महाराजों के मस्तक पर जा विराजमान होता है । धर्म की कृपा से अपूज्य भी पूज्यनीय हो जाते हैं धर्म के इस अपूर्व चमत्कार को देखकर–राजा प्रजा के सामने कहने लगा–जैन धर्म के प्रताप से सब आपत्तियां दूर हो जाती हैं इसलोक और परलोक में धर्म से ही कल्यान होता है जैसे सूर्य के निकलते ही अन्धकार नष्ट हो जाता है ठीक इसही प्रकार धर्म के प्रभाव से भी सब दुःख दूर हो जाते हैं । धर्म अनाथों का नाथ है, विपत्ति में सच्चा मित्र है, ससार रूपी विशाल मरु (मारवाड़+बागड़) भूमि मे कल्प वृक्ष के समान है ससार मे धर्म से चढ बढ कर और कोई सार वस्तु नहीं है इसलिये क्यों न इस नाश–मान क्षणिक सुखों को छोडकर में भी सच्चे जैनधर्म की शरणलू यह कह राजा अपने पुत्र को राज्य दे मन्त्रि और उमय कुंवर तथा नगर सेठ समुद्रदत्त और बहुत से पुरुषों के साथ 'शहस्त्र कीर्ति' गुरु के पास जा दीक्षाधारण करी राजा की रानी मदन वेगा मत्रीकी स्त्री सोमा तथा उमय की माता सागरदत्ता ने भी बहुत सी स्त्रियों के साथ गुरनी अनन्तमतीजी के पास जा जैन साध्वी की दीक्षा लेली । शहर के बहुत से स्त्री पुरुषों ने श्रावक के व्रत धारण किये जैन धर्म की खूब महिमा बढी ।

कनकलता सेठ अर्हदास से बोली–स्वामी नाथ यह धर्म का

अपूर्व चमत्कार मैंने स्वय अपने नेत्रों से देखा जिस को देख कर मैं सम्यक्त्व रत्न मे खूब ही दृढ हो गई हूँ। अर्हदास बोला भद्रे ! जो तुम ने आखों मे देखा है मैं उस में श्रद्धान करता हू चाहता हू और उसमें रुचि करता हूँ। सेठ की अन्य स्त्रियों ने भी कहा धन्य है उमय कुंमार को जो अपने लिये नियम में दृढ रहा, बहन जी जो तुमने कहा वह विल्कुल सत्य है। कुन्दलता बोली—बहन ! ऐसी झूठी वात के कहने और सुनाने में क्या धरा हैं तू क्यों ऐसी झूठी बातें बनाकर इन को बहका रही है। वड वृक्ष पर बैठे हुए राजा और मत्री मन मे जल उठे और कहने लगे हम इस दुष्टा को इसके किये का फल चखावेंगे। चोर सोचने लगा। दुष्ट जो होते हैं वह अच्छे को बुरा कहा ही करते हैं। सेठ अर्हदास जी विद्युतलता से बोला भद्रे ? तुम भी अपने दृढ सम्यक्त्व रत्न प्राप्त होने की कथा सुनओ। विद्युतलता बोली स्वामी नाथ जी सुनिये ।

❀ ८ विद्युतलता का—कथा कहना ❀

कच्छ देश क कौशाम्बी नगरी में मेरा जन्म हुआ था, वहा उस कौसम्बी नगरी में सुदण्ड नाम का राजा था वह न्याय नीति मे से अति निपुण था, उस की रानी का नाम 'विजयासुन्दरी' था। मंत्री का नाम 'सुमतिदेव' और उसकी स्त्री का नाम 'गुणश्री' था। नगर सेठ का नाम 'सुरदेव' था और सेठानी का नाम 'गुणवती' था। एक बार नगर सेठ सुरदेव व्यापार के लिये मङ्गलदेश में चला गया वहा उसने बहुत माल कमाया। चलते समय सेठ ने मङ्गल देशका एक बहुत अच्छा सुलक्षणा घोडा खरीदा और देश में आया घर वालों से मिला और वह घोडा राजा की भेट किया राजा घोड़े को देख के बडा प्रसन्न हुआ और सेठ को वडी इनाम दीं और बहुत प्रशसा की सेठ अपने घर आया और आनन्द से रहने लगा।

एक दिन उस सेठ के घर पर घोर तपस्या के करने वाले एक मुनि अहार लेने के लिये आ गये सेठ ने शुद्ध भावों से आहार दान

दिया आहार दान के प्रभाव से देवताओं ने अचित फूल बरसाये देव दुन्द भी बजाई पच दिव्य प्रकट किये कौशाम्बी नगरी में ही एक दरिद्री वणिक रहता था उसका नाम 'सागरदत्त' था उसकी स्त्री का नाम 'श्रीदत्ता' था उसके अङ्ग से उत्पन्न हुआ एक पुत्र था जिस का नाम समुद्रदत्त था उसने भी सुरादेव के दान के फल को देखा और मन में विचारने लगा कि मैं तो बिलकुल निर्धन हूँ दरिद्रावस्था में भला मैं कैसे आहार दान दे सकता हू जिसके पास रुपया होता है उसकी माता पिता भाई वन्धु स्त्री पुत्र आदि सब इज्जत करते हैं।

कवित—माता कहे मेरो पूत सपूत है, बहन कहे मेरा सुन्दर भैया। तात कहे मेरा है कुल दीपक, लोक में लाज अधिक वधैया। नारी कहे मेरा प्राण पति औ, जिन को जाके मैं लेऊं बलैया। कवि गङ्ग कहे सुन शाह अकबर, जग में सोइ बड़ो जाके गांठ रुपया ॥१॥

मैं भी परदेश जाकर धन कमा कर लाऊंगा और फिर अपने हाथोंमे मुनि महाराजों को आहारदान देऊगा, ये विचार कर अपने चारों मित्रों को ला बुकर बोला—भाइयों चलो परदेश मे चले और वहा मे धन माल कमाकर लावें मित्रों को साथ ले समुद्रदत्त मगल देश मे पहुँचा वहा पालाश नामक गाम मे जाकर अपने चारों साथियो से बोला भाइयो अ र अपन सब को बिछुडना पडेगा और खाय कुमाकर तीसरे वर्ष अपने क इसही गाम में मिलना होगा और फिर आपा सब मिलकर घर को चलेंगे। आपस में इकरार करके सब अलग २ गामों मे चले गये और समुद्रदत्त पालाश गाम मे प्रवेश कर गया। गाम मे एक "अशोक" नाम का घोड़ों का व्यापारी महाजन रहता था उसकी स्त्री का नाम "विनशोका" ॥ उसके एक प्राणों मे भी अधिक पियारी पुत्री थी उसका नाम कमल

श्री था अशोक घोडों की रक्षा के लिये नोकर की तलाश में था कि इतने मे समुद्रदत्त अशोकके घर पहुँचा और जय जिनेन्द्र देव की कहके सामने खड़ा होगया अशोक बोला–भाई क्या चाहता है–समुद्रदत्त बोला श्रीमान् जी मे नोकर रहना चाहता हू। अशोक बोला –मेरे सात सो घोड़े हैं, तू इनकी मे में रहना। समुद्रदत्त बोला आप नोकरी क्या दोगे। अशोक बोला–भाई? मैं तेरे को छठे महिने एक सिर पर बान्धने को साफा ओढने को कम्बल और पैरों में पहन ने को जुत्तो का जोडा दिया करूगा। और तीन वर्ष के बाद मेरे सात सो घोड़ो मे से दो घोड़े जो तेरे पसन्द आवे वह ले लेना। समुद्रदत ने अशोक की बात मानली और घोड़ों की सेवा करने लगा। समुद्रत्त अशोक की पुत्री कमलश्री के लिये जगल में से बड़े स्वाष्टि (मिठे–मन मोहक) फल फूल खाने के लिये लाकर देने लगा और प्रति दिन अच्छा गाना सुनाने लगा उसके दिये हुए मधुर फल फूलों को खा २ कर और अच्छे राग रागियों सुनकर कमलश्री समुद्रदत्त की सेविका वन गई और दिल में प्रण कर लिया कि मैं अपना पति देव समुद्रदत्त को ही बनाऊंगी। ऐसे रहने २ समुद्रदत्तको वहा तीन वर्ष पूर्ण होंने को हो गये तो एक दिन कमलश्री से बोला–कमले? तेरी कृपा से मेरे तीन त्रर्ष वडे आनन्द से बीते अब यहा मेरे साथी आने वाले हैं मं उनके साथ अपने घर का जाऊगा मैं किसी समय भूल बस तुमको कुछ कह दिया होतो क्षमा कर देना यह सुन कर कम श्री एक दम उदास हो गई और बोली–आप तो अपने घर चले जाओगे, बतलाओ मैं किसके सहारे अपना जीवन बिताऊ गी आपके बिना अब मेरा जीना कठिन है, मैं तो अपना बिबाह सब की साक्षी से आपके साथ करूगी और आपके साथ देशको चलू खी। समुद्रदत्त बोला–तू एक बड़े धनवान सेठ की बेटी है, और मे एक गरीब का लडका हूं मेरे साथ चलने मे तरे को सुख नहीं मिलेगा दारद्रितो सदा दुखी रहा करते हैं और जो दरिद्रि के पास में रहनेवालेहोते हैं वह उससे भी अधिक दु ख पाया करते हैं।

कमलश्री बोली–आप इस बात की चिन्ता न करें कि मैं गरीब

हू ? मेरे पिता के पास सातसे घोड़े हैं जिन मे दो घोड़े ऐसे हैं कि जिस के पास वह होते हैं वह धनाढ्य बन जाता है। आप जाते समय वह दोनों घोडे मेरे पिता जी से माग लेना एक घोडा तो आकाश में चलने वाला है जिस का रङ्ग सफेद है दूसरा जल पथा है उसको जल में छोड़ दो वह मुरगाई की तरह तिर के पार हो जाता है। वे दोनों घोडे बडे सुलक्षणे हैं चार अंगुल के उनके कान हैं वह बडे दुबले पतले हैं उसका आप कोई ख्याल मत करना, कमलश्री के कहने से समुद्रदत्ता ने उन ही दोनों घोडों के लेने का निश्चय कर लिया एक दिन समुद्रदत्त के चारों साथी धन माल कमाकर समुद्रदत्त के पास आ गये वहीं सबने खाना पीना किया दूसरे दिन समुद्रदत्त अशोक के पास गया और बोला—सेठ जी मेरे सब साथ आ गये हैं और आपकी सेवा मे रहते मेरे को भी तीन वर्ष हो गये हैं अब मैं अपने घर जाना चाहता हूं जो कुछ इनाम देना चाहते हो वह मेरे को देकर बिदा करो।

अशोक बोला—भाई तू क्यों जाना चाहता है जो नोकरी कम मिलती हो तो वैसी कह तेरी नोकरी बढा दूंगा तू यहीं रहा कर—मैं अपनी कमलश्री का विवाह भी तेरे से कर दूगा। समुद्रदत्त बोला सेठ जी आपने कहा [illegible] है किन्तु इस समय तो मैं और कुछ न चाह कर केवल इनाम ले घर जाना चाहता हूँ आप जल्दी ही मेरे को घर जाने की आज्ञा दें। अशोक ने समुद्रदत्त को बहुत कुछ इनाम किनाम दे बोला भाई मेरे सातसे घोड़ों में से जो तेरे पसन्द आवे वह लेले, आज्ञा होने पर समुद्रदत्त घोडा के पास गया और वही आकाश पन्था और जलपन्था घोडे छांट लिये और कहा सेठ जो आप मेरे को यह दोनों घोडे देदें यह देख कर सेठ को बड़ी चिन्ता हुई और बोला समुद्रदत्त तू बडा मूर्ख है जो इतने दुबले पतले घोड़ों को पसन्द करता है, जो तैने घोडे लेने हैं तो यह सामने मोटे ताजे गोर बरण के हैं इनमें जो अच्छे से अच्छे हों वह लेले। समुद्रदत्त बोला—सेठ जी चाहे यह कैसे भी क्यों न हों देने हों तो आप मेरेको यहीदेदें, दूसरे घोडे मैं नहींलूगा, समुद्रदत्त

के कथन को सुनकर पास में रहने वाले बोले—सेठ जी आप मिक मूर्ख को समझाय रहे हो यह तो बड़ा जिद्दी और हठी है। सेठ बोला—भाइयों यह मूर्ख क्या है कोरा भाग्यहीन है इसको बुरी वस्तु तो अच्छी लगती है और अच्छी बुरी लगती है।

समुद्रदत्त बोला—सेठ जी तीन बर्ष की सेवाका फल जो आप मेरे को देना चाहते हो और अपने दिये हुये बचनका आपको कुछ ख्याल हो तो बस मेरे को येह दोनों घोड़े दे दो। सेठ भागा हुआ अपने घर गया और घर वालों को इकठ्ठा कर पूछा कि बतलाओ मेरे इन दोनों कीमती घोडो का भेद समुद्रदत्त को किसने बतलाया जिससे वह दोनों घोड़ों के लिये ही इतना आग्रह कर रहा है। सबने सपन्थ पूर्वक (सोगन्द खाकर) कहा—सेठजी ? हमें पता नही कि किसने भेद दिया—बीच में एक नोकर बोला—सेठजी आपकी पुत्री कमलश्री ने एक दिन समुद्रदत्त के सामने इन दोनों घोडों के गुण बतलाये थे। ये सुनकर सेठ को गुस्सा आया और मन में कहने लगा कि—कमलश्री बडी दुष्टा है कि जिसने घर का सारा भेद समुद्रदत्त को दे दिया—स्त्री जाति जो कुछ न करले वहीं थोड़ा है, ये वहुत ओड़े दिल की होती हैं कहा भी है कि—

श्लोक—अपक्वे तु घटे नीरं, चलिन्या सुक्ष्म पिष्टकम् ।
स्त्रीणाँच हृदय वार्ता, न तिष्ठति कदापि हि ॥ २ ॥

भा०—जैसे कच्चे घडे में पानी और छलनी में बहुत बारिक [सुक्ष्म] चून नही रह सकता ठीक इसही प्रकार स्त्री भी कही सुनी देखी हुई बात को को हृदय में नहीं रख सकती, स्त्री घर की बात को तिलभर भी नही पचा सकती वार्तो से मालूम होता है कि कमलश्री इस पर मोहित हो रही है इस लिये इसने इसका सारा भेद बतलादिया है, यदि मैं इसको कुछ कहा सुनी करूगा तो वह भी ठीक नहीं है क्यों कि यह बालक पन से मेरे सारे घर की भेदु है और घर का कुछ भेद न देदे के मैं दो घोड़े

देने की प्रतिज्ञा कर चुका हूँ न दूंगा तो वचन झूठा जावेगा । सेठ ने सोच समझकर समुद्रदत्त को वह दोनों घोडे दे दिये और अच्छा सा दिन देखकर कमलश्री का विवाह भी समुद्रदत्त के साथ कर दिया और माल भी दिया। अब समुद्रदत्त कमलश्री को और दोनों घोडो और माल ताल को ले अपने साथियों के साथ देशको चल दिया, इनके चलने मे पहिले ही लोभ वस हो सेठ समुद्रपर जाकर मल्लाहों को लोभ लालच दे बोला- मेरी बेटी और जमाई यहा आवेंगे उनके पास दो घोड़े हैं पार उतार्इ पार उतराई की एवज] मे और कुछ न मागकर उन से वह दोनों घोड़े मांगलेना। सेठ पुत्री और जमाई को दूर तक छोड अपने घर का चला आया और वह समुद्रपर आये।

समुद्रदत्त मल्लाहों से बोला-तुम हमको पार उतार दो और जो कुछ उतराई का लेना हो वह खोल दो। मल्लहा बोले-हमारे कोई खेती नहीं बाड़ी नहीं, हमारे तो काम यही है कि आये गयों को पार उतारना यदि आपको पार उतरना हो तो जो आप के पास ये दुवले पतले घोडे हैं ये देदीजिये यदि आप उतराई की ऐवज मे घोडे नदोगे तो हम आप को पार नहीं उतारेंगे और न जहाज में आपका माल ही चढने देंगे। समुद्रदत्त बोला भाई घोडे तो मैं नहीं दूंगा और जो उचित हो वह उतराई लेवें। मल्लाहबोले-हम घोड़ो के सिवाय और कुछ नही लेंगे। समुद्रदत्त के साथियों ने भी कहा कि तू क्यों हट करता है क्यों नही घोडे देकर परले पार हो जाता। कमलश्री बोली नाथ आप और किसी प्रकार के विचार में न पड़ें आपा दोनों गगन पन्थी घोड़े पर बैठ लेगे और जो कुछ माल ताल है वह जल पन्थी घोड़े पर धर कर पार हो जायेगे अब समुद्रदत्त ने सब सामान जल पन्थी घोड़े पर लाद दिया और एक बडा सा रस्सा उसके गले मे बान्ध हाथ मे पकड़ आकाश मे उडकर चलने वाले घोडे पर बैठ समुद्र से परले पार हो गये मल्लाह और उसके साथी सब देखते के देखते रह गये और वह कुशलता पूर्वक अपने घर पहुँच गया और घर वालों से मिला आनन्द के साथ घर रहने लगा एक

दिन समुद्रदत्त आकाश गामी घोडे को ले 'सुदण्ड' राजा के पास गया हाथ जोड भेट सामने रख अपना आद्योपान्त सब वृतान्त कह सुनाया और वह घोड़ा भी भेट में दे दिया। राजा ने भेंट स्वीकार कर अपनी पुत्री 'अनङ्गसेना' का विवाह समुद्रदत्त के साथ कर दिया और आधा राज्य दिया और बहुत कुछ माल दे विदा किया अब समुद्रदत्त दोनों स्त्रियों के साथ आनन्द पूर्वक रहने लगा साधु मुनि महाराजों को चोदह प्रकार का दान देने लगा, अपने पवित्र धन को दान पुण्य में लगाने लगा। शहर भर में समुद्रदत्त की महिमा सुरदेव से भी अधिक फैल गई उस ही नगरी में एक 'ऋषभदत्त' सेठ रहता था वह राजा का परम मित्र था राजा ने ऋषभदत्त को बुलाकर वह गगन पन्थी घोड़ा रक्षा के लिये सोंप दिया अब सेठ रात दिन घोड़े की रक्षा में रहने लगा, घोडे पर हाथ फेर २ कर सेठ ने घोडे को अपने बस में कर लिया।

एक दिन सेठ ने विचार किया कि क्यों न इस घोडे पर चढकर साधु साध्वियों के दर्शन करू, यह विचार कर सेठ दूज पञ्चमी अष्टमी एकादशी चतुर्दशी अमावस्या पूर्णमा को वैताढ्य पर्वत पर जाकर साधु साध्वियों के दर्शन कर उपदेश सुन घर आ जाया करता था, पापियों का समय लडाई झगडे या सोने में बींता करता है और धर्मात्माओं का समय धर्म कार्य में बीता करता है सारे शहर में सेठ ऋषभदत्त की महिमा फैल गई। एक दिन का जिकर है कि सेठ घोडे पर बैठा हुआ आकाश मार्ग से वैताढ्य पर्वत पर जा रहा था कि रास्ते में पल्लीपुर (कनकपुर) नाम का नगर आया वहा का राजा जितशत्रु था वह बड़ा अन्यायी और पापी था उसके राज्य में चोर जुवारी परस्त्री लम्पट ठग कपटी बहुत रहते थे। एक राज्य कर्मचारी ने आकाश मार्ग से घोड़े पर बैठ कर जाते हुये सेठ को देखा वह भागा हुआ राजा के पास गया और कहने लगा श्री महाराज देखिये यह आकाश में घोडे पर बैठा हुआ जो जा रहा है यह कौशम्बी नगरी का ऋषभदत्त सेठ है। जिसके पास यह घोडा होगा वह ससार मे लक्ष्मी पात्र समझा जावेगा।

राजा ने सभा लगाई और सबके सामने कहा ऋषभदत्त के पास जो घोड़ा है वह है तो दुबला पतला किन्तु है सुलक्षणा और गुणी। जो इस घोडै को लाकर मेरे को देगा मैं उसको आधा राज्य इनाम मे दू गा और साथ मे अपनी पुत्री व्याह दू गा इस कार्य के करने की किसी को हिम्मत न हुई। एक कुन्तल नामक धूर्त बोला—पृथ्वी नाथ ? मैं प्रतिज्ञा करता हू कि आपका काम—मैं बना दू गा। यह कह कर राजा की आज्ञा ले कौशम्बी को चल दिया रास्ते मे एक शहर आया वहा सागर—चन्द्र गुरु के पासजा श्रावक धर्म सीख लिया और ब्रह्मचारी का भेष बना कौशम्बी के बाहिर स्थान मे आखो के पट्टी बान्धकर धर्म ध्यान करने लगा। कभी बेले २ कभी तेले २ पारना करता, साधर्मी भाई स्थानक मे आने और कहने भाई सहाब आप प्रति दिन भोजन जीमालया करे तो अच्छा है क्यों कि रुगणावस्था [बिमारी की हालत] मे भोजन न जीमने से रोग बढजाया करता है।

ब्रह्मचारी जी बोला भाइयों जिसकी आखों मे तकलीफ हो पेट मे पाड़ा हो मस्तक मे दर्द हो ज्वर [बुखार] आता हो फड़ो। फुन्सी हों ऐसी दशा मे उपवास करना ही लाभ प्रद होता है। व्रतो पचासादि तप द्वारा हो शरीर के सारे रोग नष्ट हुआ करते हैं। ब्रह्मचारी को धर्मात्मा समझ श्रावकगण सब उसके भक्त बन गये।

एक दिन सेठ ऋषभदत्त भी बाहिर वाले थानक मे आ गया और पूछा यह नया श्रावक कौन है ? थानक रक्षक ने कहा सेठ जी यह महा तपस्वी और महा ब्रह्मचारी श्रावक है इस के दर्शन से पाप झड़ते हैं अनुचर की बात सुनकर सेठ बडा प्रसन्न हुआ और हाथ जोड़ जय जिनेंद्र कर बोला ब्रह्मचारी जी आप मेरे घर पर चलो और वहीं रहो मैं आपकी आखों का इलाज भी करवा दू गा आप मेरे घर पर रह कर तपस्या व पारना करते रहना। भक्त जी बोला—सेठ जी हम त्यागी हैं त्यागियो का गृहस्थि के घर पर रहना ठीक नहीं होता ब्रह्मचारियों का तो एकान्त मे रहना ही ठीक है। सेठ बोला—ब्रह्मचारी जी जिस का

कर्मों का बीज राग द्वेष पतला पड़ गया उसके लिये ऐसा ही तो घर है और ऐसा ही वन है। सेठ के आग्रह को देखकर बोला–अच्छा चलो सेठ जी मैं आपके साथ चलता हू यह कह सेठ जी के साथ हो लिया धूर्तानन्द जी त्रिकाल सामायिक करने लगा व्रत पोषा करके तथा इधर उधर की बातें बना २ कर सेठ को भ्रमा लिया। पारना में सेठ उसको बढिया से बढिया माल खिलाने लगा सेठ ने उसको घोडे के पास वाली बैठक मे ठहरा दिया वह आख का पल्ला उठाके देखने लगा कि कब मेरा दाव लगे और कब मैं घोड़ा लेकर भागूं। एक दिन सेठ के एक नोकर ने उसको ऐसे करते देख लिया और उसके सारे कपट को समझ लिया आकर सेठ जी से बोला–आपने अपने यहा किस को ठहरा लिया यह तो बड़ा धूर्त (चालबाज ठग) है आप इसको ब्रह्मचारी न समझना, यह तो बड़ा मायावी एव बना बनाया बुगला भगत है आप यदि इसको अपने यहा ठहराओगे तो यह आपके घर बार को लूट के चलता बनेगा जिस से आप को पछताना पड़ेगा। सेठ बोला अरे पापी तू ऐसे धर्मात्मा ब्रह्मचारी की निन्द्रा करता है निन्दकों को शास्त्रों में पापी बतलाये हैं तू इस पाप को कहा भोगेगा ? धूर्त बोला-सेठ जी आप इस पर क्रोध न करें, मेरा आत्मा ही पापों से भारी हो रही है, वह दिन धन्य होगा जिस दिन मैं पापों से रहित हो मोक्ष को चला जाऊंगा। सेठ ने कहा देखो यह ब्रह्मचारी कितने शान्ति स्वभाव वाला है अपनी निन्द्रा करने वाले पर भी क्रोध नहीं करता, धन्य है इसको। सेठ धूर्त की तन मन धन और सब प्रकार से सेवा करने लग गया और सेठ के कुटुम्ब वाले भी उसकी सेवा में जुट गये।

एक दिन सेठ और उसके परिवार को घोर निन्द्रा मे देख धूर्त कुन्तल उस आकाश गामी घोडे पर चढ आकाश मार्ग से अपनी राज्य धानी की तरफ चल दिया। जल्दी चलाने के लिये उसने घोडे के चाबुक [कस्सा] मारा। वह उत्तम जाति का घोड़ा था भला क्यों मार खाने लगा झट आकाश मे उछला। घोड़े का उछलना था कि धूर्त घोडे से नीचे

गिर गया और मर गया मर के नरक को गया। उसने आधे राज्य के लोभ मे पड़कर जैसा कपट किया था वैसा फल पाया। अब वह घोड़ा कहीं न जाकर सीधा वैताढ्य पर्वत पर गया इतने मे वहा पर चित्रागति और मनोगति नाम के दो मुनिराज आ गये घोडे ने उनके चरणों में अपना मस्तक झुकाया और सामने खडा हो गया। इतने में साधु जी के दर्शनार्थ वहा पर विद्याधरों का राजा आया और बन्दना नमस्कार कर देख कर बोला—हे गुरु देव—यह घोड़ा किस का है? गुरु ने अवधिज्ञान द्वारा घोडे का सारा हाल देखकर ऋषभदत्त और पापी कुन्तल का सारा किस्सा कह सुनाया और कहा वह पापी तो घोडे से पड़कर बन मेमर गया है और यह घोडा आ गया इसलिये—

हे खगराज? अब सेठ ऋषभदत्त पर मरणान्तिक शंकट आने वाला है तुम इस अश्वपर चढकर कौशम्बी पुरी जाओ और वहा सेठ का शकट टालो। गुरु की आज्ञा होने पर साधर्मी भाई का शकट मेटने के लिये खगेश घोड़े पर चढ कौशम्बी को चल दिया। इधर कौशम्बी मे प्रातः काल होते ही सेठ की आख खुली नोकरों ने आकर कहा कि—सेठ जी! वह पापी भगत आपके अश्व रत्न को लेकर भाग गया है यह सुन-कर सेठ का दम ऊपर की ऊपर और नीचे का नीचे रहगया और सोचने लगा कि अब मेरे अशुभ कर्म का उदय हो आया हैं, राजा को मालूम होगा तो वह न मालूम मेरे को किस बुरी मोत से मारेगा। क्यों कि राजा लोग किसी के मित्र नही होते। सेठने अपने घर के तथा कुटुम्ब के सब लोगों को इकत्र कर बोला—भाइयों? मेरा तो जो कुछ होंना होगा वह होवेगा ही लेकिन तुम लोग जैनधर्म को न छोडना, धर्म से ही तुमको सब सुख प्राप्त होते रहेगे। एक सज्जन पुरुष बोला—देखो सेठ जी कितने धर्मात्मा हैं जो अपने अन्तिम समय में भी अपने कुटुम्बियों को सत्य सनातन जैनधर्म की शिक्षा दे रहा है धर्म के प्रभाव से तो सेठ जी का शकट अवश्य ही टलना चाहिये था किन्तु अब कलियुग लगनेवाला ही है उस कलयुग के आगमन का ही यह प्रभाव है कि ऐसे धर्मात्मा सेठभी

शंकट मे आफमे कलियुग मे जो न हों जाय वहीं थोड़ा है—

श्लोक—दाता दरिद्र कृपणो धनाढ्यः, पापी चिरायुः सुकृतिर्गतायुः ।
कुले च दास्य अकुलेच राज्य, कलौयुगे षड् गुण मावहन्ति ॥ ३ ॥

भा० कलियुग की कृपाही ऐसी है कि इसमें दाता तो दरिद्रि हो जाते हैं कृपण धनवान कहाते हैं, पापी बडी उमर पाते हैं, और धर्मात्मा छोटी (अल्पायु) मे ही काल के गाल में चले जाते हैं अच्छे (खानदानी) घरके दास [नोंकर] वनत हैं और नीच जातिके स्वामी [मालिक अफसर] बन राज्य करते और हुक्म चलाते हैं राज्यकीय करों के कारण देश अधो पतन की और चला जा रहा है राजा लोगों के दिलों में लोभ ने आकर ब स करलिया है, दुर्जन (दुष्ट) मौज उडाने लग गये, सज्जन पुरुषों पर एक से एक चढवढ कर विपत्ति के पहाड टूट करपडने लग रहें हैं। सेठ बोला—भाइयो घबराने की कोई बात नहीं है, धर्म करता होवे हाण, तों भी न छोड़े धर्म की बान, यह कहके मेठ पासवाले जैनस्थानक मेंगया और वहा सागारी सथारा पच्चक्खकर बैठ गया और यह प्रतिज्ञा करली कि जो मैं इस शकट से बच जाऊगा तो भोजन पानी जीमू गा नहीं तो जीवन पर्यन्त मै अन्न पानी को त्यागता हूँ यह कह सेठ मन को बस में कर भगवत् भक्ति में लीन होगया। प्रातः काल होते ही सुदड राजा को मालूम हुआ कि सेठ ऋषभदत्त ने घोड़े को खो दिया। उसी समय यम-दण्ड कोतवाल को बुलाकर कहा देखो ऋषभदत्त हमारा बड़ा शत्रू है। जिसने मेरे अश्वरत्न को भी चलता कर दिया तुम उसके स्थानपर जाओ और तलवार से उसका मस्तक उतार कर लाओ, राजा की आज्ञा होते ही कोतवाल सिपाहियों को साथ ले सेठको मारने के लिये चल दिया, उधर जैन शाशन रक्षिका देवी का सिंहासन कम्पायमान हुआ और वह अवधीज्ञान द्वारा सेट पर शकट आया हुआ जान भागी हुई सेठ के पास आई। यमदड स्थानक की पोली [घ्लीज] में सेट को मारने के लिये प्रवेश करने वाला ही था कि देवी ने कोतवाल के और उसके साथियों के वहीं पग स्थम्भन कर दिये। अब वह न तो आगे ही चल सके और

शरण हूँ अज्ञानता बस मैंने जो आपकी आसातना करी है उसकी मैं आप से बार बार क्षमा चाहता हू। सेठ ने अपना उपसर्ग दूर हुआ जानकर ध्यान खोल राजा से बोला—श्री महाराज आपका इसमें कोई अपराध नही है, मेरे यहा से जो आपके घोडे का अपहरण हुआ है तभी तो आपने मेरे बध की आज्ञा दी जिसका नुकसान हुआ करता है वह क्रोध के बस होकर जो न करदे वही थोड़ा है। मैंने सागारी सथारा कर दिया था धर्म की कृपा से मेरा सब शकट टल गया और यह आपका अश्वरत्न भी आ गया है। शहर के सब पच लोग भी सेठ के पास आ गये और चरणों में पड़े इतने में एक महाशय बीच में ही बोल उठा कि सेठ जी आज आप के मरने में कोई कसर नहीं रही थी पर धर्म के महा प्रभाव से आप बच गये। सेठ बोला भाई मेरे को मरने का किंचित भी भय नहीं था किन्तु भय था तो केवल इस बात का था कि धर्म के कलक लग जावेगा। मृत्यु के मुख से तो कोई बच ही नहीं सकता और न कोई मृत्यु से किसी को कोई बचाने में समर्थ है। विद्याधर राजा बोला—सेठ जी आप इस घोडे को सम्भालो, यह कह गुरु की बतलाई हुई घोडे की सब बातें कह सुनाई। सेठ बोला—भाई तुम स्वय इस घोड़े को राजा के यहा बाध आओ अब मैं इस को अपने यहा नहीं बाधूगा तुम ने मेरे ऊपर बड़ा उपकार किया ज यहा आकर मेरी जान बचाई और धर्म के लगते हुए कलक को मेटा। जैन धर्म की सुरक्षिका देवी बोली राजन् मैं ने आपके कौतवाल और सैनकों के पग स्थम्भन किये थे। अब सेठ का शकट टल गया आपने सेठजी का शरण ग्रहण कर लिया इस लिये मैं भी अब सब के पग खोलती हू। यह कह सबके पग खोल दिये विद्याधर ने देवी और देवताओं ने मिलकर सेठ की महिमा गाई और सब अपने अपने स्थान को चले गये। यह दृश्य देखकर राजा अपने मन में सोचने लगा कि देखो मैं कैसा पापी हू जो एक घोड़े के लोभ मे पड़कर इस धर्मात्मा की जान का दुशमन बन गया, मनुष्य लोभ के वस में पड़कर क्या २ पाप नहीं कर बैठता। यह तो सेठ धर्मात्मा था जिसने मेरे अव–

गुणोंपर ध्यान न दे मेरे अपराध को क्षमा कर दिया, धन्य है इस के जीवन को और धन्य है इसकी माता को कि जिसकी पवित्र कुक्षी से इस ने जन्म लिया।

राजा बार २ सेठके चरणों मे पड़ा और आये हुये नगर वासियों से बोला—भाईयों जन धर्म का यह अपूर्व चमत्कार आज मैंने प्रत्यक्ष अपने नेत्रों से देख लिया है। ससार मे जैन धर्म ही सार है, यही ससार सागर से पार उतारने के लिये जहाज के समान है यह कह राजा घर पर आ अपने पुत्र को राज्य दे गुरु 'श्री जिनदत्त' के पास जा मुनि दीक्षा ग्रहण की, राजा की रानी बिजया देवी मंत्री की स्त्री गुणश्री, सुरदेव की स्त्री गुणवती, सागरदत्त की स्त्री श्रीदत्ता, समुद्रदत्त दी स्त्री कमल श्री और शहर की बहुत सी स्त्रीयों ने गुरनी श्री अनन्त श्री के पास दीक्षा धारण करली। शहर के और बहुत से स्त्री पुरुषों ने श्रावक के व्रत धारण किये।

विद्युतलता सेठ अर्हदास से बोली—स्वामीनाथ ? यह धर्म का अपूर्व प्रभाव मैंने आखों से देखा, जिसको देखकर मैं सम्यक्त्व रत्न मे पूर्ण दृढ हो गई हूँ। विद्युतलता कीकही हुई बातको सुनकर अर्हदास का चित अति प्रसन्न हुआ और बोला—हे भद्रे ? मैं तुम्हारे सम्यक्त्व रत्न दृढ होने की बात की श्रद्धान करता हू और उसे चाहता हूँ। सेठ की अन्य स्त्रियों ने भी विद्युतलता की कही हुई बात की प्रससा। कुन्दलता तो वहीं दृढता के साथ बोली—भोली बहन तेरे को कहते लज्जा नहीं आती कि मैं सम्यक्त्व रत्न में दृढ हूँ।

राजा मत्री सोचने लगे—देखो विद्युतलता ने अपनी आखों देखी बात कही है पर यह दुष्टा तो किसी की भी बात को सच्ची नहीं मानती प्रात' काल होने ही इस को दण्ड दिया जावेगा, बिना दण्ड के इसकी बुद्धि ठिकाने नही आवेगी। चोर अपने मन में कहने लगा यह बड़ी दुष्टा है, दुष्ट का स्वभाव कभी जाता ही नही है, कोयल और काग दोनों काले रङ्ग के होते हैं किन्तु बसन्त ऋतु में कोयल जब पचम स्वर से

बोलती है तो काग मन मे जल उठता है, कोयल जैसी सुन्दर सुहावनी बोली तो वह लावे कहा से उल्टा कोयल को मारने दौड़ता है, यही हाल कुन्दलता का है इस के पास करने धरने को तो कुछ नही है, यह इनकी बातों की अनुमोदना (बड़ाई) न कर इन में कुछ न कुछ खोट काढती रहती है अच्छा यह अपने किये को पावेगी। एक पहर रात रह गई तब मंत्री जी राजा से बोला श्रीमहाराज चलिये अब अपने घर को चलें क्योंकि अब रात्रि बहुत थोड़ी रह गई है। राजा मंत्री अपने अपने घर को चले गये और महलों में जाकर सो गये। चोर भी और कहीं न जाकर अपने घर पर जाकर सो गया। प्रातःकाल हुआ राजा और मत्री की आख खुली और उनका सब परिवार जो बन म महोच्छव मना रहे थे वे सब आ गये।

राजा मत्री से बोला—मत्री जी ? सब से पहिले मैं कुन्दलता को दण्ड दू गा और फिर दूसरी बात करू गा। मत्रीने अपना सेवक भेजकर सेठ अर्हदास को बुलाया और कहा—सेठ जी आपके यहा कोई किसी बात की कमी नहीं है इस लिये आज आप राजा जी का भोजन अपने यहा करवाइये। सेठ बोला—मत्रीजी ? मैं अपने बड़े अहोभाग्य समझू गा जो राजा साहब मेरे घर पधार कर कृपाकर मेरे घर का भोजन जीमें। मत्री को साथ ले सेठ अर्हदास राजा जी के पास गया और अपने घर पधारने की प्रार्थना करी—मत्री बोला—श्रीमहाराज यह सेठ आपका सेवक एव पुत्र तुल्य है यह जो आपसे अपने घर पधारने की प्रार्थना कर रहा है अपने पुत्र के घर पर जाने मे जैसे पिता को विचार नहीं होता है ठीक इसी प्रकार का विचार नहीं करना चाहिये। आप अवश्य इसके यहाँ पधारें राजा जी ये सेठकी प्रार्थना को स्वीकार करली सेट अपने घर गया और भोजन का प्रबन्ध किया।

राजा मत्री को और कचहेरी के सब आदमियों को साथ ले हाथी पर बैठ बड़े ठाठ बाट के साथ सेठ के घर गया। सेठ ने सबका यथा योग्य स्वागत किया और सब को भोजन जीमाया। पानफूल सुपारी लोंग

इलायची आदि मुखवास के लिये दिये, जीम झूठ कर राजा जी सेठ की वैठक मे गये गद्दी लग गई राजा जी गद्दी पर विराजमान हुए बराबर वाले आसन पर मत्री जी बैठे और हाली मुहाली सब सामने बैठ गये। चोर को मालूम हुआ कि राजा साहब अपने परिवार को साथ ले सेठ अर्हदास जी के घर गये हुए हैं। उसी समय चोरको सतोष पैदा हो गया तृष्णा से मन फेर लिया और जिस २ का माल चोर २ के ले गया था उसकी गाठें बाध २ कर अपने और अपने साथियों के मस्तक पर धर धाजार के बींचों बीच होता हुआ राजा के पास पहुँचा और हाथ जोडकर सामने खड़ा हो गया। राजा बोला—सुवरण खुर तेरा इस समय कैसे आना हुआ और यह क्या माल ताल लाया है। सुवरण खुर बोला—प्रभु मैंने शहर वालों को लूट २ कर यह धन एकत्र किया था आज उसी धन को आपके सामने रखता हूँ जिस २ का यह धन हो कृपा कर उन सबको बुलाकर यह धन माल सभाल दें। प्रभु ? मेरा सारी उमर चोरी करते २ बीत गई, इस चोरी के व्यसन मे पडकर प्राणी घोर नरकों के दुःख सहता है। प्रभु ? अब तो मैं इस नासवान असार ससार को त्याग दीक्षा ग्रहण करूगा।

राजा बोला—भाई तेरे को यह ज्ञान कैसे प्राप्त हुआ। चोर ने सेठ अर्हदास और उनकी स्त्रियों की कहीं सुनाई हुई सब बातें कह दी और कहा मैंने तो रात्रि को ही अपने मन से चोरी करने का नियम कर लिया था। जिस २ का माल था राजा ने सब को बुला कर सौंप दिया। अब राजा सेठ से बोला—सेठ जी ? रात्रिके समय जो तुमने और तुम्हारी स्त्रियों ने सम्यक्त्व रत्न मे दृढ होने की धार्मिक कथायें कही थीं उनको हमने बड़े प्रेम के साथ सुनी जो कुछ तुमने और तुम्हारी स्त्रियों ने बातें कही वह सब सच्ची थी किन्तु तुम्हारी सबसे छोटी स्त्री कुन्दलता ने उन सबों को झूठ बतलाकर तुम्हारी सब की निन्दा की वह बड़ी दुष्टा है और तो सब झूठे हैं तो वह एकली सच्ची कैसे बन सकती है। एक न एक दिन वह तुम्हारी मृत्यु का कारण अवश्य बनेगी। पुरुषों के लिये दुष्ट

स्वभाव की स्त्री और मूर्ख मित्र, उत्तर देने वाला नोकर, सर्प वाला घर दुःख दायी होता है तुम इस बात को खूब सोच समझ लो और तुम उस पापनी को मेरे सामने लाओ, मैं उसको दण्ड दूंगा बिगर दण्ड के उस की अकल ठिकाने नहीं आयेगी सेठ कुन्दलता को बुलाकर लाया वह हाथ जोड कर सामने खड़ी हो गई और बोली पृथ्वीनाथ मैं आपके सामने खड़ी हू। प्रभु? मैंने जो इन सब को झूठा बतलाया उसके रहस्य (मतलब)को आप नहीं समझे। इन सबों ने जो कुछ कहा और इनका जैसा जन धम पर निश्चय है मैं उसको अच्छा नहीं समझती और न मेरी इनकी बातों में रुची है ये सब जैन कुल में उत्पन्न हुए हैं और जैन ही धर्मानुयायि इन के माता पिता भाई बन्धु हैं ये जैन धर्म को छोड़ कर और धर्म को तो जानते ही नहीं हैं जैन धर्म के महात्म्य को देख कर जैन गुरु के उपदेश को सुनकर इन्हों ने क्या करा, एक व्रत पोषध सामा-यिक करके मनोरंजन के लिये ऐसी वैसी कथा सुनाके वाह २ लूटने के सिवाय और इन्हों ने क्या हासिल [प्राप्त] किया। ये रात दिन विषय भोगों में फसे रहते हैं तो हे पृथ्वी भूषण ! आप ही बतलाइये ये सम्य-क्त्वी कैसे हुये। जो गौ न तो ब्याती है और न दूध ही देती है तो भला यदि उसके गले में घण्टा बाध देवे तो क्या उसका मूल्य बढ़ जायगा। अहरण की चोरी करके कोई सूई का दान करे तो क्या वह चोर चोरी के पाप से मुक्त हो सकता है खाली सम्यक्त्व २ कहने से मुक्ति नहीं मिला करती 'समदिट्ठी न करोनि पाव' समदृष्टि की आत्मा पापों से पृथक रहती है अर्थात् उत्कृष्टी समकित वाला प्राणी कभी पाप नहीं किया करता और मेरे पतिदेव तथा ये मेरी बहनें मोह माया और पाप में फंसे हुये हैं मैं न तो स्वय जैनी हूँ और न मेरे माता पिता भाई बन्धु ही जैनी हैं, इन अपनी प्यारी बहनों तथा पति देव के मुखारविन्द से निकली हुई जैन धर्म की बातों को सुन २ कर मेरे को वैराग्य हो गया और इन की इन धार्मिक कथाओं को सुन २ कर ही मेरे को ज्ञान प्राप्त हो गया अब [illegible] देखो मैं सब के सामने इस असार संसार को त्याग कर जैन [illegible]

दीक्षा लेती हू। यह कह कुन्दलता दीक्षा लेने के लिये तैयार हो गई।

कुन्द्‌ता के ऐसे उत्कट वैराग्य को देखकर राजा मत्री सेठ और चार को बड़ा आश्चर्य हुआ। सब उसके चरणों में पडे, नमस्कार कर राजा बोला धन्य है सती जो तुम कहती हो वही करके दिखलाती हो इस संसार में कहने वाले तो बहुत मिलजाते हैं किन्तु करके दिखलाने वाले तो बहुत ही थोडे मिलेगे। कथनी के सूरे घणे, थोथे बान्धे तीर। जिनके चोट प्रेम की, उनके बिरले शरीर ॥

कुन्दलता पति देव की आज्ञा ले "उदयश्री" गुरनी जी के पस जाकर जैनसाध्वी की दीक्षा धारन करली। उदितोदय राजा घर गया और अपने पुत्र को राज्य का भार सम्भला दिया, सुबुद्धि मंत्री ने अपने पुत्र को मत्री की पद्वी दी अर्हदास सेठ और सुवर्ण खुर चोर सब अपने २ पुत्रो को घर का भार स भला सैंकडों हजारों पुरुषों के साथ वन खड में जाकर "गुणधर" गुरुके पास जा जैन साधु की दीक्षा ग्रहण करी। राजा की रानी मत्री की स्त्री चोर की घर वाली सेठ अर्हदास की मित्रश्री आदि सातो स्त्रियो ने और शहर की बहुत सी स्त्रियों ने जैन साध्वी श्री उदय-श्री जी के पास जाकर दीक्षा ली और शहर के बहुत से स्त्रि पुरुषों ने जैन धर्म की अपूर्व महिमा देखकर श्रावक के व्रत धारन किये। मुनिव्रत धारी अर्हदास जी और साध्वी श्री कुन्दलताजी आदि जपतप करके मोक्ष को पहुँचे और उन दिक्षित साधु साध्वीययों में से बहुत से स्वर्ग और मोक्ष को गये। सम्यक्त्वरत्न मे दृढ कराने वाली यह सेठ अर्हदास और उसकी मित्रश्री आदि स्त्रियों की धार्मिकि कथा गुरुदेव श्री गोतम स्वामी के मुखसे सुनकर राजा श्रेणिकका चित बडा प्रसन्नहुआ और अपने स्थान को चला गया। भगवान भी अपनी शिष्य मडली के साथ भव्य जीवों के उद्धार के लिये ग्राम नगरों में बिचर गये।

जो भव्य प्राणी इस सम्यक्त्वरत्न प्रकाश, ग्रन्थ को पढेगा और इसके तत्त्व [सार] का समझेगा सम्यक्त्व के पालन मे आलशय न करेगा वह ससार सागरसे पार हो जावेगा तथा जो इस ग्रन्थ कोसुनेगा और हृदय में

धारन करेगा उसको अवश्य स्वर्ग और मोक्ष के सुखों की प्राप्ती होगी और उसके घर में पुत्र पौत्र धन धान्य आदि किसी भी वस्तु की कमी नही रहेगी।

गा०—जिण वयण अणुरत्ता, जिण वयण जे करेंति भावेण।
अमला असकिलिट्ठा, ते होंति परित्त ससारी ॥१॥ उत्राध्ययन अ०३६

श्रमण भगवन्त श्री महावीर, त्रिशला नन्दन हरिओ पीर, बोलो भगवान श्री महावीर स्वामी की जय। सम्यक्त्वरत्न धारी श्रीसघ की जय। आचार्य गुरुदेव पूज्यश्री रघुनाथ जी महारा की जय। प डित स्वामी श्री ज्ञान चन्द ज महाराज की जय।

जब लग मेरु अडिग है, जब लग शशी और सूर।
तब लग रत्न प्रकाश ये, रहजो गुण भर पूर ॥ २ ॥

यह सम्यक्त्व रत्न प्रकाश ग्रन्थ शुभ मिति वैशाख शुक्ला १५ पूर्णमा को पूर्ण हुआ विक्रम स० २००३ शुभम्। आचार्य पूज्य श्री मनोहर दासजी महाराज की सम्प्रदाय के आचार्य पूज्य श्री रघुनाथजी महाराज प० स्वामी श्री ज्ञानचन्द जी महाराज का शिष्य मुनि श्री खुशाल चन्द जी म० मु० सोनीपत जिला रोहतक विक्रम स० २००३
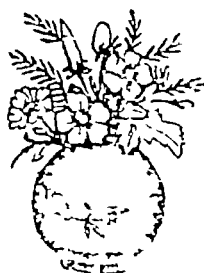
॥ आचार्य पूज्य श्रीरघुनाथ जी महाराज क महिमा ॥

दर्शन से प्रसन्न बनाय रहे पूज्य रघुनाथ जी हा पूज्य रघुनाथ जी ॥टेक॥
लकड़ी के बर्तन हैं पैसा न पास में, मु ह पर है पट्टी सफेदा लिबास में।
दर्शन से आनन्द दिलाय रहे, पूज्य रघुनाथ जी हा पूज्य रघुनाथ जी।
ओघा बगल मे झोली है हाथ मे, मीठा २ रस लगे इनकी हर बात में।
जिसको सुनाय रहे पूज्य रघुनाथ जी ॥ २ ॥
ब्रह्मचर्य का तेज है चेहरा बाग़ २ है, मेरे दिल में जो रखा अवेरा चिराग है। शक्ति से उसको जलाय रहे, पूज्य रघुनाथ जी ॥ ३ ॥
सताना किसी कों गजब है २, करने से रक्षा नतीजा अजब है ऐसा हमको बताय रहे, पूज्य रघुनाथ जी ॥ ४ अहिंसा से मुक्ति हो करुणा से शांति। गुरुओं की भक्ति से मिटती है भ्रान्ति, भक्ति से महोबत जुटाय रहे पू०।
मन्त्रों में मन्त्र बडा श्रेष्ठ नवकार है, करता जो जाप वाका वेडा ही पार है। बिन लागत का नुसखा बताय रहे, पूज्य रघुनाथ जी ॥ ६ ॥ दुनिया है बूटी पाप की पीने मे कहा चैन है, छोड़ दे जो हों सके गर होश इन्द्र सैन है। गफलत से हमको जगाय रहे, पूज्य रघुनाथ जी ॥ ६ ॥

दानी महोदयों की शुभ-नामावली

लाला श्यामसुन्दरलाल, नारायणदास वैश, जैन श्रीसघ झिन्झाना, लाला कालूराम कलानौर, सेठ चादमल भोंरेलाल हरसोरा, प० मुनि श्री शेरसिंह जी, जैनसघ सोनीपत। ज्ञानीराम मूलचन्द जैन राजा खेडी। बनारसीदास जैन उरलाना कला, लाला बनसीलाल दीपचन्द्र जैन पीपली खेडा, जैन श्रीसघ देहरा, कालूराम रतीराम गन्नोर मडी, हकीम बारुमल इन्द्रसैन जैन किरठल हाल शामली, बाबू अत्तरसैन जैन लिसाड, शम्भूलाल पुन्नामल चेतनलाल भैंसवाल, वैरागनबाई लक्ष्मीदेवी जैन दादरीवाली।